

चतुर्भुजदास कृत

मधुमालती वार्ता

तथा

उसका माधव शर्मा कृत संशोधित रूपांतर

ग्रंथमाला-संपादक-मंडल

कृष्णदेवप्रसाद गौड़, हरवलाल शर्मा, सुरेश अवस्थी,
करुणापति त्रिपाठी, सुधाकर पाडेय, भोलाशंकर व्यास,
शिवप्रसाद मिश्र 'रुद्र' (संयोजक)

संपादक

डॉ० माताप्रसाद गुप्त



नागरीप्रचारिणी सभा, काशी

प्रकाशक : नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

सुद्वर्क : शंभुनाथ वाजपेयी, राष्ट्रभाषा मुद्रण, वाराणसी

प्रथम बार, ११०० प्रतियाँ, सं० २०२१ वि०

आकर ग्रंथमाला का परिचय

नागरीप्रचारिणी सभा ने अपनी हीरक जयंती के अवसर पर जिन भिन्न-भिन्न साहित्यिक अनुष्ठानों का श्रीगणेश करना निश्चित किया था उनमें से एक कार्य हिंदी के आकर ग्रंथों के सुसंपादित संस्करणों की पुस्तकमाला प्रकाशित करना भी था। जयंतियों अथवा बड़े बड़े आयोजनों पर एकमात्र उत्सव आदि न कर स्थायी महत्व के ऐसे रचनात्मक कार्य करना सभा की परंपरा रही है जिनसे भाषा और साहित्य की ठोस सेवा हो। इसी दृष्टि से सभा ने हीरक जयंती के पूर्व एक योजना बनाकर विभिन्न राज्य सरकारों और केंद्रीय सरकार के पास भेजी थी। इस योजना में सभा की वर्तमान विभिन्न प्रवृत्तियों को संपुष्ट करने के अतिरिक्त कतिपय नवीन कार्यों की रूपरेखा देकर आर्थिक संरक्षण के लिये सरकारों से आग्रह किया गया था, जिनमें से केंद्रीय सरकार ने हिंदी शब्दसागर के संशोधन परिवर्धन तथा आकर ग्रंथों की एक माला के प्रकाशन में विशेष रुचि दिखलाई और ६-३-५४ को सभा की हीरक जयंती का उद्घाटन करते हुए राष्ट्रपति देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद जी ने घोषित किया—‘मैं आपके निश्चयों का, विशेषकर इन दो (शब्दसागर संशोधन तथा आकर ग्रंथमाला) का स्वागत करता हूँ। भारत सरकार की ओर से शब्दसागर का नया संस्करण तैयार करने के सहाय्यतार्थ एक लाख रुपए की सहायता, जो पाँच वर्षों में, बीस बीस हजार करके दिए जायेंगे, देने का निश्चय हुआ है। इसी तरह से मौलिक प्राचीन ग्रंथों के प्रकाशन के लिये पच्चीस हजार रुपए की, पाँच वर्षों में पाँच पाँच हजार करके, सहायता दी जायगी। मैं आशा करता हूँ कि इस सहायता से आपका काम कुछ सुगम हो जायगा और आप इस काम में अग्रसर होंगे।’

- केंद्रीय शिक्षामंत्रालय ने ११-५-५४ को एफ ४-३-५४ एच ४ संख्यक एतत्संबंधी राजाज्ञा निकाली। राजाज्ञा की शर्तों के अनुसार इस माला के लिये संपादक मंडल का संघटन तथा इसमें प्रकाश्य एक सौ उत्तमोत्तम ग्रंथों का निर्धारण कर लिया गया है। संपादक मंडल तथा ग्रंथसूची की संपुष्टि भी केंद्रीय शिक्षामंत्रालय ने कर दी है। ज्यों ज्यों ग्रंथ तैयार होते चलेगे, इस माला में प्रकाशित होते रहेगे। हिंदी के प्राचीन साहित्य को इस प्रकार उच्च-स्तर के विद्यार्थियों, शोधकर्ताओं तथा इतर अध्येताओं के लिये सुलभ करके केंद्रीय सरकार ने जो स्तुत्य कार्य किया है उसके लिये ~~बहुधा धन्यवाद है।~~

प्रकाशकीय वक्तव्य

अपनी स्थापना के समय से ही नागरी लिपि एवं हिंदी साहित्य के उन्नयन एवं विकास के विभिन्न विधायक संकल्पों के साथ ही नागरीप्रचारिणी सभा ने हिंदी के गुणनिर्माता मूर्धन्य साहित्यस्रष्टाओं की ग्रंथावलियों का प्रकाशन भी आरंभ किया। हिंदी के सुप्रसिद्ध गंभीर शीर्ष विद्वानों का सहयोग इस क्षेत्र में सभा को सतत मिलता रहा। फलतः, तुलसी ग्रंथावली, भूषण ग्रंथावली, भारतेन्दु ग्रंथावली, रत्नाकर (कवितावली), पृथ्वीराज रासो, बाँकीदास ग्रंथावली, ब्रजनिधि ग्रंथावली और श्रीनिवास ग्रंथावली आदि का प्रकाशन सभा ने किया।

अपनी हीरक जयंती के अवसर पर सभा ने इस दिशा में केन्द्रीय सरकार की सहायता से योजनाबद्ध रूप से नूतन प्रयत्न आकर ग्रंथमाला के रूप में आरंभ किया। इस ग्रंथमाला में अबतक भिखारीदास ग्रंथावली, मान राजविलास, गंग कवित्त, पद्माकर ग्रंथावली का प्रकाशन सभा कर चुकी है। इधर घनाभाव के कारण यह कार्य कुछ शिथिल था किंतु ग्रंथमाला का कार्य चलता रहा। जसवंतसिंह ग्रंथावली यंत्रस्थ है और शीघ्र ही प्रकाशित हो रही है।

दादूदयाल ग्रंथावली (सं०-पं० परशुराम चतुर्वेदी), बोधा ग्रंथावली (सं०-पं० विश्वनाथप्रसाद मिश्र), नागरीदास ग्रंथावली (सं०-डॉ० किशोरीलाल गुप्त) एवं ठाकुर ग्रंथावली (सं०-श्री चन्द्रशेखर मिश्र) को संवत् २०२१ तक प्रकाशित करने का हमारा संकल्प है। केन्द्रीय सरकार के शिक्षा विभाग की आर्थिक सहायता से यह संकल्प मूर्त हो रहा है। इसके लिये सभा सरकार के प्रति कृतज्ञ है और हमें विश्वास है कि शीघ्र ही इस दिशा में उसका स्वप्न पूर्णतः साकार होगा।

चतुर्भुजदास कृत मधुमालती वार्ता इस ग्रंथमाला का सप्तम पुष्प है। मधुमालती की प्रेमकथा को आधार बनाकर लिखे गए हिंदी में अनेक ग्रंथ हैं किंतु यह उन सबसे भिन्न लोककाव्यपरक है। अब तक उपलब्ध चार

भिन्न परंपराओं की प्रतियों से यह ग्रंथ श्रीसंवलित है। चतुर्भुजदास का केवल एक यही ग्रंथ प्राप्त है। इसलिये इसे उनकी ग्रंथावली के रूप में मान्यता प्रदान करना असंगति न होगी। श्री डॉ० माताप्रसाद गुप्त ने मनोयोग के साथ इसका संपादन कर इस ग्रंथ को पहली बार हिंदी जगत के संमुख उपस्थित किया है। उनका यह कृतित्व विशेष आदर का अधिकारी है। प्रूफशोधन का कार्य भी उन्होंने स्वतः कर सभा की सहायता की है। संभव है कुछ भूले रह गयी हो। उनका परिष्कार अगले संस्करण में कर लिया जाएगा। विश्वास है कि यह कृति हिंदी में समादृत होगी।

काशी, १० पौष, २०२१ वि० ।

}

सुधाकर पांडेय
प्रकाशन मंत्री

अनुक्रमणिका

१—आकर ग्रंथमाला का परिचय			
२—प्रकाशकीय वक्तव्य			
३—निवेदन—करुणापति त्रिपाठी	१
४—प्राक्कथन—माताप्रसाद गुप्त	६
५—भूमिका—संपादक	१५
६—मधुमालती वार्ता	१६
७—टिप्पणी (विशिष्ट शब्दों के अर्थ)	२४७
८—मधुमालती रसविलास	२६३
९—शुद्धिपत्र	३०६

निवेदन

‘मधुमालती वार्ता’ के हस्तलेख प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। प्रस्तुत ग्रंथ के संपादनकर्ता ने बताया (रचयिता और रचनाकाल—पृ० ४) है कि ‘राजस्थान का यह अत्यधिक लोकप्रिय काव्य रहा है’। उन्होंने यह भी कहा है कि ‘जितनी अधिक प्रतियाँ इस काव्य की राजस्थान और राजस्थान से बाहर जाकर अन्यत्र मिलती हैं, कदाचित् ही राजस्थान के किसी अन्य काव्य की उतनी मिलती होंगी’। परंतु इतने लोकप्रिय काव्य के लेखक का काल और कुछ सीमा तक उसकी कृति के मूलरूप का असंदिग्ध विवरण अनुपलब्ध है। ‘माधवानलकामकंदला’ नामक प्रसिद्ध प्रेमकथा के एक लेखक—**माधवशर्मा** के माध्यम से ‘मधुमालती कथा’ के मूलरूप की रचना करनेवाले **चतुर्भुजदास** के विषय में जो कुछ पता चलता है—उसका प्रस्तुत ग्रंथ के संपादक ने विवरण दिया है। **मधुमालती की वार्ता** का जो रूप, **माधवशर्मा** द्वारा मिलता है उसके विषय में **माधवशर्मा** कहते हैं—‘दोय जना मिलि सोय बनाई’। इन दोनों में एक हैं **चम्रभुजदास** (चतुर्भुजदास) कायस्थ। मारुदेश में उनका यह था। पहली कथा का अर्थात् कथा या वार्ता के प्रथम रूप का वर्णन करनेवाले हैं वे ही **चतुर्भुजदास**। बाद में **माधवशर्मा** ने उस रूप में चरित का कुछ सुधार करते हुए काव्य को संशोधित रूप में लिखा है।

प्रस्तुत ग्रंथ के संपादक डा० माताप्रसाद गुप्तजी ने अपने अनुमान के आधार पर **चतुर्भुजदास** की मूल रचना का कथाश और **माधवशर्मा** द्वारा किए गए संशोधन का कथाभाग बताने का प्रयास किया है। कुछ कल्पनाओं के आधार पर ही यह सब अनुमान किया गया है। फिर भी **माधवशर्मा** के हस्तलेख से एक बात प्रमाणित हो जाती है कि संवत् १६०० में लिखित ‘माधवानलकामकंदला’ के समय तक ‘मधुमालती वार्ता’ अथवा ‘मधुमालती कथा’ या ‘मधुमालती विलास’ वा ‘मधुमालती

रसविलास' की रचना हो चुकी थी। उसी में माधवशर्मा ने कुछ संशोधन किया और संमिलित कृतित्व का काव्य—उक्त उपलब्ध रूप में—'माधवानलकाम-कदला' के हस्तलेख के साथ संवत् १६०० में सामने आया। परंतु प्रस्तुत वार्ताग्रंथ की जो प्रतिलिपियाँ उपलब्ध हुई हैं और जिनके आधार पर 'मधुमालती वार्ता' का प्रस्तुत संस्करण संपादित हुआ है वे सभी प्रायः संवत् १८०८ से लेकर संवत् १८६१ तक की ही हैं। केवल एक प्रतिलिपि संपादक को ऐसी (हिंदी साहित्य संमेलन, प्रयाग के सग्रहालय में) मिली जिसका प्रतिलिपिकाल संवत् १७०७ है। पर अब—जैसा कि संपादक ने बताया है—उस हस्तलेख के दो अंतिम पृष्ठ नष्ट हो गए और उसका प्रमाण भी नष्ट हो गया है।

इन्हीं कारणों से संपादक के लिये प्रस्तुत ग्रंथ का रचनाकाल और अंशकार के समय का ठीक ठीक निर्धारण करना अत्यंत दुष्कर हो गया है। इतना ही अनुमान किया जा सकता है कि संवत् १६०० वि० के पूर्व श्री चतुर्भुजदास—इस ग्रंथ की रचना अवश्य कर चुके थे। इस प्रकार मूलरूप में यह काव्य सोलहवीं शती में निर्मित हो गया था। मध्यकालीन हिंदी के प्रेमकाव्यों में—रचनाकाल की प्राचीनता के विचार से—निश्चय ही इस काव्य का स्थान महत्वपूर्ण कहा जा सकता है।

इसका दूसरा भी एक महत्व है। यह ग्रंथ विशुद्ध भारतीय प्रेमकथाशैली में विरचित है। पुष्कर के हस्तरत्न पर भी सूफीशैली की प्रभावच्छाया प्रष्टुत्व गई है। डा० गुप्त ने प्राक्कथन के पृ० १० और ११ में बताया है कि इसकी कथाशैली और वर्णनशिल्प—दोनों में ही विशुद्ध भारतीय प्रेमकथा की तदाप्रचलित उस परंपरा का अनुसरण हुआ है जिसमें विशुद्ध भारतीय ढंग से भारतीय प्रेमकथार्थ लिखी जाती रही होगी। यह अनुमान किया जा सकता है कि हिंदी में भी इस परंपरा की अन्य प्रेमकथाएँ निश्चय ही लिखी गई रही होंगी। परंतु दुर्भाग्यवश आज वे दुर्लभ हो गई हैं। यह परंपरा जहाँ एक ओर 'छिताई वार्ता' वाली शैली से इतर है वहीं दूसरी ओर सूफी या सूफीप्रभावित अस्फी प्रेमकथाओं से भी पृथक् है। अतः इस ग्रंथ की अपनी विशेषता है ही।

संपादक ने इस ग्रंथ की प्रकाशनीयता की दृष्टि से एक ओर बात की और (प्राक्कथन में) ध्यान आकृष्ट किया है। हिंदी साहित्य में चतुर्भुजदास नाम के अनेक कवि प्रसिद्ध हैं और मधुमालती नाम के अनेक काव्य भी।

परंतु प्रस्तुत कृति और उसका निर्माता—दोनों ही पूर्णतः उनसे भिन्न हैं। इसकी कथा भी मंसून की मधुमालती या दक्खिनी हिंदी के कवि नुसरती के गुलशन-ए-इश्क की प्रेमगाथा से सर्वथा भिन्न है। इन कारणों से भी ग्रंथ की पूरी जानकारी के लिये ग्रंथ का प्रकाश में आना नितांत आवश्यक, प्रतीक्षित और अपेक्षित था।

अपेक्षित तो इसलिए भी था कि यह ग्रंथ हिंदी का होकर भी अब तक हिंदी में अप्रकाशित था जब कि अहमदाबाद तथा बंबई से, गुजराती लिपि में मुद्रित, इसके दो संस्करण क्रमशः १८७५ ई० तथा १८७८ ई० में प्रकाशित हो चुके थे।

अपने संपादन के आधारभूत हस्तलेखों को विभिन्न गुणधर्मों के आधार पर चार वर्गों में विभाजित कर संपादक ने प्रस्तुत संस्करण तैयार किया है। विभिन्न वर्गों की प्रतिनिधिभूत कुछ प्रतियों की ही सहायता—मुख्यरूप से संपादन में ली गई है। यहाँ संपादक का अपना मत है कि चतुर्भुजदास की मूल मधुमालती कथा का मूलरूप—संभवतः—प्रथमवर्ग की प्रतियों में ही उपलब्ध हो सकता है। इस कारण प्रकाश्यमान संस्करण के पाठ का निर्धारण करने में तथानिर्धारित प्रथम वर्ग की प्रतियों का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। क्योंकि उसी वर्ग की प्रतियों में सबसे कम प्रक्षिप्तांश अनुमानित है। अतः जिस दृष्टि और आधार को लेकर चतुर्भुजदास के मूल ग्रंथ का पाठनिर्धारण हुआ है,—वर्तमान परिस्थिति में—वह स्वीकार्य होना चाहिए।

साहित्यिक पक्ष की दृष्टि से विचार करने पर ग्रंथ का काव्यपक्ष उच्चस्तरीय नहीं कहा जा सकता। अभिव्यक्तिशिल्प और उदात्त, नव्यतुसंपन्न एवं उन्मेषवती कल्पना की भूमि का दर्शन—इसमें बहुत कम मिलता है। भाव-मूलक मर्मस्पर्शिता की दृष्टि से भी काव्य को उत्कृष्ट कृतियों की श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। परंतु हिंदी में भारतीय प्रेमाख्यानक के विकास की दृष्टि से इस काव्य के रचनाकाल की प्राचीनता अवश्य ही महत्व रखती है। 'आती' अथवा कथा (विलास, रसिकवार्ता) आदि साहित्य के ऐतिहासिक अध्ययन की दृष्टि से इस ग्रंथ की प्राचीनता निश्चय ही संबद्ध विषय के अध्येताओं को सहायक सिद्ध होगी।

यहाँ यह भी स्मरण रखने की बात है कि हिंदी के सूफी प्रेमाख्यानकों में जिन दोहा और चौपाई कुंदों की अत्यधिक प्रियता और ब्राह्मता दिखाई

देती है, उन्हीं छंदों का यहाँ भी मुख्यरूप से उपयोग हुआ है। यहाँ उनका नाम दूहा और चौपई है। कहीं कहीं सोरठा का भी प्रयोग किया गया है। कहीं कहीं सोरठा के लिये 'दूहा सोरठा' नाम भी दिया गया है। इनके अतिरिक्त 'गाथा', 'कुडलिया' आदि छंद भी इसमें मिल जाते हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि वे मूल लेखक के है या बाद में प्रक्षिप्त।

इनके अतिरिक्त बीच बीच में श्लोक (अलोक) भी मिलते हैं। इन श्लोकों की भाषा यद्यपि संस्कृत है तथापि संस्कृतव्याकरण की दृष्टि से उसे हम शुद्ध संस्कृत नहीं कह सकते हैं। कहीं कहीं श्लोक अवश्य ही प्रायः शुद्ध संस्कृत के जान पड़ते हैं। फिर भी इन श्लोकों की भाषा प्रायः मिश्रभाषा है, जैसे—

ना तृप्तिः अग्नि काष्ठानां नापगानां महोदधि ।

नातंकं सर्वभूतानां न [पुखां] वामलोचनं ॥

[पृ० ३० पद्य सं० २१२]

वस्तुतः ये श्लोक संस्कृतपद्यों के, संस्कृत सुभाषितों के वे रूप हैं जो असंस्कृतश्रुति या अल्पसंस्कृतश्रुति के मुख से अवसर अवसर पर लोक में उच्चरित हुआ करते थे। कवि भी शायद संस्कृतश्रुति नहीं था। इसी कारण अशुद्धरूप में उनका उद्धरण स्थान स्थान पर देता रहा है। यह भी हो सकता है परवर्ती काल के लेखों में दिखाई पड़नेवाली संस्कृत की ये अशुद्धियाँ प्रतिलिपिकार की संस्कृतविषयक अनभिज्ञता के कारण आ गई हों।

संस्कृत के इन श्लोकों का प्रायः अर्थानुवाद स्वीकृत काव्य-भाषा में किया गया है। वस्तुतः ऐसा लगता है उस युग की प्रेमकथाओं का जो रूप लोकप्रचलित था उनपर संस्कृतपरंपरा का काफी प्रभाव था। संस्कृत की लोकप्रिय नीतिकथा के ग्रंथों की अनुध्वनि इस 'मधुमालती वार्ता' में अतीव स्पष्ट सुनाई पड़ती है। इसमें संस्कृत की नीतिकथाएँ भी प्रासंगिक कथाओं के रूप से आई हैं और वहाँ के श्लोकों का पद्यानुवाद भी यत्रतत्र मिल जाता है। "अथ मृग सीधनी को प्रसंग" नामक अंतर्कथा (पृष्ठ १०) के अंतर्गत "अथ घृहङ्ग (उलूक) का प्रसंग" (पृष्ठ १२) आता है जो पंचतंत्र के 'काकोलूकीयतंत्र' की संक्षिप्त कथा है। इस कथाप्रसंग के पूर्व पृ० ११ में एक श्लोक है—

परस्परं विरोधानां शत्रुमित्रं गृहेगता ।

दग्धं काग उलूकानां प्रज्वलन्ती हुताशनम् ॥ ७८ ॥

उसकी पादटिप्पणी में अन्य प्रति के इस श्लोकरूप का एक पाठों-
तर यों है—

न विश्वासो पूर्वविरोधे शत्रुमित्रकदाचन ।

दुखदाई गडदालक काकस्य पलर्यं गता ॥

इसी पृ० ११ में पूर्वोक्त श्लोक के ऊपर की दो पंक्तियों में आशय
वर्णित है—

पूरब विरोध जासु सुं होई । ताकी बात न माने कोई ।

ऐसे जो रे पतीजै लोई । घूहड काग भई खो होई ॥ ७७ ॥

ये पक्तियाँ पंचतंत्र के तृतीय तंत्रारम्भ के निम्नलिखित श्लोक का अर्था-
नुवाद है—

न विश्वसेत्पूर्वविरोधितस्य शत्रोश्च मित्रत्वमुपागतस्य ।

दग्धां गुहां पश्य ऊलूकपूर्णा काकप्रणीतेन हुताशनेन ॥

यहाँ कहने का सार इतना ही है कि इन लोकप्रिय कथाओं और उनके
नीतिवचनों का जनवर्ग में काफी प्रचार था । ‘माधुमालती कथा’ के सदृश
प्रेमकथाओं के लेखक—चाहे वे साधु संस्कृत के ज्ञाता रहे हो चाहे अल्प
संस्कृतज्ञ—उन कथाओं और तत्संबद्ध जनप्रिय नीतिवचनों का घडल्ले के साथ
प्रयोग किया करते थे । संभवतः ‘चतुर्भुजदास’ ने उसी प्रचलित परंपरा का
अनुसरण किया है ।

इसका एक और पक्ष ध्यान में रखने योग्य है । चूँकि ये कथाएँ
वस्तुतः लोककथाओं के आधार और उनकी प्रचलित पद्धति पर लिखी जाती
रही हैं—इसी कारण इनकी भाषा में प्रवाह, सरलता, सहजता और गति-
शीलता दिखाई पड़ती है ।

साहित्यिक आमजनो द्वारा भाषा में अलंकरणपरक चमत्कार और
वक्रोक्तिमूलक संस्कार का उत्कर्ष न रहने पर भी ‘माधुमालती कथा’ की
भाषा में प्रवाह और सहजता का निखार दिखाई देता है । कवि के छंदों में
लोकोक्तियों और मुहावरों का निःसंकोचभाव से खूब प्रयोग देखा जा सकता
है, जैसे—

ज्यो जैसा को सँग करै त्यो तैसा फल खाय [पृ० ६ (६०)]

गुर ती ढरे तो विष क्यूँ दीजै [पृ० १४ (६६)]

फूकै तक्र दूध के दाँफे [पृ० १४ (१०३)]

गीधो मरै कै बीधो करै [१३ (१३१)]

होणो होए सो सिर परि होई [पृ० २२ (१५१)]

ज्युं गूंगे की गाह मन मै रहै [पृ० २४ (१६५)]

मगर मकोरा हरियर काठी ।

त्रिया की गति ह्यु हूँ ते काटी [पृ० २६ (१८६)]

आव बैल मोहे मार [पृ० २८ (१९३)]

बागुर चूसे रस कित पहचै [पृ० ३८ (२५४)]

सो तो तेरे हाथ न आयो [पृ० ४० (२७४)]

ऐसी लोकोक्तियों और मुहावरों से यह काव्यग्रंथ आद्यत भरा पड़ा है । यहाँ केवल उदाहरण के लिये कुछ नमूने उद्धृत किए गए हैं ।

• इस ग्रंथ की एक और विशेषता भी ध्यान में रखनी चाहिए । ‘मालती वाक्य’, ‘जैतमाल वाक्य’, ‘चकई वाक्य’ के पूर्वनिर्देश द्वारा कथित, पात्रों के संवाद से काव्यरचनाशिल्प की विशेष परंपरा का संकेत मिलता है । संभवतः इस काव्य में यह रीति लोककाव्य के शैलीगत प्रभाव से आई है । इसी प्रकार की बहुत सी वर्णनरूढ़ियाँ इसमें हैं ।

यद्यपि इस ग्रंथ की भाषा ब्रजी है तथापि परकालवर्ती ‘ब्रजभाषा’ का जैसा परिनिष्ठित और काव्यग्राह्य रूप विकसित हुआ उससे यह बहुत भिन्न है । इसमें ‘राजस्थानी’ और ‘पिंगल’ के रूपों की मिलावट बहुत काफी है । प्रयुक्त तद्भव शब्दों के अनेक ऐसे रूप दिखाई पड़ते हैं प्रसिद्ध ब्रजीसाहित्य में जिनका प्रयोग नहीं के बराबर कहा जा सकता है । हो सकता है, राजस्थानी में कुछ प्रयोग मिल जाते हों । ‘इंड’ (अडा), चूछिम (सूझम) आदि सैकड़ों इस प्रकार के प्रयोग यहाँ ढूँढ़ना कठिन नहीं है । बहुत से देशी या बोलचाल के रूप — जैसे ‘टिटोरी (टिटिहरी पक्षी), तीस (तृष्णा), पिरोहित (पुरोहित), अंतैवर (अंतःपुर), चिन (चीन=चीन्ह=पहचान) कुमरी (कुमारी) — यहाँ अत्यधिक संख्या में देखे जा सकते हैं । ढूँढ़ने पर बिलकुल नए या प्रायः अनुपलब्ध कुछ शब्दरूप भी यहाँ पाना कठिन नहीं है ।

कहने का यहाँ इतना ही उद्देश्य है कि इसकी ‘ब्रजभाषा’ संवत् १६०० से पूर्व की है (जैसा कि ग्रंथसंपादक ने बताया है — उससे पहले ब्रजभाषा में लिखित उपलब्ध ग्रंथों की संख्या बहुत अधिक नहीं है) और व्याकरण

तथा भाषाशास्त्र की दृष्टि से इस ग्रंथ की भाषा में अनेक अनुशीलनीय विशेषताएँ उपलब्ध होने की पर्याप्त संभावना भी है।

माधवशर्मा के संशोधित संस्करण से तत्कालीन कृष्णभक्ति के प्रभावशाली स्वरूप का और साथ ही साथ कृष्णभक्ति की दृष्टि से मथुरा, वृंदावन और वहाँ होनेवाले भजन कीर्तन, पूजा-अर्चना एवं कृष्णलीलाओं की मधुरभक्ति का भी प्रमाण मिल जाता है।

इन सब दृष्टियों से प्रस्तुत कृति का महत्व स्पष्ट हो उठता है। आशा है, प्रस्तुत ग्रंथ के संपादन से—हिंदी के मध्यकालीन साहित्य-अनुशीलकों को प्रेरणा और नए कोण से परिशीलन करने की दिशा प्राप्त होगी। ऐतिहासिक, सामाजिक, साहित्यिक, भाषापरक और भारतीय प्रेमकथाओं की परंपरामूलक दृष्टि से ग्रंथ का अध्ययन होने पर अनेक नई बातें सामने आएँगी।

संपादक ने जिस भ्रम, लगन और दीर्घकालीन अध्यवसाय के साथ ग्रंथ को संपादन किया है, उसके लिये हम उसका हार्दिक अभिनंदन करते हैं। ग्रंथ के आरंभ में 'प्राक्कथन' (पृष्ठों ६) तथा 'रचयिता और रचनाकाल' (१८ पृष्ठों)—द्वारा डा० गुप्त ने इस ग्रंथ की कुछ विशेषताओं का संकेत किया है, रचनाकार और कृति के काल का यथासंभव विचार भी किया है, संपादन की शैली एवं उसकी आधारभूत प्रतियों का वर्गीकृत परिचय दिया है, **चतुर्भुजदास** के मूल काव्यरूप और **माधवशर्मा** के संशोधित ग्रंथरूप तथा उनकी कथाओं का परिचय देते हुए—उनके संबंध में अपने विचार बताए हैं तथा मूलपाठ के निर्धारण में स्व-स्वीकृत दृष्टि का उल्लेख भी किया है। विभिन्न वर्ग की प्रतिश्रों के पाठांतर देकर मूल ग्रंथ का संपादन—बड़ी योग्यता के साथ किया गया है। काफी लंबे 'परिशिष्ट' में अस्वीकृत छंदों का विस्तृत उल्लेख भी है। लगभग १४ पृष्ठों में विशिष्ट शब्दों के अर्थ भी दिए गए हैं। अंत में सन् १७०७ वाले पूरे हस्तलेख को—जिसके आरंभ में ग्रंथ का नाम **मधुमालती रसविलास** है और अंत में जिसे **मधुमालती कथा** कहा गया है—पूर्णतः दे दिया गया है। इन सबसे अनुसंधानकर्ताओं के लिये ग्रंथ का संपादित रूप उपयोगी हो उठा है। आशा है, मध्यकालीन हिंदी साहित्य के अध्येताओं द्वारा इस ग्रंथ का गहराई के साथ अध्ययन होगा और इसके गुणदोषों की परीक्षा की जायगी।

(८)

अत मे पाठकों से मुद्रण और प्रूफ-सशोधन-सबधी रह गई त्रुटियों के लिये क्षमा याचना करता हूँ । स्वयं संपादक ने भी श्रम के साथ प्रूफ देखा तथा विभाग मे भी सामान्यतः देखा गया । फिर भी बहुत सी त्रुटियाँ रह गई हैं । इसके लिये हम क्षमार्थी हैं । आशा है, पाठक, हमे क्षमा करते हुए उन्हें सुधार लेंगे ।

रथयात्रा, २०२१ वि०

वाराणसी ।

करुणापति त्रिपाठी,
साहित्य मंत्री,

ना० प्र० सभा, काशी ।

प्राकथन

चतुर्भुजदास कृत 'मधुमालती' हिंदी की एक प्राचीन प्रेमकथा है—जो विशुद्ध भारतीय शैली में लिखी गई है। चतुर्भुजदास नाम के एक से अधिक साहित्यकार हुए हैं, जिनमें से एक तो अष्टछाप के प्रसिद्ध भक्त थे, और 'मधुमालती' नाम की भी एक से अधिक रचनाएँ मिलती हैं, इसलिए हमारे साहित्य के इतिहास लेखकों ने इस रचना के लेखक और इसकी कथा के संबंध में प्रायः भूलें की हैं। उदाहरण के लिये हिंदी साहित्य के सबसे पुराने इतिहास लेखक गार्गा द तासी ने सं० १८६६ तथा पुनः सं० १८२७-२८ (द्वितीय संस्करण) में प्रकाशित अपने इतिहास ग्रंथ 'इस्त्वार द ला लितरात्थूर एँदूई ए एँदूस्तानी' में लिखा है कि इसके लेखक चतुर्भुजदास मिश्र हैं^१ और इसके नायक नायिका वे ही हैं जो दखिनी के प्रसिद्ध कवि नुसरती के 'गुलशन-ए-इश्क' के हैं।^२ इसी प्रकार मिश्रबंधुओं ने अपने 'मिश्रबंधुविनोद' में इसे विठ्ठलनाथ जी के शिष्य चतुर्भुजदास गोरवा की रचना बताया है।^३

किंतु वास्तविकता यह है कि यह न चतुर्भुजदास मिश्र की रचना है और न चतुर्भुजदास गोरवा की। इसके एक संशोधन-कर्त्ता माधव शर्मा ने लिखा है कि इसका लेखक कायस्थ था :

कायथ नाम चत्रभुज जाको। मारु देस भयौ यह ताको।

और जैसा हम आगे देखेंगे, इन माधव शर्मा का रचना काल सं० १६०० के आसपास है, इससे यह स्पष्ट है कि इसका लेखक कायस्थ था और चतुर्भुजदास मिश्र तथा चतुर्भुजदास गोरवा से भिन्न था।

इसी प्रकार इस ग्रंथ की कथा भी नुसरती के 'गुलशन-ए-इश्क' तथा मंभन की 'मधुमालती' की कथाओं से सर्वथा भिन्न है।

१—द्वितीय संस्करण (सं० १८२७), जिल्द १, पृ० ३८८

२—वही, (सं० १८२८), जिल्द २, पृ० ४८५

३—विठ्ठलनाथ जी के शिष्य

‘गुलशन-ए-इश्क’ से कुछ अंश अपने प्रसिद्ध ‘शहपारा’ में देते हुए श्री कादरी ने उक्त अंश की भूमिका में जो कथा दी है,^१ वह इस प्रकार है —

शाहजादा मनोहर शाहजादी चंपावती को दुरमनों की क्रौढ़ से छुड़ाकर उसके माँ-बाप से मिलता है, जिससे चंपावती उससे प्रेम करने लगती है। चंपावती की माँ को मालूम होता है कि मनोहर उसके अधीन एक राजा की लड़की मधुमालती को चाहता है, इसलिये वह मधुमालती और मनोहर का मिलन कराकर मनोहर के उपकार का बदला चुकाने की सोचती है। वह इसी उद्देश्य से मधुमालती की माँ को न्योतती है और उसकी खूब खातिर करती है। जब चंपावती मधुमालती की माँ से बातें करती रहती है, उसी समय चंपावती की माँ मधुमालती को अपना बाग़ दिखाने के बहाने बाहर ले जाती है। दोनों में बातें होने लगती हैं। मधुमालती चंपावती की माँ से चंपावती के वापस मिलने का ब्यौरा पूछती है तो चंपावती की माँ कहती है कि उस (मधुमालती) के प्रेमी मनोहर ने ही चंपावती की जान बचाई। मधुमालती इस उत्तर में जब लजित होती है तो चंपावती की माँ उसे विश्वास दिलाती है कि वह उसका भला चाहती है और उसके प्रेम की बात प्रकट न होने देगी। इसके बाद वह उसे मनोहर की झँगूठी भी दिखाती है, जिसे देखते ही मधुमालती की विरहवेदना तीव्र हो उठती है और वह उस वेदना को जी खोल कर व्यक्त करने लगती है। [भूमिका यहीं पर समाप्त होती है और इसके अनंतर मधुमालती के विरह निवेदन का अंश ‘शहपारा’ में उद्धृत किया गया है।]

मंझन की ‘मधुमालती’ की कथा पाठको को ज्ञात है,^२ अतः उसे यहाँ देने की आवश्यकता नहीं है। ‘गुलशने इश्क’ की यह कथा उसी का अनुसरण करती है। चंतुर्भुजदास की ‘मधुमालती’ की मुख्य कथा आगे अत्यंत संक्षेप में दी गई है। नुसरती और मंझन की कथाओं से इस कथा की तुलना करने पर ज्ञात होगा कि उन दोनों के साथ इसका कोई संबंध नहीं है और वह, एक सर्वथा भिन्न कथा है। पुनः, इसके साथ दर्जनों साक्षी-कथाएँ भी स्थान-स्थान पर विभिन्न कथनों को उदाहृत करने के लिये दी हुई हैं, किंतु इन

१—पृ० २१८-२१९

२—देखिए प्रस्तुत लेखक द्वारा संपादित मंझन कृत ‘मधुमालती’—

प्रकाशक : मित्र प्रकाशन (प्राइवेट) लि०, हज़ाराबाद ।

सांक्षी-कथाओं में से भी कोई उक्त दोनों के ज्ञात अंशों में नहीं पाई जाती है ।
अतः यह प्रकट है कि प्रस्तुत कथा उक्त दोनों से एक नितात स्वतंत्र कृति है ।

गुजराती लिपि में इस कृति के दो संस्करण सन् १८७५ तथा १८७८ ई० में क्रमशः अहमदाबाद तथा बंबई से प्रकाशित हुए थे किंतु तब से फिर कोई संस्करण निकला हुआ ज्ञात नहीं है । रचना हिंदी की है और व्रजभाषा में प्रस्तुत की गई है, किंतु हिंदी में इसका कोई संस्करण अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है ।

किसी समय यह हिंदी की एक सर्वाधिक लोकप्रिय रचना रही है, क्योंकि इसकी जितनी अधिक प्रतियाँ प्राप्त हुई हैं, तुलसीदास के 'रामचरित मानस' तथा बिहारी लाल की 'सतसई' के अतिरिक्त कदाचित् ही किसी रचना की होगी । वे बहुधा सुंदर चित्रों से मंडित भी की गई हैं, इसलिए यह इस देश के ही नहीं विदेशों के संग्रहालयों में भी पहुँच गई है । इस प्रकार की एक चित्रित प्रति बोस्टन के म्यूजियम में है, जिसके फोटो स्टेट का उपयोग प्रस्तुत संपादन में किया गया है ।

रचना में उसकी तिथि कही नहीं दी हुई है । अनुमान से यह काफी बाद की रचना समझी जाती रही है क्योंकि इसकी पहले प्रतियाँ विक्रमीय अठारहवीं शती के अंतिम चरण के पूर्व की नहीं थी, किंतु छः सात वर्ष हुए, प्रस्तुत लेखक ने माधव शर्मा का किया हुआ इसका एक संशोधित रूपांतर ढूँढ़ निकाला, जिसकी रचना सं० १६०० के आस-पास हुई थी, और जिसकी एक मात्र प्रति उसे सं० १७०७ की प्राप्त हुई । यह प्रति प्रयाग के सम्मेलन संग्रहालय में है । उसमें माधव शर्मा ने कहा है कि यह रचना अकिले चतुर्भुज दास की कृति के रूप में विख्यात रही है, किंतु चतुर्भुजदास के बाद इसमें उन्होंने भी अपना कृतित्व सम्मिलित कर दिया है, जिससे रचना दोनों कवियों की सम्मिलित कृति मानी जानी चाहिए । यह सौभाग्य की बात है कि चतुर्भुज दास के पाठ की प्रतियाँ उपलब्ध हैं, इसलिए माधव शर्मा का कृतित्व निर्धारित हो जाता है । जैसा हम आगे देखेंगे, वह रेशम के वस्त्र में लगे हुए टाट के जोड़ से अधिक कुछ नहीं है, किंतु माधव शर्मा के इस संशोधित रूपांतर ने इतना प्रमाणित कर दिया कि चतुर्भुज दास की

१—कल्लू भाई करमचंद का प्रेस, अहमदाबाद, १८७५ ई० तथा

सखाराम मालिक सेठ, वारकोट मारकेट, बम्बई, १८७८ ई० ।

रचना कम से कम सोलहवीं शती विक्रमी के मध्य की कृति तो रही ही होगी । ब्रजभाषा की इससे पूर्व की कृतियों उँगलियों पर ही गिनी जा सकती हैं, इसलिए इस रचना का महत्त्व प्रकट है ।

इस प्रसंग में एक अन्य बात भी ध्यान देने योग्य है, वह यह है कि यह रचना मारु देश के एक कवि की है, जिससे प्रमाणित होता है कि विक्रमीय सोलहवीं शती में राजस्थान के पश्चिमी भाग में भी ब्रजभाषा को एक साहित्यिक माध्यम के रूप में मान्यता प्राप्त थी । स्वभावतः रचना में राजस्थानी के तत्त्व मिल जाते हैं, जिनमें से अधिकतर इस कारण भी आए हुए हो सकते हैं कि रचना की प्रतिलिपियाँ राजस्थान की ही मिली हैं, किंतु ब्रजभाषा का व्यापक रूप रचना भर में सुरक्षित है ।

प्रबंध विधान की दृष्टि से भी यह रचना उल्लेखनीय है : इसमें कथा को प्रस्तुत करने का ढंग शुद्ध रूप से भारतीय है और वह वैसा ही है जैसा प्रायः भारतीय कथा रचनाओं में मिलता है : कथा चल रही है, इसमें वक्ता ने कहीं किसी अन्य कथा का उदाहरण के रूप में उल्लेख कर दिया, श्रोता ने पूछा कि वह कथा क्या थी और तब वह उदाहरण वाली 'साक्षी कथा' सुना दी गई । यह कथा शैली बाद में हिंदी में लुप्त हो गई, और कदाचित् इस शैली की हिंदी में सबसे अधिक संपन्न रचना यही है । इस कथा शैली का एक उपयोगी परिणाम यह है कि रचना में उस समय की कुछ अन्य कथाएँ भी मिल जाती हैं, जो अब विस्मृत-सी हो गई हैं । पद्मेपकारो ने तो रचना को इस दृष्टि से अधिक से अधिक संपन्न बनाने में कोई कसर नहीं उठा रखी है और उन्होंने यहाँ तक किया है कि अपने पूर्ववर्ती कवियों की कुछ पूरी की पूरी रचनाओं को उनकी भूमिकादि का अंश निकाल कर लगभग ज्यों का त्यों इसमें साक्षी कथाओं के रूप में जोड़ दिया है । इस प्रकार का एक उत्तम उदाहरण साधन कृत 'मैनासत' है जो च० १ प्रति में निर्धारित पाठ के छद्म ४२७ के बाद दे दिया गया है और परिशिष्ट में [४२७ अ] के रूप में देखा जा सकता है । यद्यपि यह सही है कि पद्मेपकारो ने 'मैनासत' के किसी प्रामाणिक रूप को प्राप्त करने का यत्न नहीं किया और उसे जो भी रूप राजस्थान में सुगमता से मिल सका, उसे ही उसने थोड़े से परिवर्तन-संशोधन के इसमें दे डाला, किंतु रचना का एक ऐसा रूप हमें इस प्रकार उपलब्ध हो गया जिसकी कोई स्वतंत्र प्रति अब प्राप्य नहीं है । पद्मेपकारो ने इसी प्रकार और भी कथाएँ इसमें यथास्थान रख दी हैं और उनका अर्थ-

यन करना और उक्त कथाओं के पाठ-निर्धारण में उनकी सहायता लेना उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

इसी प्रकार रचना एक और दृष्टि से भी उल्लेखनीय है : रचयिता ने रचना के अंत में इसे 'काम-प्रबंध-प्रकाश' कहा है। यह उस प्रकार की विशुद्ध प्रेमकथा नहीं है जैसी 'छिताई वार्ता' तथा अन्य हिंदी की अनेक सूफ़ी और असूफ़ी प्रेमकथाएँ हैं। इस परंपरा में अवश्य ही और भी रचनाएँ हिंदी में प्रस्तुत की गई होंगी, किंतु अब वे कदाचित् अप्राप्य हो गई हैं। जिस युग में यह कथा रची गई, 'काम' कोई घृणित वस्तु नहीं थी। प्रेम का वह एक अनिवार्य अंग माना जाता था, इसी कारण हिंदी की अधिकतर सूफ़ी और असूफ़ी प्रेम कथाओं में संभोग-शृंगार के चित्र काफी पूर्ण और उभड़े हुए हैं, और भक्ति साहित्य भी उससे उल्लेखनीय मात्रा में प्रभावित हुआ है। ऐसा ज्ञात होता है कि काम स्वस्थ जीवन का एक उपयोगी अंग माना जाता था, और उसकी चर्चा ज्ञान वैराग्य के क्षेत्रों को छोड़कर गहिँत तो किसी भी अंश में नहीं मानी जाती थी। इस रचना में तो कवि ने नायक को प्रद्युम्न और काम का अवतार बता कर देवाश तक कहा है।

हिंदी के भक्तियुग ने ऐसी कथाओं को किस प्रकार बदला होगा, यह हिंदी साहित्य के इतिहास की एक शोधोपयोगी समस्या है। माधव शर्मा ने इसमें जो संशोधन रचना के उत्तरार्ध को बदलकर किया है, उससे प्रकट है कि उसकी प्रेरणा उन्हें तत्कालीन कृष्ण भक्ति आन्दोलन से प्राप्त हुई होगी। चतुर्भुज दास की रचना में गंधर्व विवाह कर लेने के अनंतर नायक और नायिका से जब यह कहा जाता है कि राजा उनका वध कराना चाहता है, और उन्हें देश छोड़कर भाग जाना चाहिए, वे अपनी स्वल्प शक्ति के साथ ही राजकीय कोप का सामना करने का निश्चय करते हैं, और उनके इस साहसपूर्ण कार्य में उन्हें दैवी सहायता भी प्राप्त होती है। न केवल उन्हें शिव-दुर्गा की सुरक्षा मिल जाती है, श्री हरि भी भारंड को मेजकर उनकी सहायता करते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप वे राजकोप को व्यर्थ करने में पूर्ण रूप से कृतकार्य होते हैं। माधव शर्मा के संशोधन के अनुसार इस सूचना को पाकर वे भाग निकलने को प्रस्तुत होते हैं और नायक भाग निकलने में सफल भी होता है, भले ही उसे नायिका को वहीं छोड़ देना पड़ता है। इसके बाद वह मधुपुरी (मथुरा) जाकर केशव देव जी की जुहार करता है और वृन्दावन में कृष्ण लीला के स्थानों में विचरण करता रहता है। इससे श्रीहरि उस पर कृपालु हो जाते हैं और उसे अपने देश को लौट जाने

के लिए प्रेरित करते हैं, जहाँ वह अनायास ही राजा के मारे जाने के बाद सिंहासन के रिक्त होने पर एक नियुक्त घड़ी पर नगर में प्रवेश करने के कारण राजा बना दिया जाता है, और अपनी परित्यक्त प्रेयसी से मिल जाता है।

किंतु भक्ति आंदोलन इस प्रकार की रचनाओं का प्रचलन समस्त नहीं कर सका, यह साहित्य के इतिहास की एक अन्य उल्लेखनीय घटना है : भक्ति आंदोलन के सबसे अधिक विकास के काल में ही इस रचना की और आनंद कवि की कोक-मंजरी की इतनी अधिक प्रतिलिपियाँ हुईं जितनी उस युग में कम ही रचनाओं की हुई होगी। भक्ति युग में भले ही इस परंपरा की नवीन रचनाओं के लिये अनुकूल वातावरण न रहा हो किंतु इस प्रकार की रचनाओं के प्रचार में कोई कमी न आई, और असंभव नहीं कि सामंतों की विलास प्रियता के प्रभाव से भक्ति धारा शृंगार और रीति धारा में उतनी परिणत न हुई हो जितनी काम और शृंगार की इस धारा के कारण जो कि भक्ति युग में भी ग्रीष्म से क्षीण हुई सरिता के रूप प्रवाहित होती रही थी।

फलतः अनेक दृष्टियों से रचना विशिष्ट महत्व की हैं और आशा की जानी चाहिए कि इस विस्मृत प्रायः रचना का हिंदी में अध्ययन होगा। इसका संपादन एक बहुत उलभन की वस्तु थी। बारह वर्ष पहले यह कार्य मैंने प्रारंभ किया था, किंतु यह विलंब अधिकतर उस उलभन को सुलभाने में समर्थ प्रतियों के तत्काल प्राप्त न होने के कारण हुआ।

इस कार्य में प्रतियाँ देकर जिन महानुभावों ने भी मेरी सहायता की है, उनका मैं हृदय से कृतज्ञ हूँ। देखने के लिये प्रतियाँ मुझे अनेक सज्जनों ने दीं, और इतनी बहुतायत से वे प्राप्त हुईं कि उन सब का उपयोग संभव न था और न आवश्यक प्रमाणित हुआ। जिन संस्थाओं और सज्जनों से प्राप्त प्रतियों का मैं इस संस्करण में उपयोग कर सका हूँ, वे हैं—डॉ० कस्तूरचंद कासलीवाल, जयपुर, भांडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना, डॉ० रामचंद्र राय तथा मुनि कातिसागर उदयपुर, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी, और श्री अग्ररचंद नाहटा, बीकानेर। उनका मैं विशेष रूप से आभारी हूँ। नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी को भी मैं धन्यवाद देता हूँ कि उसने हिंदी की इस अनेक दृष्टियों से अत्यंत मूल्यवान किंतु अप्रकाशित अस्कर रचना को प्रकाशित करने का प्रबंध किया।

अस्करा,
२३-६-६२ }

माताप्रसाद गुप्त

भूमिका

रचयिता और रचना काल

चतुर्भुज दास की रचना के निर्धारित पाठ में केवल निम्नलिखित उल्लेख उसके रचयिता के विषय का आता है—

काम पबध पकास फुनि मधुमालती विलास ।

प्रदुमन की लीला इह कहत चत्रभुजदास ॥६४७॥

यह चत्रभुज (चतुर्भुज) दास कौन थे, यह उक्त उल्लेख से नहीं ज्ञात होता है। रचना की एक प्रति को छोड़ कर शेष में निम्नलिखित दोहा भी मिला है, जो रचयिता के जाति-कुल का उल्लेख करता है—

कायथ नैगम कुल अहै नाथा सुत भए राम ।

तनय चतुर्भुज दास के कथा प्रकासी ताम ॥ (६४६ अ)

लेखक के कायस्थ होने का समर्थन एक माधव शर्मा ने भी किया है। साथ ही उन्होंने यह भी लिखा है कि वह मारू देश का निवासी था। इन माधव ने शर्मा रचना के कृतित्व का जो उल्लेख किया है, वह दर्शनीय है वे कहते हैं—

मधुमालती बात यह गाई । दोय जना मिलि सोय वणाई ।

येक साथ ब्राह्मन सोई । दूजौ कायथ कुल मै होई ।

येक नाव माधव बड होई । मनौहर पुरि जानत सब कोई ।

कायथ नाम चत्रभुज जाकौ । मारू देसि भयौ ग्रह ताकौ ।

पहली कायथ ही ज बषानी । पाछै माधव उचरी बानी ।

कछुक यामै चरित मुरारी । श्री ब्रिदाबन कौ सुखकारी ।

माधौ तातैं गाहियौ यौ रस पूरन सोय ।

कौन काम रस स्यौ हुतौ जानत हैं सब कोय ॥

काईथ गाई जानि कै रसकनि रस की बात ।

नाम चतुर्भुज ही भयौ मारू माहि बिष्यात ॥

कथा को परिवर्तित करके उसमें पूरक कृतित्व का यश अर्जित करनेवाले लेखक अनेक हुए हैं,^१ किंतु रचना का कोई प्रमुख अंश सर्वथा परिवर्तित कर और उसके स्थान पर अपने द्वारा रचित अश को रखकर माधव की भौति-संमिलित कृतित्व का दावा करनेवाला लेखक दूसरा नहीं दिखाई पड़ता है, सो भी रेशम के वस्त्र में टाट का टुकड़ा जोड़कर उसको नया रूप देने-वाला, जैसा हमें उसके कृतित्व को देखकर ज्ञात होता है।

इस रचना में रचना तिथि नहीं दी हुई है, न माधव शर्मा ने ही अपने सशोधित रूप में कोई तिथि दी है। किंतु माधव शर्मा की एक अन्य रचना 'माधवानल कामकंदला' में जो उसी प्रति में प्राप्त हुई है जिसमें 'मधुमालती' का उनके द्वारा सशोधित रूप मिला है, उसकी रचना तिथि इस प्रकार मिलती है—

सवत सोळा मै वरसि जेमलमेर मंझारि ।

फागन मासि सुहावनै करी दात बिसतारि ॥

यदि माधव शर्मा का संशोधन इस कृति के आसपास का हो, तो चतुर्भुज दास की रचना अवश्य ही विक्रमीय सोलहवीं शती के मध्य की होगी। किसी अन्य साक्ष्य से कृति की रचना तिथि पर इससे अधिक निश्चयात्मक प्रकाश नहीं पड़ता है। इतनी पुरानी रचनाएँ हिंदी में कम ही मिली हैं, इसलिए रचना का महत्व प्रकट है।

प्रतियाँ

चतुर्भुजदास की रचना की प्रतियाँ बहुत बहुतायत से मिलती हैं। राजस्थान का यह अत्यधिक लोकप्रिय काव्य रहा है। वस्तुतः जितनी अधिक प्रतियाँ इस काव्य की राजस्थान और राजस्थान से बाहर जाकर अन्यत्र मिलती हैं, कदाचित् ही राजस्थान के किसी अन्य काव्य की मिलती होगी। इन सबकी एक सूची देना भी कठिन कार्य होगा। किंतु ये सब प्रतियाँ कुछ निश्चित आकार प्रकार की मिलती हैं, जिससे उन्हें मुख्यतः चार वर्गों में रक्खा जा सकता है।

^१ देखिए : प्रस्तुत लेखक लिखित प्राचीन हिंदी साहित्य में 'पूरक कृतित्व' हिंदुस्तानी, जनवरी मार्च, १९५९, पृ० १-१३।

सबसे छोटे आकार प्रकार का पाठ सबसे कम प्रक्षेपयुक्त भी है। इससे इस पाठ की जितनी प्रतियाँ प्राप्त हो सकी, उन सभी का उपयोग प्रस्तुत संपादन में किया किया गया है। शेष वर्गों की केवल एक एक प्रति का उपयोग पर्याप्त समझा गया है।

प्र० १ : यह प्रति टोलियो के मंदिर, जयपुर की है और वहाँ के डॉ० कस्तूर चंद कासलीवाल के द्वारा प्राप्त हुई थी। यह ८७५ छंदों पर समाप्त हुई है। इसकी पुष्पिका निम्नलिखित है—

इति श्री मधुमावती कथा संपूर्ण समाप्त । मीती फागुन बूढ़ी ७ मंगल-
वार सवत १८२५ का दसकत नो नदण सेठी का बाय जीन जूहार बच्चा षोड
होइ तो सूच करि लीजो ।

इसका प्रतिलिपिकार यथेष्ट रूप से योग्य नहीं था, इसलिये प्रति में मात्रादि के प्रयोग में त्रुटियाँ बहुतायत से मिलती हैं।

प्र० २ : यह प्रति भांडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना की है। यह ठीक ठीक उसी पाठ की है जिसकी प्र० १ है, अंतर यह अवश्य है कि जिन स्थलों पर प्र० १ में कोई अंश संदिग्ध होने के कारण रिक्त स्थान के साथ छोड़ दिया गया है, वह भी इसमें आ गया है। प्रतिलिपिकार इस प्रति का भी लगभग उसी योग्यता का है जिसका प्र० १ का है। प्र० १ से इसका इतना अधिक सादृश्य होने के साथ साथ इस कारण कि प्र० १ में संदिग्ध अंशों को उतारा नहीं गया है, यह प्रकट है कि प्र० १ का पाठ अपने प्रथम आदर्श के अपेक्षाकृत अधिक निकट है, इसलिये संपादन में इसका वही पाठांतर दिया है जो प्र० १ से किसी उल्लेखनीय प्रकार से भिन्न है। इसकी पुष्पिका में इसके प्रतिलिपिकार का नाम विमासागर तथा इसका लेखनकाल सं० १८०८ दिया हुआ है।

प्र० ३ : यह प्रति १९६१-६२ में उदयपुर के महाराजा भूपाल कालेज के हिंदी विभाग के प्राध्यापक डॉ० रामचंद्र राय के द्वारा वही के एक सज्जन से प्राप्त हुई थी। यह किन्हीं गुणसागर की लिखी हुई है। यह प्रथम वर्ग की—और इस प्रकार चतुर्भुजदास की—समस्त प्राप्त प्रतियों में सबसे छोटी है और केवल ७७६ छंदों पर समाप्त हुई है। इसकी पुष्पिका में लेखन काल नहीं दिया हुआ है, किंतु उसी गुटके में जिसमें यह प्रति है गुणसागर की प्रतिलिपि दी हुई 'हंसराज वच्छराज चउपई' की एक प्रति है, जिसपर सं० १८६१,

मिती भादवा वद ११ की तिथि दी हुई है। इसलिये इस प्रति की तिथि भी सं० १८६१ के लगभग मानी जा सकती है।

प्र० ४ : यह प्रति प्रसिद्ध जैन विद्वान् मुनि कातिसागर जी से प्राप्त हुई थी। इसमें रचना ८५१ छंदो पर समाप्त हुई है। इसकी पुष्पिका निम्नलिखित है—

इति श्री मधुमालती री रसिकवार्ता दूत चौपाई श्लोक काव्य पस्ताविक सहित संपूर्ण । सं० १८६४ वर्षे मिति अषाढ वदि १ दिने सोमवासरे की बीकानेर मध्ये लिषतां पं० प्र[वर] श्री १०८ श्री गुराजी श्री वीरमाण जी तस्य शिष्य प० प्र[वर] श्री माहामल्ल जी तस्य शिष्य पं० प्र[वर] दौलतराम शिष्य पं० अकरचंद तस्य शिष्य चि० कर्मचंद पठनार्थे इदं वार्ता लिपि कृता साच पर्वता युर्भवतिरस्तुः ।

यादसं पुस्तके दृष्टवा तादसं लिषत मया ।
यदि सुद्धमसुद्धं वा मोहोसो न दीयते ॥
दूहा मधुमालती वारता लिषी चूप दित लाय ।
वाचणवाला चतुर नर शुद्ध बाचै ज्यौ कबिराय ॥ १ ॥
दौलतराम मुनिवर लिखी बीकानेर मम्हार ।
संवत् अठारे चौसठै आसाढ मास उदार ॥
तिथि नवमी सोमवार वलि सुभ बेला सुषकार ।
वाचणहारे चतुरनर लीजो सुकवि सुधार ॥

लेखक पाठकयो चेमं भूयात् । श्री रस्तुः कल्याणस्तु ।

प्रथम वर्ग की अन्य तीन प्रतियो का पाठांतर सपादित पाठ के साथ देने के कारण इस प्रति के पाठांतर देने की आवश्यकता नहीं प्रतीत हुई, इसलिये वे नहीं दिये गये हैं।

द्वि० १ : यह प्रति एक प्राचीन प्रति की फोटोस्टाट प्रति है जो नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी के आर्यभाषा पुस्तकालय में है और वही से प्राप्त हुई थी। इसमें रचना ६८५ छंदो पर समाप्त हुई है। इसकी पुष्पिका निम्नलिखित है—

मधुर मास पद चतुर्थमे शुक्र सप्तमी जान ।

लिख्यो ग्रंथ भगवान् मुनि वासर अदित जान ॥

इति श्री मधुमालती संपूर्ण । शुभमस्तु ।

यह अनेक चित्रों से विभूषित है। इसकी मूल प्रति संभवतः बोस्टन के म्यूजियम में है, जिसके कुछ चित्र समय 'रूपम्' में प्रकाशित हुए थे।^१

तृ० १ : यह प्रति मुझे श्री अगरचंद नाहटा, बीकानेरनिवासी से प्राप्त हुई थी। इसमें कुल लगभग १७०० छंद हैं और इसकी पुष्पिका है—

लषतं पंडित मोधजी पुत्र नीमसद लषीते ।

च० १ : यद प्रति भी उपर्युक्त मुनि कातिसागर से प्राप्त हुई थी। इसका अंतिम अश फटा हुआ है। इसमें रचना २१०४ छंदों में समाप्त हुई है। अंतिम पत्र के क्षतविक्षत होने के कारण पुष्पिका इस प्रकार पड़ी जाती है—

मारवाड भज देस मैं नगर तितगी वास ।

नागोर नवला सहर मैं मोटा मंदिर विलास ॥२१०५॥

“ तुरग है कहां लौ करूं बखान ।

मोती की गिनती नहीं सो लाल पधारत धान ॥२१०६॥

“की कथा संपूरण भवतु । मगलमस्तु । पोथी जैसी देखि वेसी लीखी मम ‘मगनि राम श्री गगाराम जी कीहे वास । मारवाड मध्ये गांव तीतरी राकरं मंधरे बारश्री सुबेदार महाराज मलार राव जी का कोठरी हल करन । लीषी ब्राह्मण गौड सीतला माता का पुजारी मोतीराम ने सं० १८७६ मगलवारें पूरी हुई छ ॥ बाचे सुने उनो धूं ग्रामीर्वाद तथा न्य को वाचे”

इस प्रति में भी जहाँ तहाँ चित्र दिए हुए हैं। इसका पाठ प्राप्त प्रतियों में सब से अधिक पन्नेपूरण है, इस लिए संपादन में इसका पाठांतर नहीं दिया गया है, केवल इसके अस्वीकृत छंदों को परिशिष्ट में दिया गया है।

माधव शर्मा की कृति की एक ही प्रति प्राप्त हुई है, यह प्रयागके सम्मेलन, संग्रहालय में है। पॉच छः वर्ष पूर्व जब मैंने इसका पाठ उतारा था, इसकी कुल छंद संख्या ५६० थी और इसकी पुष्पिका निम्नलिखित था—

इति श्री मधुमालती कथा सपुरण समाप्त । सबत १७०७ चैत सुदि ११ लिषतं जैराम बांचै सुनै बैबे हमारो श्रीराम राम बारंबारं”

किंतु खेद की बात है कि अब प्रति के अंतिम दो पन्ने नहीं हैं।

रचना की कथा

चतुर्भुजदास की रचना की कथा इस प्रकार है : लीलावती देश में चंद्रसेन नाम का एक राजा था। तारनसाह उसका बुद्धिमान मंत्री था। राजा की चार रानियाँ थीं किंतु सतान एक ही थी और वह कुमारी मालती थी। तारनसाह का एक पुत्र था, जिसे वह 'मधु' 'मधु' कहा करता था। बड़े होने पर 'मधु' राजकीय सरोवर—रामसरोवर पर जाने लगा, और मालती भी वहाँ आने लगी। मालती मधु को देखकर उसे चाहने लगी। मधु बहुत रूपवान था, और रामसरोवर पर पानी भरने के लिये आनेवाली स्त्रियाँ भी उस पर मुग्ध होने लगी।

अब तारनसाह ने अपने पुरोहित नंद को बुलाकर 'मधु' को पढ़ने पर बिठा दिया। राजा ने भी मालती को पढ़ाने की सोची और मंत्री से सम्मति ली। उसने नंद के यहाँ उसे भी भेज कर पढ़वाने की सम्मति दी। प्रबंध यह किया गया कि परदा बाँधकर मालती उसके पीछे बैठे और जब नंद 'मधु' को पढ़ाए, परदे की आड़ से उसे भी पढ़ाए।

एक दिन गुरु जी अरण्य को गए हुए थे। मालती को अवसर मिला और उसने परदा हटाकर मधु को देखा। वह उस पर मुग्ध हो गई और उसने अपना स्नेह उस पर प्रकट किया। मधु ने संबंध के वैषम्य को बताते हुए मृग और सिंहनी के प्रेम की कथा सुनाई, जिसमें सिंहनी पर अनुरक्त मृग को सिंह के प्रहार से अपने प्राण गँवाने पड़े थे। इसी प्रसंग में सिंहनी के पूछने पर मृग ने धूहड़-काग के विरोध की एक कथा सुनाई, जिसमें विरोध के कारण कागो ने धोखा देकर धूहड़ो को भस्मसात् कर दिया था। इसमें यह बताया गया है कि जिससे कभी का भी विरोध रहा हो, उसकी बातों में आने पर इसी प्रकार का दुःख उठाना पड़ता है। मालती ने उस कथा में संशोधन करते हुए बताया कि सिंहनी का प्रेम सच्चा था और जब सिंह ने उस मृग पर प्रहार करना चाहा था, वह उछल कर उसकी सींगों पर जा पड़ी थी और अपने प्राण देकर उसमें अपने अनुराग को प्रमाणित किया था, मृग को अपने प्राण इसके बाद गँवाने पड़े थे।

उत्तर में मालती ने उसे नृपति कुँवर कर्ण और पद्मावती की कथा सुनाई। नृपति कुँवर ने मन में ठान रक्खा था कि वह उसी स्त्री से प्रेम

करता जो स्वयं उससे प्रेम करने के लिये आगे बढ़ती, और अपने इस हठ की पूर्ति के लिये उसने एक एक करके साठ विवाह किए किंतु एक भी स्त्री ऐसी न निकली जो प्रथम मिलन के दिन स्वतः प्रणयानुरोध करती, इसलिये उसने उन सबको छोड़ रखा था। उसके रूप-गुण की प्रशंसा जब सोरठ की राजकन्या पद्मावती ने सुनी, वह उस पर अनुरक्त हो गई, और बहुत समझाने पर भी उसने अपना हठ न छोड़ा। विवाह हुआ, और प्रथम मिलन के दिन पद्मावती को भी उसी परीक्षा का सामना करना पड़ा जिसका पूर्ववर्ती साठ ने किया था। उसकी सखी जैनरेखा ने जब यह देखा, उसने छिपकर एक गुलाबभरी पिचकारी मारी, जिससे पद्मावती चौंक कर नृपति कुँवर के गले से लिपट गई। इसे उसने उसका प्रणयानुरोध समझा और तदनंतर दोनों जी भर कर मिले। मालती ने कहा कि मधु ने भी नृपति कुँवर जैसा हठ ठान रखा था। पुरुष को तो स्त्री के सकेत पर स्वतः आगे बढ़ना चाहिए किंतु वह उसके आग्रह पर भी उसके अनुरोध नहीं स्वीकार कर रहा था। मधु ने पुनः संबंध के वैषम्य का उल्लेख किया। मालती का आग्रह बना रहा, यह देख कर मधु ने नंद पुरोहित के यहाँ का पढ़ना छोड़ दिया।

मधु अब गुल्ले ल लेकर विनोदार्थ रामसरोवर जाने लगा। किंतु वहाँ नगर की स्त्रियों पानी भरने के बहाने आने लगीं। मालती को भी उसके वहाँ जाने का समाचार मिला, और वह भी वहाँ आने लगी। उसे अब विश्वास हो गया था कि मधु को संबंध के लिये तैयार करना अकेले उसके बस की बात नहीं थी, अतः उसने अपनी एक चतुर सखी जैतमाल की सहायता इस विषय में चाही। वह मधु के पास पहुँची और मधुकर को व्यंग्य सुनाने के बहाने मधु को उसकी निष्ठुरता पर व्यंग्य करने लगी, और इसी प्रसंग में उसने उसे स्मरण कराया कि वे पूर्वभ्रम में मधुकर और मालती थे, तथा वह स्वयं सेवती थी : मालती जब हिमपात से नष्ट होकर और तदनंतर वन में आग लगने से झुलस गई थी, मधुकर उसे छोड़कर चला गया था : सेवती की सेवा-शुश्रूषा से जब वह पुनः स्वस्थ हुई, तो मधुकर के विरह में उसने प्राण दे दिए। वे दोनों मधु और मालती के रूप में अवतरित हुए थे, और उन्हें अपने प्रेम को पुनः निभाना चाहिए था। मधु को अपने पूर्वभ्रम का स्मरण हो आया, किंतु उसने सबध-वैषम्य का उल्लेख करते हुए उसके अनुरोध को भी स्वीकार नहीं किया। यह देखकर उसने मालती को बुलवा

भेजा, जो षोडश शृंगार किए हुए वहाँ आई, और साथ ही उसने मोहन और वशीकरण के मंत्रों का प्रयोग किया, जिससे मधु उसके वश में हो गया और उसने दोनों का गँठ-बंधन करा दिया ।

रामसरोवर के पास की वाटिका में नवदम्पति जैतमाल के साथ रहने लगे । राजा को उस वाटिका के माली से यह सूचना मिला । उसने मालती की माता कनकमाल से अपना यह निश्चय बताया कि यह दोनों का वध करावेगा । कनकमाल ने राजा के पीठ फेरते ही यह सूचना उन दोनों के पास भेज दी । मालती ने सुझाव दिया कि वे दोनों वहाँ से भाग निकलते, किंतु मधु ने यह न स्वीकार किया और कहा कि उसने गुलेल से आत्मरक्षा करने का निश्चय किया था । इस प्रसंग में उसने मलयंद-सुत की कथा सुनाई, जिसने मंत्री-कन्या रूपरेखा के साथ एक कुज में विहार करते हुए एक सिंह के आक्रमण को अपने वाशों से व्यर्थ कर दिया था : उसने कहा कि साहस से इस प्रकार अधिक से अधिक दुर्गम कार्य भी सुगम हो जाते हैं । मालती ने जब यह समझ लिया कि मधु स्थान छोड़कर कहीं न जाने वाला था और उसे राजा की सेनाओं का सामना करना ही था, उसने श्रीहरि, सूर्य और शंकर से प्रार्थना की । शंकर ने उसे आश्वासन दिया कि वे मधु की रक्षा करेंगे ।

राजा ने पदातिकों को मधु के वध के लिए भेजा । मधु ने अपनी गुलेल से मार-मारकर उन्हें भगा दिया । दूसरी बार राजा ने एक सहस्र सवारों को भेजा । उन्होंने 'बनिया' 'बनिया' कहकर मधु को ललकारा । मधु ने उनकी भी वही गति कर डाली जो उसने पदातिकों की की थी । जैतमाल ने देखा कि मधु को अब और बड़ी सेना का सामना करना था, इसलिए उसने मधु-मालती से अपने भ्रमर-मालती-कुल का विस्तार करने की राय दी । यह बात मधु-मालती ने मान ली । फलतः वहाँ पर जो भाड़ियाँ थी वे मालती की हो गईं और उनकी सुगंधि से मधुकर कुल वहाँ उमड़ पड़ा । इस बार राजा ने पॉच हजार की सेना भेजी । भ्रमर-कुल उससे ऐसा चिपक गया कि उससे भागते ही बना । अब राजा ने स्वतः युद्धक्षेत्र में जाने का निश्चय किया । उसने अपनी अश्व और गज-सेना को चमड़े से मढ़कर अपने साथ लिया । इस बार मधुकर कुछ अनिष्ट न कर पाए । मालती का धीरज जाता रहा । जैतमाल ने इस समय उसे बताया कि मधु काम एवं प्रद्युम्न का अवतार है, वह केशव

का स्मरण करे, तो वे प्रद्युम्न की रक्षा का उपाय अवश्य करेंगे। मालती ने ऐसा ही किया और केशव ने उसके रक्षार्थ दो भारंड पक्षियों को भेज दिया, जो बड़े ही विशालकाय थे। शिव-दुर्गा ने भी एक सिंह भेज दिया था। इनके सम्मिलित प्रहार से राजा की यह चर्म-सन्नाह मंडित सेना भी भाग निकली।

राजा ने अब अपने मंत्रियों को परामर्श के लिए बुलाया। उन्होंने उसे अपने प्रमुख मंत्री तारनसाह को बुलाकर इस उपद्रव को शान्त कराने के लिए राय दी। राजा ने तारनसाह को बुलाया। तारन को दुर्गा का वर प्राप्त था, उसने दुर्गा के सिंह को शान्त कर दिया और गरुड़ की दुहाई देकर भारंड पक्षियों को भी रोका। तारण की प्रार्थना सुनकर दुर्गा ने प्रकट होकर राजा को उसकी भूल बताई कि उसे मधु को बनिया मात्र नहीं समझना चाहिए था, मधु देवाश था, मनुष्य नहीं था। राजा ने अपनी भूल पर क्षमायाचना की और तदनंतर मालती तथा जैतमाल का मधु के साथ विवाह कर उसे अपना राज-पाट सौंप दिया और स्वयं वह गोकुलवास के लिए चला गया।

माधव शर्मा कृत मंशोधन

मधु और मालती के विवाह तक माधव शर्मा कथा को लगभग ज्यों का त्यों रहने देते हैं, किंतु तदनंतर जब राजा अपनी रानी कनकमाल से उनके वध का निश्चय प्रकट करता है, और कनकमाल इसकी सूचना उन दोनों के पास भेज देती है, माधव शर्मा कथा का ढोंचा एकदम बदल देते हैं। उनके अनुसार कनकमाल का सदेश पाकर दोनों भाग निकलने के लिये तैयार होते हैं किंतु जैसे ही नृपदल उन्हें मारने के लिये आ पहुँचता है, मधु तो घोड़े पर चढ़कर ब्रज की दिशा में भाग निकलता है, जब कि मालती नृप-दल के द्वारा पकड़ कर राजा के पास लाई जाती है। राजा जब मधु के भाग निकलने की सूचना पाता है, वह उसके पिता तारनसाह को मारने की आज्ञा देता है। महाजन उसे समझाते हैं कि पुत्र के अपराध के लिये पिता को दंडित न करना चाहिए। इस पर राजा उसे छोड़ देता है।

रानी और राजा ने अब निश्चय करते हैं कि मालती का विवाह यथा-शीघ्र किसी से कर देना चाहिए। वे वर के विषय में मालती की भी इच्छा जानना चाहते हैं। मालती अपना निश्चय प्रकट करती है कि वह

मधु के अतिरिक्त किसी को वरण न करेगी। रानी समझाती है कि मधु वरिष्क है, किसी राजकुमार को उसे वरण करना चाहिए; किंतु मालती अपने निश्चय पर अटल रहती है। और लोग भी उसे समझाते हैं, किंतु कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। जैतमाल उन्हें बताती है कि मधु और मालती गंधर्व और गंधर्वी के अवतार हैं, और मालती के निश्चय को वे अटल माने। वे जाकर राजा से यह सब बताते हैं। यह सुनकर राजा उसे विष देने का निश्चय करता है। रानी कहती है कि कन्या को मारना अच्छा न होगा, उसे कहीं महल में छिपाकर ही रक्खा जाए।

मधु इस बीच वहाँ से चलकर कुछ दिनों में मधुपुरी आ गया। मालती के विरह में वह बहुत दुःखित था। उसने विश्रांत घाट पर स्नान कर केशव देव को जुहार किया। होली का उत्सव वहाँ उसने देखा। साधुओं के दर्शन दिए, कीर्तन सुना। तदनंतर वसंत की ऋतु आई और उसने बृंदावन को भी देखा। कृष्ण-लीला के स्थानों को देखकर वह सुखी हुआ। वह दशम स्कंध भागवत की कथा सुनता। उसमें जब उसने राधा तथा कृष्ण के प्रेम की वार्त्ता सुनी, वह मालती का स्मरण करने लगा और मालती भी एक लता के पास पहुँची। रात हो गई थी, और वह वहीं रह गया। वह उसकी डालों से अंक भर कर मिला और बहुत सुखी हुआ।

इस प्रकार जब उसे वहाँ रहते एक मास हो गए, तो उसने हरि की वाणी सुनी कि वह अपने देश को लौट जाए। फिर वह बृंदावन से अत्यंत दुःखपूर्वक चल पड़ा। गोवर्धन आया, जहाँ उसने सात रात निवास किया। तदनंतर वहाँ से उसने अपने देश की ओर प्रस्थान किया। मार्ग में जब वह एक पीपल के वृक्ष के नीचे शयन कर रहा था, गरुड़ ने अपने पुत्रों को, जो उस वृक्ष पर बसेरा लेते थे, बताया कि लीलावती देश के चंद्रसेन और कर्णनृप के बीच युद्ध हुआ, जिसमें चंद्रसेन मारा गया, उसकी तीन रानियाँ उसके शव के साथ सती हो गईं, केवल कनकमाल नहीं हुई, अब दीपावली के दिन आधी रात के व्यतीत होने पर मृत राजा के सेवक नगर के द्वारों पर बैठने को थे और जो भी सर्वप्रथम नगर में प्रवेश करता, उसे नगर के लोग राजतिलक कर देते। यह सब जब मधुने सुना, वह दुःखित हुआ। उसे मालती की चिंता हुई कि वह जीवित थी अथवा नहीं। वह चल पड़ा और उपयुक्त समय पर लीलावती पहुँच गया। लोगो ने बिना उसको जाने हुए उसका तिलक कर दिया।

मालती ने जब मधु को देखा, उसे विश्वास हो गया कि यह उसका प्रेमी मधु ही था। जैतमाल से इसका निश्चय करने को उसने कहा। जैत उस महल में गई जहाँ मधु शयन कर रहा था। इसी समय वहाँ एक सर्प आ पहुँचा। जैत ने यंत्र के द्वारा उसे वश में करके मार डाला। प्रसन्न मधु के मुख पर का कपड़ा हटाकर जब जैत ने उसे देखा, उसे विश्वास हो गया कि वह मधु ही था। मधु जागने पर जैत से मिला। जैत ने उससे मालती के विरह-दुःख का निवेदन किया। मधु ने भी अपनी ब्रज-यात्रा का हाल सुनाया। तदनंतर जैत ने आकर मालती से बताया कि वह मधु ही था, और फिर दंपति मिले। तारनसाह को जब यह ज्ञात हुआ कि जिसको तिलक दिया गया था वह उसका पुत्र मधु था, वह भी उससे मिला। कनकमाल ने जब यह सुना, वह भी हर्षित हुई। उसने मधु और मालती का विधिवत् व्याह कराया। इसके अनंतर राजदंपति सुखपूर्वक रहने लगे।

अब मधु ने चंद्रसेन के मारनेवाले कर्ण को मारने का निश्चय किया। उसने कर्ण पर चढ़ाई कर दी और उसे परास्त करके मार डाला। कनकमाल ने जब यह सुना, उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने मधु की बहुतेरी बलैयाँ ली।

मधु और मालती के दो पुत्र हुए : प्राणनाथ और प्राणपति। सौ वर्षों तक के उनके सुखभोग के अनंतर स्वर्ग से एक दिव्य विमान आया और वह मधु तथा मालती को स्वर्ग ले गया, जहाँ वे पहले भोग कर चुके थे।

दोनों कथाओं में एक अंतर यह है कि चतुर्भुजदास का नायक बीर और साहसी है : संकट आने पर डटकर उसका सामना करता है और उसके इस साहस के साथ उसकी विवाहिता मालती तथा उसकी सहेली जैत भी साहस दिखाती हैं, माधव शर्मा का नायक भगोडा है : सास का सदेश पाते ही वह भाग निकलता है, यहाँ तक कि अपनी विवाहिता पत्नी को भी छोड़कर भागने में कोई सकोच नहीं करता है। दूसरा अंतर यह है कि चतुर्भुजदास की कथा में राजा पराजित होकर अपनी कन्या का विवाह नायक के साथ कर देता है और उसे अपना राजपाट दे डालता है, जब कि माधव शर्मा की कथा में वह एक अन्य शत्रु के साथ हुए द्वंद्वयुद्ध में मारा जाता है और नायक को उसका राज्य केवल हरि-प्रेरणा से मिलता है जिसके अनंतर नायिका की माता उसका विवाह नायक के साथ कर देती

है। तीसरा अंतर यह है कि माधव की कृति में नायक अपने श्वसुर के शत्रु को युद्ध में मारकर श्वसुर के वध का पतिशोध लेता है। चौथा अंतर यह है कि उसमें नायक नायिका के सौ वर्षों तक राज्य कर लेने के अनंतर एक दिव्य विमान आता है जो दोनों को स्वर्ग ले जाता है। पाँचवाँ अंतर यह है कि चतुर्भुजदास का नायक काम और प्रद्युम्न का अवतार है जब कि माधव शर्मा का नायक एक गधर्व मात्र है।

ऐसा ज्ञात होता है कि हरि-कृपा से सब कुछ संपन्न कराने की धुन में ही माधव शर्मा ने कथा में यह सब संशोधन कर डाला। चतुर्भुज दास की कथा अधिक युक्तियुक्त भी थी, अधिक पुरुषोचित तो थी ही, उसमें मधुकर मालती कुल के विस्तार द्वारा राजा की सेना को भगाने का जो प्रसंग आया है, वह उनके पूर्वभव से सबद्ध है, जिसका उल्लेख माधव शर्मा की भी कथा में नायक नायिका का गंठबधन कराने के पूर्व जैत ने किया है। इसलिये किसी भी दृष्टि से माधव शर्मा का संशोधन कलापूर्ण नहीं कहा जा सकता है, सुरुचिपूर्ण भी नहीं। इससे माधव शर्मा को लाभ इतना अवश्य हुआ कि वे मूल रचयिता के साथ रचना में भागीदार बन गए।

पाठ-संबंध और संपादन-सिद्धांत

‘मधुमालती’ की प्रतियों में कुछ निश्चित प्रक्षेप ऐसे हैं जो सभी प्रतियों में मिलते हैं, यथा—

निर्धारित ६३३ है :

भवत्स्थ भवत्येव नालिकेल फलाम्बुवत् ।

गमवेच्छगमत्येव गजपुक्त कपित्थवत् ॥

और निर्धारित ६३४ है :

नालिकेल फल नीरजह गज कवित्थ फल खाह ।

वह फल कत होय जल भरै वह फल कल कित जाह ॥

ये क्रमशः मूल तथा भाषांतर के छंद हैं। रचना में जहाँ भी संस्कृत के श्लोक आए हैं, उनके भाषांतर के छंद भी आते हैं, और तुरंत बाद में आते हैं। यहाँ भी मूलतः दोनों साथ साथ आए होंगे, किंतु इस समय रचना की जितनी भी प्रतियाँ प्राप्त हैं, सबमें इनके बीच ११४ छंद अन्य हैं। (कुछ

प्रतियो में और भी अधिक हैं) जिनके न रहने से प्रसंग को कोई क्षति नहीं पहुँचती है, बल्कि जिनके रहने से ऊपर उद्धृत दोनों छंदों की सगति को व्याघात पहुँचता है । इसलिये यह भलीभाँति प्रकट है कि ये ११४ छंद बाद में रखे गए हैं और मूल रचयिता द्वारा नहीं रखे गए हैं ।

इसी प्रकार निर्धारित ६३४ तथा ६३५ के बीच अड़तीस छंदों का (कुछ प्रतियो में और अधिक छंदों का) एक शीर्षक 'प्रस्ताव श्री रामचंद्र जी को' आता है । यह प्रस्ताव कथा का कोई अंश नहीं है, और किसके पूछने पर और किस उद्देश्य से लाया गया है, यह कुछ स्पष्ट नहीं है । रचना में जहाँ कहीं इस प्रकार की साक्षी कथाएँ आती हैं, उनके संबंध में पहले कोई वक्ता कहता है कि यथा अमुक प्रसंग में हुआ था, इस पर सुननेवाला व्यक्ति पूछता है कि उस प्रसंग को वह उसे सुनाए, और तब वक्ता प्रसंग को प्रस्तुत करता है । यह प्रस्ताव अथवा प्रसंग इसका स्पष्ट और एकमात्र अपवाद है । इस प्रस्ताव के रहने पर छंद ६३४ और ६३५ की सगति में व्याघात पहुँचता है और न रहने पर दोनों की पारस्परिक संगति स्पष्ट हो जाती है । ऐसी दशा में यह प्रस्ताव भी प्रक्षिप्त प्रमाणित होता है । यह प्रस्ताव रचना की समस्त प्राप्त प्रतियो में है ।

इन दो प्रक्षेपों से प्रकट है कि रचना की जितनी भी प्रतियाँ इस समय प्राप्त हैं सब परस्पर सकीर्ण संबंध से संबंधित हैं । इसलिये रचना का संपादन एक बहुत ही उलझन की वस्तु बन जाती है, और इस बात की निश्चित आशंका हो जाती है कि जो अंश समस्त प्राप्त प्रतियो में समान रूप से मिलते हैं, कहीं उनमें भी कुछ प्रक्षिप्त न हो । भविष्य में यदि कोई ऐसी प्रतियाँ मिले जिसे ऊपर उल्लिखित प्रकार के प्रक्षेप न हो, तब कुछ अधिक निश्चयात्मकता के साथ रचना का पाठ निर्धारित हो सकता है ।

इस प्रसंग में माधव शर्मा वाला पाठ भी विचारणीय है । उसमें निर्धारित पाठ के छंद ४८० तक का ही अंश चतुर्भुज दास की रचना के अनुसार है, शेष सर्वथा परिवर्तित है, और ऊपर उल्लिखित दोनों प्रक्षेप इसी परवर्ती अंश में आते हैं इसलिये यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता है कि उसमें जितना अंश चतुर्भुज दास की रचना से संकलित है, वह रचना की किसी सर्वथा स्वतंत्र शाखा के पाठ पर आधारित है । एक बात और इस संबंध में ज्ञातव्य है : माधव शर्मा ने जब निर्धारित छंद ४८० के बाद के अंश को

अपनी रुचि के अनुसार सर्वथा बदल डाला तो रचना के प्रारंभ से उस छंद तक के अंश को भी अपनी रुचि के अनुसार परिष्कृत कर सकते थे। फलतः निर्धारित ४८० छंदों के स्थान पर जो अंश उसमें केवल ३०४ छंदों में समाप्त हुआ है, उसके १७६ या अधिक छंद, जो चतुर्भुज दास वाले पाठ की प्रतियों में प्रायः समान रूप से आते हैं और माधव शर्मा के पाठ की प्रति में नहीं मिलते हैं, प्रामाणिक हैं अथवा प्रक्षिप्त, यह अनिर्णीत बना रह जाता है—अथवा कम से कम उनकी प्रामाणिकता के संबंध में कोई निर्णय माधव शर्मा के पाठ की प्रति की सहायता से नहीं किया जा सकता है। यहाँ इतना और बताया जा सकता है कि ये १७६ अथवा अधिक छंद प्रायः संगत हैं।

पुनः प्रथम वर्ग की समस्त प्रतियों में निर्धारित छंद ३०६ तथा ३२० के बीच के समस्त छंद छूटे हुए हैं। इन छंदों के न रहने से मधु और जैतमाल का एक उत्कृष्ट संवाद त्रुटित हो जाता है और ३०६ तथा ३२० की पारस्परिक संगति नहीं रह जाती है। इसी प्रकार की किंतु कुछ छोटी भूले और भी हैं जो प्र० १, २, ३ तथा ४ में समान रूप से मिलती हैं। इसलिये ये चारों निश्चित रूप से परस्पर संकीर्ण संबंध से संबंधित हैं और एक संकीर्ण शाखा का ही निर्माण करती हैं।

प्रथम वर्ग से आगे बढ़ने पर ऐसे अनेक प्रक्षिप्त छंद मिलते हैं, जो प्रथम वर्ग की समस्त प्रतियों में नहीं पाए जाते हैं, फिर भी द्वि० १, तृ० १, तथा च० १ में पाए जाते हैं, इसी प्रकार द्वि० १ के अधिकतर अतिरिक्त छंद तृ० १ में और तृ० १ के अधिकतर अतिरिक्त छंद च० १ में पाए जाते हैं। ये अतिरिक्त छंद प्रक्षिप्त हैं। इन छंदों के प्रक्षिप्त होने का कारण यही नहीं है कि ये अन्य प्रतियों में नहीं मिलते हैं, वरन् यह भी है कि इनके कारण पूर्ववर्ती और परवर्ती छंदों की पारस्परिक संगति में प्रायः व्याघात पहुँचता है, और जहाँ नहीं भी पहुँचता है, इनके रहने से प्रसंग में किसी प्रकार सौंदर्य नहीं आता है। अतः इन छंदों में से उनको छोड़कर जिनके निकल जाने पर प्रसंग को स्पष्ट व्याघात पहुँचता है, शेष समस्त को प्रक्षिप्त मानना पड़ता है।

इन परिस्थितियों में कुछ परिणाम सुगमता से निकाले जा सकते हैं :

(१) द्वि० १, तृ० १, तथा च० १ मूल से उत्तरोत्तर प्रथम वर्ग की प्रतियों की अपेक्षा अधिकाधिक दूर पड़ती हैं।

(२) चारो वर्गों की प्रतियों में जहाँ तक परस्पर साम्य है, उसके संबंध में यह सभावना सबसे अधिक है कि वहाँ तक वह रचना के मूल पाठ के सबसे अधिक निकट है। किंतु इस अंश को भी आँख मूँदकर प्रामाणिक नहीं स्वीकार किया जा सकता है क्योंकि चारो वर्गों में परस्पर संकीर्ण संबंध प्रमाणित है।

(३) माधव शर्मा के पाठ के अंश जो चतुर्भुजदास वाले पाठ की प्रतियों में नहीं मिलते हैं, चतुर्भुजदास के न होकर माधव शर्मा के होंगे, इसकी सभावना प्रकट है।

(४) माधव शर्मा के पाठ के वे अंश जो चतुर्भुज दास वाले पाठ की प्रतियों में भी प्रायः उसी प्रकार से मिलते हैं, यद्यपि निश्चित रूप से प्रामाणिक ही होंगे, ऐसा नहीं कहा जा सकता है, किंतु स० १६०० के आस पास, जब माधव शर्मा ने रचना का सशोधन रूप प्रस्तुत किया होगा, वे रचना के किसी पाठ में अवश्य रहे होंगे और यह दृढ़ता के साथ कहा जा सकता है।

(५) चतुर्भुजदास वाले पाठ के वे अंश जो माधव शर्मा वाले पाठ के उस भाग में नहीं मिलते हैं जिसमें चतुर्भुजदास के पाठ की प्रायः स्वीकार किया गया है, हो सकता है कि चतुर्भुजदास वाले पाठ के मूलतः न रहे हो किंतु यह भी संभव है कि माधवशर्मा ने ही उन्हें निकाल दिया हो। इस प्रसंग में यह ज्ञातव्य है कि ऐसे अंश प्रायः संगत हैं, और आंतरिक अनुसंगति के आधार पर इन्हें मानना प्रायः संभव नहीं ज्ञात होता है।

ऐसी दशा में प्रकट है कि माधव शर्मा का पाठ हमारी सहायता सदिग्ध रूप में ही कर सकता है और हमें चतुर्भुज दास की रचना का पाठ निर्धारित करने के लिये उसी पाठ की प्रतियों का आश्रय ग्रहण करना पड़ता है। इन प्रतियों में प्रथम वर्ग की प्रतियों ही सबसे कम प्रक्षिप्त हैं और हम देखते हैं कि उनमें भी कुछ न कुछ छंद ऐसे हैं जो उस वर्ग की एक प्रति में हैं तो दूसरी में नहीं हैं। इनकी आंतरिक अनुसंगति पर पूर्ण रूप से ध्यान रखते हुए केवल उन्हीं को प्रामाणिक स्वीकार किया जा सकता है जिनके बिना प्रसंग सूत्र त्रुटित होता है और जो इस प्रकार रचना में अनिवार्य प्रमाणित होते हैं, अन्यथा उन्हें अप्रामाणिक मानकर सुगमता से छोड़ा जा सकता है। किंतु इस प्रकार समस्त प्रतियों में समान रूप से पाए

जानेवाले अंशों में भी दो बड़े अंश ऊपर प्रक्षिप्त प्रमाणित हो चुके हैं, इसलिये रचना की आंतरिक अनुसंगति को सतत् ध्यान में रखते हुए ही अंतिम निर्णय मूल पाठ के विषय में लिया जा सकता है ।

कहना नहीं होगा कि इसी पद्धति पर प्रस्तुत संस्करण में पाठ-निर्धारण किया गया है, और रचना आदि से अंत तक ऐसे रूप में पुननिर्मित की जा सकी है जो कि प्राप्त समस्त पाठों की तुलना में मूल के अधिक निकट माना जा सकता है । आशा है कि भविष्य की खोजों से और भी अधिक निश्चयात्मकता के साथ प्रामाणिक पाठ प्रस्तुत किया जा सकेगा ।

माताप्रसाद गुप्त

मधुमालती वार्ता

(चोपई)

‘वर विरंचि तनया’^१ वर पाऊं । ‘संकर पूत गणपति मनाऊं’^२ ।
चातुर ‘हैत सहित’^३ रिझाऊं । ‘सरस’^४ मालती मनोहर गाऊं ॥ १ ॥
लीलावती ललित एक देसा । चंद्रसेन ‘जिहां’^१ सुघड नरेसा ।
‘सुभग धाम जिहां गगन’^२ पवेसा । मानु ‘मंडप’^३ रचो महेसा ॥ २ ॥
‘बसति पुर नगर’^१ जोजन च्यार । ‘चोरासी चोहटा चौवार’^२ ।
अति विवित्र ‘दीसै’^३ नर नार । ‘मानु’ तिलक भूम मंझार’^४ ॥ ३ ॥
‘करहि’^१ सेव नृप ‘कुरी’^२ छत्रीस । चढै ‘सहस’^३ दस नाये सीस ।
‘मैमंत कुंजर पारै चीस’^४ । चंद्रसेन ‘नृप ईसन्ह ईस’^५ ॥ ४ ॥

[१] १. तृ० १ ब्रह्मजीज ब्राह्मण । २. प्र० ३ संकर सुत गणपति सिर नाऊं ।
३. प्र० ३ हित चातुर । ४. तृ० १ तो रचिक ।

[२] १. प्र० ३ तहा । २. प्र० ३ सुभग धाम धज गगन, तृ० १ सुभग देव
द्विज गग [न] । ३. प्र० ३ माडल, तृ० १ नगर ।

[३] १. प्र० ३ बसहि नयर पुर । २. प्र० ३ चोरासी चोहटा चिहुँ वार, वि०
१ तिनके सुष को अत न पार । ३. प्र० ३ वसे । ४. प्र० ३ नाइ तिलक
भुवन मंझार, द्वि० १ एक एकतैं अधिक विचार ।

[४] १. प्र० ३ करहे, प्र० १ करीहै । २. प्र० १ २ कुल । ३. प्र० ३ सेस ।
४. तृ० १ होत असवार कपत सेसा । ५. प्र० १ नरपन्ही नरेस, प्र० ३
नृप ईस... ।

(दूहा सोरठा)

हय दल अंत न पार, कुंजर कारे मेघ जिम ।
तुरि छत्रीस हजार, चढै साथि नूप चंद के ॥ ५ ॥

(चोपई)

मंत्रो बूधि पराक्रम तांम । तारण साह तास को नाम ।
निस दिन सेवा धरम सुं काम । 'नूप'¹ न लजै घड़ी पल जांम ॥ ६ ॥
त्रप कै ग्रह अंतेवर च्यार । संतति एक मालती कुमारि ।
'बरनू'² काहा¹ रूप अपार । मातुं 'उरवसी'³ लिखो अवतार ॥ ७ ॥
'उपमा' कोण पटंतर कहुं¹ । गुण 'अनेक'² छवि पार न लहुं ।
दिन दिन रूप अनोपम चढै । 'ऐसी' और नहीं विध'³ 'घड़ै'⁴ ॥ ८ ॥
गज कपोत हरि बिंब 'प्रबाल'¹ । अंगी मधुकर मीन मराल ।
कदली कनक कीर पिक 'सोहै'² । 'ए'³ सब 'तन की'⁴ सोभा 'मोहै'⁵ ॥ ९ ॥
जां 'देखै चित चलै'¹ महेसा । 'देखत' धरणी डारै सेसा'² ।
सूर भूलै 'जिव धरै अदेसा'³ । 'ससि भूलै डोलै मही देसा'⁴ ॥ १० ॥
राज लोक बरगण 'कहा कहुं'¹ । थोरी सी मंत्री की लहुं ।
'थोरी मांझ'² बोहोत सुष होई । अति लावण्य 'न राचो'³ कोई ॥ ११ ॥
तारन साह सुघड 'गुनसार'¹ । त्रोथा एक 'तसु'² एक 'कुंवार'³ ।
ताको नाम मनोहर धरो । मातुं काम दूजो अवतरो ॥ १२ ॥

[६] १. प्र० ३ वृप ।

[७] १. प्र० १ मे यहाँ 'आगू' और है । २. प्र० १ उरसी ।

[८] १. प्र० ३ उपमा कोण पटंतर कहु । २. प्र० ३ अनंत । ३. प्र० १ ऐसी
अबन्ही वीधाता, तृ० १ ऐसी नहीं और विधाता । ४. प्र० ३ चढे ।

[९] १. प्र० १ प्रकार । २. द्वि० १ सोई । ३. प्र० १ ई । ४. द्वि० १
फीकी । ५. द्वि० १ होई । तृ० १ मे यह अर्द्धाली नहीं है ।

[१०] १. द्वि० देखे तप टरै । २. तृ० १ मानू धार सीस पर सेसा । ३. प्र० १
जिहा अघर अघेसा । ४. तृ० १ किनर मनसा करै नरेसा ।

[११] तृ० १ कित लहुं । २. प्र० ३ थोरा मंझ, द्वि० १ थोरी कथा । ३. प्र० ३
राचे जन ।

[१२] १. प्र० १ घनसार । २. प्र० १ सु । ३. प्र० ३ कुमार ।

मधु मधु कहै र खिलावै 'तात'^१ । बाधै 'कला मानु' दिन रात^२ ।
 वरी दिवस 'पख'^३ मासन और । ज्युं वसंत 'पिक'^४ 'चंद चकोर' ॥१३॥
 भयो बरस द्वादस कै सध । 'देखत'^१ त्रिया 'होइ'^२ काम अघ ।
 तन मन धन सुख 'बिसरहि ग्रेह'^३ । अंगी भई मानु गति तेह ॥१४॥
 'जित तित'^१ कुंवर करै कहुं 'सैल'^२ । ढोली लगी फिरै त्रिया गैल ।
 कबहुं राम सरोवर 'जाय'^३ । अंगी जूथ मानु चौक मुलाय ॥१५॥

(दूहा)

राम सरोवर ताल की सोभा 'कही'^१ न जाय ।
 सेत वरण पंकज तिहां 'मुनिवर'^२ रहै लोभाय ॥१६॥

(चोपई)

सोभा कोण राम सर 'कहै'^१ । बहुतक तिहां विहंगम रहै ।
 'प्रफुलित'^२ कमल बास महमहै । वोपमा 'मान सरोवर'^३ लहै^४ ॥१७॥
 अबला किती इक पानी भरै । चितवत 'कुंभ'^१ सीस तैं^२ परै ।
 'रीतै कलस हाथ तैं'^३ 'गिरे'^४ । भूली 'मानु'^५ बिना 'अत'^६ मरै ॥१८॥
 मालती 'एह वात'^१ सुन पाई । मधु देखन कुं मनसा धाई ।
 'मनकी काहु कह'^२ न 'सुनावै' । जैसे चात्रुक 'स्वाति'^४ कुं ध्यावै ॥१९॥

[१३] १. प्र० ३ मात । २. प्र० १ कात कला निज गात, तृ० १ मानुं सकल दिन रात । ३. तृ० पल । ४. प्र० ३ दल, द्वि० १ दिन । ५. द्वि० १ व... ।
 [१४] १. प्र० १ देष । २. प्र० ३ होवे । ३. प्र० १ विसहर ग्रहै, प्र० ३ वसरी देह ।

[१५] १. प्र० १ जितन । २. प्र० १ सलै । ३. प्र० १ जाउ ।

[१६] १. प्र० १ वरणी । २. प्र० ३ मुनिजन ।

[१७] १. प्र० ३ लहे । २. प्र० १ प्रफुलत । ३. प्र० १ रामसरोवर, प्र० ३ कोण रामसर । ४. द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है: तब फूले देखल पर मरे । पली बहुत केलि बहु करै ।

[१८] १. प्र० ३ कलस । २. तृ० १ हाथ तैं । ३. तृ० १ चितवत बदन सीस तैं । ४. प्र० ३ परे । ५. प्र० ३ माननी । ६. प्र० ३ मृत ।

[१९] १. प्र० १ इहे वात, तृ० १ एह वचन । २. प्र० ३ मन की वात काहु को न । ३. प्र० १ सुनाउ । ४. प्र० ३ बुंद ।

जब लग मधु अपने घर रहै । किती एक नारि ठिकाणो 'ग्रहै'^१ ।
 'जिन'^२ के सजन बंधु कछु कहै । 'किती एक भली बुरी सब सहै'^३ ॥ २० ॥
 अैसे भये दिवस दस बीस । सुनी तात तब कीनी रीस ।
 'एह'^१ बात 'सुनिहै नृप ईस'^२ । कहा कुंवर सरवर की 'चीस'^३ ॥ २१ ॥
 अब तौ कहु 'अनत फिन'^१ जावो । मेवा ले लरकन 'सु'^२ खावो ।
 पंडित के ढिग बैठे पढ़ो । 'गुवाल'^३ होइ 'कै गोवल चढो'^४ ॥ २२ ॥

(श्लोक^१)

दो दो लोचन सर्वानां 'विद्यायं त्रिलोचन'^२ ।

सस लोचन धर्मानां ग्यानी अनंत लोचनं ॥ २३ ॥

दोय दोय लोचन पसु पंषी नर । तीजो लोचन 'विद्या को वर'^१ ।
 लोचन सपत 'ध्रमी को'^२ करै । ग्यानी लोचन गिणत न परै ॥ २४ ॥
 नंद पिरोहित लीनो 'बोल'^१ । दुंढि महरति 'जोतिक खोल'^२ ।
 ए जो कुमर पढ़ै दस बोल । 'देहुं कनक बराबर तोल'^३ ॥ २५ ॥
 नंद पिरोहित लीनो सोध । मधु कुं विद्या देय प्रमोध ।
 जे जे अक्खर पंडित कहै । ते ते अक्खर कंठ ले ग्रहै ॥ २६ ॥
 एक दिवस 'मंत्री कु'^१ काज । क्रिपा दिस्टि करि पूछै राज ।
 'कुंवरी पढ़ावो जो कछु पढ़े'^२ । कित एक दिवस 'माहि द्रिस्टि'^३ चढ़ै^४ ॥ २७ ॥

[२०] १. प्र० १ गहै । २. प्र० ३ उन । ३. तु० १ भूलि त्रिया बिना मृत परे (तुल० १८.४) ।

[२१] १. प्र० ३ एसी । २. प्र० १ सुनी नृप अैसेइ, प्र० ३, तु० १ सु गहे नृप तीस (ईस तु० १) । ३. प्र० ३, तु० १ तीस ।

[२२] १. प्र० ३ अन जन । २. तु० १ संग । ३. प्र० १ गवाल, तु० १ जो वल । ४. तु० १ तो घड़न सभो ।

[२३] १. प्र० ३ श्लोक । २. प्र० १ वद्या तीन लोचन ।

[२४] १. प्र० १ वद्य को वर, प्र० ३ विद्या को पर । २. प्र० ३ धरम जिहा ।

[२५] १. प्र० १ वाल । २. प्र० १ जोषै पोल । ३. प्र० १ मधू क वद्या देय मोष (तुल० बाद का छंद) ।

[२७] १. प्र० ३ के । २. प्र० १, द्वि० १ कुंवर पढ़ावो सो कछु पढ़ो (पद्यो-द्वि० १) प्र० ३ कुंवरी पढ़ावा जो कछु पढ़े । ३. प्र० १ द्रिस्टि मोही, प्र० ३ माहि बुधि ।

मन्त्री कहै राय अवधार । अति विचित्र पंडित इक सार ।
 बरस साठि पैसठि कै 'अद्धि'^१ । चवदै विद्या जाणत 'सिद्ध'^२ ॥ २८ ॥
 चंद्र सेन नृप इम उच्चरै । जो मालती पढ़वे की करै ।
 भीतर जाय बोहोर सुध लेहु । तो मन्त्री तुम्ह आएस देहु ॥ २९ ॥

(दूहा)

कारी करम 'कपाल'^१ की बिधना 'लषी सुभाय'^२ ।
 मधुमालती विलास को लागो होण उपाव ॥ ३० ॥
 'गयो'^१ राइ अंतेवर 'तिहा'^२ । कनक माल राणी है 'जिहा'^३ ।
 -राणी सुं पुछै 'करि'^४ भेव । पंडित एक महा दुज देव ॥ ३१ ॥
 जो मालती पढ़वे की कहै । तो पंडित एह 'ठाहर'^१ रहै ।
 'अटक घरी द्वै दिन की सहै'^२ । थोरो थोरो 'अक्खर'^३ लहै ॥ ३२ ॥
 कुमरी कहै सुनो हो तात । मेरे 'एक'^१ 'विद्या सुं पांत'^२
 पंडित एक बुलावो प्रात । 'बैठी रहुं पढ़ुं दिन रात'^३ ॥ ३३ ॥
 'देधि बदन'^१ मालती विसाल । मन मैं 'सांक भई भूपाल'^२ ।
 कन्या बर प्रापती कुं भई । 'आज कालि चिन (चीन) उपजे'^३ नई ॥ ३४ ॥
 औसी मन मैं चिंता करै । फुनि बिचार कछु औरी धरै ।
 पढ़वे कारण बेलंबी रहै । तो लुं बर दुहुं नृप कहै ॥ ३५ ॥

[२८] १. प्र० ३ अद्ध । २. प्र० ३ सुद्ध ।

[३०] १. प्र० ३ कपाट । २. प्र० १ लष्यो समान ।

[३१] १. प्र० ३ गए । २. प्र० ३ जहा । ३. प्र० ३ तिहा । ४. प्र० ३ तित ।

[३२] १. प्र० ३ ठोरह । २. प्र० १ अटक घरी देव घन चहै, प्र० ३ पट
 परेच बाधु नृप कहे । ३. द्वि० १ अक्खर ।

[३३] १. द्वि० १ मन । २. प्र० १ वद्य सू पात, प्र० ३ विद्या सु प्यात । ३. प्र०
 ३ बैठी पढ़ुं दिवस ने रात ।

[३४] १. प्र० ३ देषी नृप । २. प्र० १ लक्ष्य थई भूपाल । ३. प्र० १. काज
 काज चीन उपजे नही ।

पट परेच 'बांधु'^१ त्रप कहै । भीतर कुंवरी मालती रहै ।
 पंडित डिग 'मंत्री' को बाल'^२ । 'बैठो रहै पढै चटसाल'^३ ॥३६॥
 'मंत्री'^१ कुवर नाम जब कह्यो । सुनत मालती 'हिय सच'^२ भयो ।
 जाके मन 'मिलबे'^२ की तीस । मनसा को दाता जग दीस ॥३७॥

(अलोक)

गिरो कलापी गगने च मेघा 'ललांतरे'^१ भानु जले च पद्मः ।

द्विलक्ष सोमो 'कुमुदोत्पलांच'^२ यो यस्य प्रीति न कदाच दूर ॥३८॥

कपट वचन बोले एक राई । पंडित दरसन न देशो जाई ।
 त्रिया होय करि निरषै 'जेह'^१ । सेत वरण हो ताकी 'देह'^२ ॥३९॥
 मंत्री सुत एक 'अच्छे'^१ आइ । निस दिन बैठि 'पढै है'^२ ताहि ।
 पंडित भलो 'अलच्छन'^३ 'एह'^४ । ताते मन उपनो संदेह ॥४०॥
 जो 'मनसा'^१ पढ़बे की 'कहै'^२ । तो पट परेच की 'ऊझल रहै'^३ ।
 बाहर तैं गुरु अक्खर 'कहै'^४ । 'अस सुमती'^५ विद्या तुम लहै ॥ ४१ ॥
 मालती चतुर विचक्षण अंग । बूझै सकल बात को रंग ।
 'नृप सु'^१ उत्तर जपै जाम । मेरे एक विद्या सुं काम ॥ ४२ ॥
 पट परेच 'बांधो'^१ गह च्यारि । मुख 'देशां'^२ को कोण विचार ।
 'अक्खर वचन पुकारी कहै'^३ । पंडित मन मानै 'जिहाँ रहै'^४ ॥ ४३ ॥

[३६] १. प्र० १ बांधो । २. प्र० १ मीश्र को बोल, प्र ३. मंत्री सुत रहे । ३.
 प्र० ३ एसी विद्या विघत्तम लहै ।

[३७] १. प्र० १ मित्री । २. प्र० ३ जीव सुष । ३. प्र० १ मीलैवे, प्र०
 ३ मलवा ।

[३८] १. प्र० १ नषतरे । २. प्र० १ कूमोदइ पनाल ।

[३९] १. प्र० १ जेम । २. प्र० १ देही ।

[४०] १. प्र० १ अघौ (<अछौ) । २. प्र० ३ वेठो पढावे । ३. प्र० ३
 ए लछन । ४. प्र० ३ देह ।

[४१] १. प्र० ३ मनछा । २. प्र० ३ कहो । ३. प्र० १ नूझल रहै, प्र० ३
 ओज... । ३. प्र० ३ देहो । ५. प्र० ३ एसी विद्ध ।

[४२] १. प्र० ३ नृप कुं ।

[४३] १. प्र० १ वाघी । २. प्र० ३ देशे । ३. प्र० २ अत्तर वच पुकारे कहो ॥
 ४. प्र० ३ तिहा रहो ।

मालती बचन 'सुनत सच'^१ पायो । तब ही पंडित बेग बलायो ।
 पट परेच की 'ऊरुल रहै [इ]^२ । पढवे कुं पाटी लिख देइ ॥ ४४ ॥
 उं नमः सिद्धं प्रथम पढाई । फुनि 'कक्का दोउ कक्काई'^१ ।
 'बावन'^२ अक्खिर अक्खिर चीने । बारे खरी बोहोरि लिख दीने ॥ ४५ ॥
 'चाणायक'^१ व्याकरण समेत । सारस्सुत को 'सघलो'^२ हेत ।
 अमर'कोस'^३ पिंगल 'लीलावति'^४ । "जे करि कमल दियो सरसती ॥ ४६ ॥
 पंडित अच्छिर जे जे कहै । सुनत मालती सब सिख लहै ।
 नावां वाचै 'आगम'^१ 'चढी'^२ । मानुं उदर मांरु ते 'पढ़ी'^३ ॥ ४७ ॥
 मंत्री सुत कछु अधिक पढ़ै । सुनत मालती 'चुंप जीय'^१ बढ़ै ।
 निमेष एक 'बोलती अम लाइ'^२ । 'दोऊ'^३ 'सरस'^४ न बरने जाय ॥ ४८ ॥
 'पट परेच की ऊरुल रहै । बचन बबेक 'परस्पर'^२ कहै ।
 मधु मालती दोउ परवीण । दोऊ सरस न कोऊ हीण ॥ ४९ ॥
 'एक दिवस गुरु आरन गयो । मन में 'गृभ'^२ मालती ठयो ।
 पट परेच सुं दीने नैन । निरषै मधु 'मानु'^३ पूरन मैन ॥ ५० ॥

- [४४] १. तृ० १ नूप शुद्ध । १. प्र० १ नूक्कल रहै, प्र० ३ ओजल दह ।
 तृ० १ छंद २२ के अनंतर यहाँ तक त्रुटित है ।
- [४५] १. प्र० १ कको दुक्को वढ़ाई, तृ० १ कका दो काना लाये । २. प्र० ३.
 बाँनि के, तृ० १ सबही ।
- [४६] १. प्र० १ चरणाएक । २. प्र० १ संग्रह । ३. प्र० १ कोक । ४.
 प्र० १ सरसती, तृ० १ समेता । ५. तृ० १ मे यहाँ ४६-२ दुहराया
 हुआ है ।
- [४७] १. तृ० १ अंग उधम । २. प्र० ३ कढी ।
- [४८] १. प्र० १ चुपक जिय, तृ० १ चौस जब । २. तृ० १ मेलियो मेलाय ।
 ३. प्र० १, २ कोउ । ४. तृ० १ सरमर ।
- [४९] १. तृ० १ मे छद छूटा हुआ है । २. प्र० ३ परसै ।
- [५०] १. तृ० १ मे छद की प्रथम अर्द्धाली छूटी हुई है । २. प्र० १ गूज । ३.
 प्र० १ में यह शब्द नहीं है ।

(८)

(दूहा सोरठा)

भई बिरह 'बर बार'^१ मधुमूरति 'निरषी जिहौ'^२ ।

मानु 'तीर मंझार गिरै मीन'^३ 'ज्यु'^४ मालती ॥ ५१ ॥

(चोपई)

पट परेच थोरी गहि फारी । 'कर ग्रहि गैद फूल सु'^१ मारी ।

मधु 'चितै अरु ऊचो देषै'^२ । मालति बदन 'कलानिधि पेषै'^३ ॥ ५२ ॥

(दूहा)

'चितवत हे'^१ चिहुं नैन, मधु बान उरउर रहे ।

प्रगटो पूरन मैन, प्रीत हेत मधु मालती ॥ ५३ ॥

मधु 'जियमन(मयन)सकुच'^१ मन 'धारी'^२ । नीची दिस्टि दै धरणी मारी^३ ।

मानु 'सिर ढोलै कुंभ सहस जल'^४ । लज्जा 'भई'^५ प्राण 'तैं परबल'^६ ॥ ५४ ॥

मालति फिर 'बपु'आप'संभारै'^१ । 'दूजी गैद फूल'^२ की मारै ।

बदन दुराय रह्यौ 'कहो कैसे'^३ । 'निरषि'^४ बदन 'बोलै फुनि'^५ अैसे ॥ ५५ ॥

फल अपूरब देषे द्विग जैसे । तलब रहे बिनु 'षाए'^१ कैसे ।

'मीठो कड़यो जानिए कैसे । आरत भूष जानिये अैसे'^२ ॥ ५६ ॥

[५१] १. प्र० ३ तिह वार । २. प्र० १ नीरषै नाह । ३. तु० १ मीन के जाल गिरी मुरछि । ४. प्र० १ जू, तु० १ जब ।

[५२] १. प्र० १ कर ग्रहि मेद फूलस, प्र० ३ कर ग्रहि गैद फूल की, तु० १ पुष्प गैद मधुकर कू । २. प्र० ३ ऊँचो चित ओर ही पेष । ३. प्र० कलानीती प्र० ३ कलानिधि देष ।

[५३] १. प्र० १ चित हूत ।

[५४] १. प्र० ३ जौय मे सफोस । २. तु० १ धरि है । ३. प्र० ३ धारी तु० १ करि है । ४. प्र० ३ कुभ ढले सर जल, तु० १ शिर कुभ सहसु कर धारे । ५. प्र० ३ म' । ६. तु० १ तन मारै है ।

[५५] १. प्र० १ वोहु । २. प्र० ३ सभारी । ३. प्र० १ दूज फूल गयद । ४. तु० १ तन तरसे । ५. प्र० ३ निरखो । ६. प्र० ३ बोल ।

[५६] १. प्र० ३ षाए । २. प्र० ३ आरतवंत जानीये तेसे, मन की त्रपत .^६ बुज कहो कैसे, तु० १ फुनि मेठो कड़यो कुन जाने, विन षाये कहो कहा बषानै ।

‘इंद्रायण’^१ फल सुंदर होय । खावे कूं ‘इच्छै नहीं’^२ कोई ।
बिन बूझे सो चाखै कोई । ‘सुबटा सेंवल सी गति होई’^३ ॥१७॥

(सोरठा दूहा)

सुबटा सेंवर देष मानुं ‘अब ते सुभर फल’^१ ।
फुनि ‘पाका ते पेधि’^२ ‘देह’ पीजरा लों भई ॥ ५८ ॥

(कुडलिया^१)

स्यानपनो तो सबही गयो सेयो बिरछ अकाज ।
सेयो बिरछ अकाज काज ‘एको नहीं’^२ आयो ।
रातो पोहोप देषे सूबो सेंवल विलमायो^३ ॥५९॥
चंच ठकोरै सिर धुणै ‘रुई’^१ चिहुं दिसि जाय ।

‘ज्यो जैसा को संग’^२ करै ‘त्यो’^३ तैसा फल खाय ॥ ६० ॥

पंडित ‘बपरो’^१ एक न बूझै । चातुर दोड परसपर झूझै ।
न कोड जीतै न कोड हारै । बचन ‘बफेरा’^२ ‘चूछिम’^३ डारै ॥६१॥

(मालती वाक्य)

भरे सरोवर के ढिग प्यासे । फले ‘बिरछ’^१ तल रहे उपासे ।
कैसे ताम ‘स्यानपन’^२ कहियै । फुनि ताको उत्तर ‘कहा’^३ लहियै ॥६२॥

(मधु० वाक्य)

फल की भूख न ‘जल के प्यासे’^१ । सैन सैन ते ‘मैं फिरूं उदासे’^२ ।
मेरे बचन जोय चित दीजे । ‘भागै ताकी गल (गल्ल)’^३ न कीजे ॥६३॥

[५७] १. प्र० १ चंद्रायण । २. प्र० १ अच्छे नही । ३. प्र० १ तीही सुबटा
सवर देषी ।

[५८] १. प्र० १ आव सुभर फूनी फलो । २. प्र० ३ पाके ते देष । ३.
प्र० १ देही ।

[५९] १. प्र० १ सोरठा, प्र० २ चंद्रायणो । २. प्र० ३ एक ही नहुं । ३.
• तूं मे यह छुद नहीं है ।

[६०] १. प्र० १ रोये । २. प्र० ३ जो जाकी सगत । ३. प्र० ३ तो ।

[६१] १. तूं १ सबेरो । २. प्र० ३ पबेरा । ३. प्र० ३ सुषम ।

[६२] १. प्र० ३ वृष । २. तूं १ सयानो । ३. प्र० ३ तो ।

[६३] १. प्र० ३ जल की प्यास । २. प्र० ३ के रहूं उदास । ३. प्र० ३ भागी
। ताकी गल ।

मधु 'अपनी सी बहुते धारै'^१ । मालती इह 'मनसा नही हारै'^२ ।
'जैसे मनसा धारै'^३ ससि 'संचै'^४ । पुनि चकोर जैसे रस 'बंचै'^५ ॥ ६४॥

(दूहा सोरठा)

बढै 'सकेत'^१ सनेह भ्रिग सीधन जैसे भई ।

मधु जंपै गति तेह समक देषि 'हो'^२ मालती ॥ ६५॥

[अथ भ्रिग सीधनी को प्रसंग]

(चोपई)

मालती मधु कुं 'बूझि सुनावै'^१ । भ्रिग सीधन की 'मोहि बतावै'^२ ।

कैसे भई सोइ सुनि लीजे । तो फुनि ताको उत्तर दीजे ॥ ६६॥

मधु जंपै हूं 'कितेक गाऊँ'^१ । जो बूझै तो 'तनकै'^२ सुनाऊँ ।

भ्रिग एक आहि काम को मातो । 'भ्रिगनी जूथ'^३ 'फिरै रस रातो'^४ ॥ ६७॥

लीला तिरिण चरै दिन सारो । अति महमंत 'गहो'^१ जीव गारो ।

नव दस भ्रिगनी आही तस (तिस) नारी ।

तामैं हो कारो सिरदारो (सिरदारो) ॥ ६८॥

सीधन द्रष्ट पत्थो 'बो'^१ हरणा । प्रगटो काम लगे 'तिहां'^२ भरणा ।

भ्रिग ईछै मन प्रीतम करणा । 'चलियो वो ठोहर (हरवे)'^३ चरणा ॥ ६९॥

भ्रिग 'केहर की त्रीया जब पाई'^१ । तजी 'देह कहो'^२ चलो पुलाई ।

वेग ही सीधन आही आई । थिर रहो मिरग भाजि 'मति'^३ जाई ॥ ७०॥

[६४] १. प्र० १ अपनी सवहुत धारी, प्र० ३ अपने सर बहुते टारे । २. प्र० ३ मन मे नही धारे । ३. प्र० १ जेम धुरै । ४. प्र० १ सघ । ५. प्र० १ बघ ।

[६५] १. प्र० ३ सगत । २. प्र० ३ जीव ।

[६६] १. प्र० ३ सजद सुनावै, तृ० १ पूछै औसी । २ तृ० १ मई कैसी ।

[६७] १. प्र० १ कीतेक सुनाउ, प्र० ३ कितीयक गाउ । २. प्र० ३ नेक । ३. प्र० १ भ्रग जूथ माझ ।

[६८] १. प्र० ३ गहे ।

[६९] १. प्र० ३ जब । २. प्र० ३ तन । ३. प्र० ३ चल हो ठोर हरे हरी ।

[७०] १. प्र० ३ केहरी तीर जब आई । २. प्र० दे कान । ३. प्र० ३ दिन ।

तेरे जीय की रग्या करिहुं । मनसा वाचा 'दे'^१ चित धरिहुं ।
 एह 'मैं' सत्या करि'^२ भाषी । याको पवन सूर है साषी ॥७१॥
 जो तेरो जीय ठाहर राषै । 'फुनि फुनि'^१ बचन सीधनी भाषै ।
 मेरे 'तन'^२ की 'पीर सुनाऊ'^३ । जो तौ एक 'निहचो'^४ पाऊँ ॥७२॥
 मेरे तन कुं बिरह संतावै । जो तुं मेरी पीढ़ बुझावै ।
 हुं 'तो पै एह'^१ जाचन आई । 'मेरो प्रीतम होइ सहाई'^२ ॥७३॥
 तो 'सु'^१ प्रीतम जो हुं 'पैहू'^२ । क्रीडत 'तोहे'^३ बोहोत सुष दैहू'^४ ।
 भ्रिगनी 'ते'^५ मो पै सुख पैहो । याको प्रीत परेखो लेहो^६ ॥७४॥
 सुन सीधन बोलै अग कारो । हम तो आहिं 'तिहारो'^१ चारो ।
 मोहि तेरो 'बिसवास'^२ न आवै । कपट रूप 'तुं' कित ढिग आवै^३ ॥७५॥
 तुं मेरे मारिग कुं न जाई । मो कुं 'छलन हेत किति'^१ आई ।
 कुंजर 'बिना न सीह'^२ संहारै । मिरग कुं तो 'बिसवास करि'^३ मारै ॥७६॥
 पूरब बिरोध जास सुं होई । ताकी बात न माने कोई ।
 अैसे 'जो'^१ रे पतीजै 'लोई'^२ । 'घृहड काग भई'^३ सो होई ॥७७॥

(अलोक)

परस्पर विरोधानां शत्रुमित्रं गृहे गाता ।

दग्धं काग उलूकानां 'प्रज्वलन्ती'^१ हुताशनं^२ ॥७८॥

- [७१] १. प्र० ३ के । २. प्र० ३ जके मुष साची ।
 [७२] १. प्र० ३ फरफर । २. प्र० २ मन । ३. तू० तपन बुझाऊं । ४. प्र० ३ नेहचो ।
 [७३] १. प्र० ३ तो तुमपे । २. प्र० ३ तु मेरे प्रीतम होत सषाई ।
 [७४] १. प्र० १ मो । २. तू० १ पाऊ । ३. प्र० १ तो । ४. तू० १ में चरणाका पाठ है; तो तुझ प्रीतम बहुत रिझाऊ । ५. प्र० ३ पे । ६. तू० में अर्द्धाली का पाठ है : मेरी प्रीत परेषो लीजे । कंद्रप होत काम रस पीजे ।
 [७५] १. प्र० ३ तुमारो । २. प्र० ३ बिस्वास । ३. तू० १ कित मोहि भजावै ।
 [७६] १. प्र० ३ पुछ्छण कित ढिग । २. प्र० १ वना सीही न, प्र० ३ वन् सिधन । ३. प्र० ३ बिस
 [७७] १. प्र० ३ जे । २. प्र० ३ कोइ । ३. प्र० १ घृहर काम भये ।
 [७८] १. प्र० १ प्रभा जलन्ती । २. प्र० ४ यह छद नहीं है, द्वि० १ मे यह छद बाद में आया है और तू० १, २ मे इसके स्थान पर तथा च० १ में

[अथ घूहड काग प्रसंग]

(चौपई)

सीधनी अग कूं बूझै औसी। घूहड काग भई सो कैसी।
 'कैसे करि'^१ उन वायस मारे। 'वै उनै'^२ गुफा माझि 'करि'^३ जारे॥७१॥
 'अग जपै सुनि सीधनि बानी। जो बूझै तो कहुं कहानी'^१।
 'पंछी जूथ मिले सब आनी। घूहड राज देण कुं ठायी॥८०॥
 'तो लुं काग 'कहां सु'^१ आये। पंछी 'किते एक एकंत'^२ बुलाये।
 समाचार 'उन के जब'^३ पाये। 'तब'^४ कागन अंगुरी मुख 'नाए'^५॥८१॥
 'ऐसी क्रूर'^१ बूधि तुम करिहो। 'पंछी'^२ सबे अखूटे मरिहो।
 राजा गरुड कुं तुम नही जानो। ता ऊपर पै घूहड ठायो॥८२॥
 ताकै 'बल को कोउ मत जपै'^१। तीन लोक जाके डर कपै।
 पच्छी पवन 'सेस पण सलकै'^२। जाकै 'पायन'^३ बसुधा^४ 'धरकै'^५॥८३॥
 'महा सूर न सु कोई पूरै'^१। चरण 'पेलि परबत सिल'^२ चूरै।
 टीटोरी के इंड जे कहिये। सायर 'अंचि रह्यो'^३ छन महिये॥८४॥

इसके अतिरिक्त है : न विश्वासो पूर्वविरोधे शत्रुमित्रकदाचन । दुखदाई
 गउदालक काकस्थ पलय गता ।

- [७६] १. प्र० ३ कैसी विध । २. प्र० ३ वे गुन । ३. प्र० ३ क्यु ।
 [८०] १. तृ० १ में अर्द्धाली का पाठ है : मृग जपे हू केति कह गाऊ । जो
 बूजे तो तनक सुनाऊ ।
 [८१] १. प्र० ३ कहा ते । २. प्र० ३ सब एकत । ३. तृ० उनपै सब ।
 ४. प्र० ३ जब । ५. प्र० ३ लाये ।
 [८२] १. प्र० १ ऐसे क्रूर, प्र० ३ एसी कुंड । २. प्र० ३ पीछे ।
 [८३] १. प्र० १ बलै कोउ न मत जपै, प्र० ३ बलको रमत न कपै । २. प्र० १
 सीस पण सीलकै । ३. प्र० ३ माथे । ४. प्र० ३ डरके । ५. तृ० १ मे
 चरण का पाठ है : जिनके बसुधा मसे थरके ।
 [८४] १. प्र० ३ महासूर सो कोउ सुरे, तृ० १ महा पुरुष सूं कोई न पूरै । २.
 प्र० १ ऐ परवत । ३. प्र० ३ ऐचि रह्यो, तृ० १ अक्सन कियो ।

ऐसी बात काग जब भाषी । पंछी जीव भये सब साखी^१ ।
को समरथ जो बिग्रह करिहै । घूहड राज साज कित करिहै ॥८५॥

(दूहा)

वाइस मतो 'मिटाय'^१ कै पंछी 'चले मिलाइ'^२ ।

घूहड अपने जूथ सुं, 'रहे बैसि एक ठाई'^३ ॥८६॥

घूहड नाम अरि मरदन 'आही'^१ । उन अपनी सब 'सभा बुलाई'^२ ।
एक 'जूथ सब'^३ बैठो आनी । उन सु बोलण 'लागा'^४ वाणी ॥८७॥
मेघ वरन 'काग यहाँ'^१ आयो । उन मेरो सब राज गमायो ।
पछिन काज 'दई'^२ बुधि राइ । वे मेरो रिपु पूरन आइ ॥८८॥
सगरे काग जाइ कै मारो । पीछे काज आपनो सारो ॥
मेघ वरन कूं 'जीवत'^१ धरियो । कै सबै 'मारी'^२ कै सबै मरियो ॥८९॥
चली सेन 'जिहां'^१ काग बसेरो । रुंध्यो ब्रच्छ 'परयो'^२ तिहां घेरो ।
निस अघिआरी वायस भूले । घूहड 'जिहां तिहां थे'^३ 'फूले'^४ ॥९०॥
काग हजार च्यार तिहां मारे । भागे 'और'^१ झूझु ते हारे ।
मेघ वरन उही 'ठोहर छंडे'^२ । फुनि एक विरछ 'आय ते मंडे'^३ ॥९१॥
सबै मिले जिहां बोलि पठाये । मिलि सगरे 'उन ठाहर'^१ आये ।
बोलहु कौन 'मत्र'^२ अब कीजे । दिवस च्यार इहिं ठोहर 'रहीजे'^३ ॥९२॥

[८५] १. तृ० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : ऐसी बात काग जब होइ । सब पछि-
सुवन सुनि रहाइ ।

[८६] १. तृ० १ विडार । २. तृ० १ भए उडान । ३. प्र० ३ रहै बैठो एक
ठाइ, तृ० १ मिलै अष्टै आनि ।

[८७] १. प्र० १ आये । २. प्र० १ सभा मिलाए, तृ० १ सैन बुलाई ।
३. प्र० ३ वोर जुथ । ४. प्र० ३ लागो ।

[८८] १. प्र० ३ इह ठोहर । २. प्र० १ भई ।

[८९] १. प्र० १ जाथन । २. प्र० ३ मारो ।

[९०] १. प्र० ३ तथा । २. प्र० ३ पड्यो । ३. प्र० ३ ते । ४. तृ० १ भूलै ।

[९१] १. प्र० कितेक । ३. प्र० ३ ठोहर छाडी । ३. प्र० ३ जाय के मंडी ।

[९२] १. प्र० ३ वा ठोहर । २. प्र० १ मीत्र । ३. प्र० १ दीजे ।

मीठे बचन 'देहुं जु'^१ साकर । मिलहो (मिलहु) जाय कहो 'तुम'^२ चाकर ।
 'बहुतक आनहु'^३ पावग लाकर । जारहु गुफा मारु सब ताकर ॥१३॥

(अलोक)

आप मादेन भावेन गात्र 'सुपंच बुधीना'^१ ।
 'अरि नासागते नित्य'^२ जथा बह्नी महादुमा^३ ॥१४॥

(चोपई)

सुखिम लता रूप द्रुम चढै । कोमल गात तंतु जन बढै ।
 'सघरो ब्रच्छ'^१ पसरि कै घेरो । पाछै मूल 'समेतो'^२ फेरो^३ ॥१५॥
 इह बिधि काज 'सवन सब'^१ कीजै । 'गुर ती ढरे'^२ तो विष क्यूं दीजै ।
 सब कागन मिलि ऐसी ठाणी । मेघ बरन केरे मन मानी ॥१६॥
 चले काग मिलिबे के काजा । 'आए'^१ जिहां अरि मरदन राजा ।
 'गोसै बैसि'^२ बसीठ पठायो । 'कहियो मेघ बरन मिलिबे कुं आयो'^३ ॥१७॥
 'गये'^१ बसीठ संदेस 'सुनायो'^२ । राजा सुनत बोहोत सुख पायो ।
 'अपनो मंत्री'^४ लेन पठायो । आदर 'मान'^५ बोहोत सुं आयो ॥१८॥
 मेघवरन उही ठोहर आये । राजा मिले अंक उर लाये ।
 कुसल कुसल करि धूछे 'दोज'^१ । बिधि के खेल न जाने 'कोज'^२ ॥१९॥

[१३] १. प्र० १ देही जु, प्र० ३ देहुं जो । २. प्र० ३ हम । ३. प्र० ३ बोहत
 अणहा ।

[१४] १. प्र० १ सलिल बुधवारनै । २. प्र० १ अरि सेना नीति हाचै ।
 ३. प्र० ४ मे यह छद नहीं है ।

[१५] १. प्र० ३ सगली गुफा । २. प्र० ३ समेलो । ३. तृ० १ मे छंद है :
 मेघवर्ण मंत्री सुं कहे । द्रुमबेली कैते द्रुम चढेइ । कोमल गात्रकि एतन
 बढै । सभरै वृछ पछारिकै बैठ्यो ।

[१६] १. प्र० ३ वनिक बुधि, तृ० १ सुखीजो । २. प्र० ३ गुल सुं मरे ।

[१७] १. प्र० ३ आहि । २. प्र० ३ गोसै बैठ, तृ० १ गोसैं बैठि । ३. तृ० १.
 मे चह चरण छूटा हुआ है ।

[१८] १. प्र० ३ गयो । २. प्र० ३ सुनायो । ३. तृ० १ में यह चरण छूटा
 हुआ है । ४. प्र० १ अपनो मंत्री, प्र० ३ अपने मंत्री । ५. प्र० १
 सनमान ।

[१९] १. प्र० ३ दोइ । २. प्र० ३ कोइ ।

अरि मरदन सुं बाइस कहै । मेघ बरन सेवा कुं रहै ।
 देउ ठोर जिहां मंदर समै । निस दिन द्वारै नोबति बजै ॥१००॥
 काग कछो सो घूहड़ कीनू । 'जो'^१ मांगो' सो पहली दीनो ।
 मंदिर 'मिस'^२ काठ 'आने'^३ ठोई । 'जीय'^४ परपंच न जानै कोई ॥१०१॥
 पुरो ढिग काठन को कीनो । गुफा मूँदि करि पावक दीनो ।
 घूहड़ अंधे दिवस न सूझै । गुफा 'मौझि'^१ जरिबरि कै बूझै ॥१०२॥
 'मरत सरलोक'^१ कछो उन असो । पूरब विरोध 'नेह' तिहाँ कैसो ।
 'तेरी'^३ मोहि परतीति न आवै । कपट रूप तू किति ढिग आवै ॥१०३॥
 सीधनि मृग सुं बोलै बानी । तै तो मोहि काग करि जानी ।
 असौ बुद्धि आहि ते (तो) बौरै । जैसे दुद्ध 'झास के (किण्)'^१ धोरै ॥१०४॥
 काग सीप क्युं सरभर होइ । उत्तम मध्यम बूझै लोइ ।
 जो र बकायण बहु फल फलि है । तो सरभर कहा दाख की करिहै ॥१०५॥
 कृषमांडि एक लता कहावै । ताहि 'चचंडा' सरभर 'क्युं'^२ आवै ।
 वै पत्थर 'बांध्या'^३ पति पावै । वै फल चीने पिराण गमावै^४ ॥१०६॥
 सुन त्रिग वचन 'बडुं के'^१ अैसे । धू 'वत'^२ अटल 'जानिये' तैसे^४ ।
 हुं तोसुं पहली ही 'हारी' । वचन टलै तो कुल कुं गारी ॥१०७॥

[१००] १. तृ० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : दियो ठोर सेवा मै रहूँ । सदा काल
 एह द्वारे रहूँ ।

[१०१] १. प्र० १ सो । २. १ मंदिर मिस, प्र० मंदर मांझ । ३. प्र० १ अत ।

[१०२] १. प्र० १ माहि ।

[१०३] १. तृ १. मरता वचन । २. प्र० ३ सनेह । ३. प्र० ३ वै से ।

[१०४-१०५] प्र० १, २ मे ये दो छंद नहीं हैं, किन्तु इनके बिना प्रसंग क्रम
 त्रुटित होता है ।

*[१०४] १. तृ० १ आसव दोउ ।

[१०६] १. प्र० ३ चचीडा । २. प्र० १ कु, प्र० ३ मे नहीं है । ३. प्र० ३
 बाघे । ४. तृ० १ मे यह अर्द्धाली छूटी हुई है ।

[१०७] १. प्र० १ बूझ कै । २. प्र० ३ ज्युं । ३. प्र० १ जाण कै । ४. तृ० १
 में यह अर्द्धाली छूटी हुई है । ५. प्र० १ हारै ।

(१६)

(अलोक)

दुर्जन दुःखिता 'मनसा' पुंसा सज्जने पिनास्ति विस्वासं ।

बाल पयसा दग्धो दधि अपि फूत्कृतं भक्ष्यति^१ ॥१०८॥

लूटे होय चोर 'जहीं घरे'^१ । सो पुनि साध'देखि तिहां'^२ डरे ।

उनके त्रीय औसी ही छाजै । फूकै तक्र 'दूध के'^३ दाभे^४ ॥१०९॥

(दोहा)

थल 'घट्टै'^१ मुष 'मुडि चलै'^२ हाहा 'करत घीघाय' ।

सुनि हो भ्रिग तूं 'मो'^४ बचन ताकुं सीघ न खाय ॥११०॥

जे पसु भूझ षेत नहीं छुडै । सीघ चरन आय के मंडै ।

'वसी'^१ होय तो ताहि न मारै । 'भद्र जाति गज गिरि सैं डारै'^२ ॥१११॥

भागो जाइ ताहि जो गहिये । तो फुनि सीघ नाम कित'लहिये' ।

भागो जाय देखि 'जो'^२ गजै^३ । औसे करम करत कुल लज्जै ॥११२॥

(अलोक)

असारस्य 'संसारस्य'^१ वाचा सारस्य देहिना ।

वाचा विचलता 'येन' सुकृतं तेन हारितं ॥११३॥

(चौपई)

'वाचा बंध'^१ 'सार करि गहिये'^२ । झूठे वचन स्वारथ कुं कहिये ।

झूठे वचन सो ही नर 'कहै'^३ । 'जो'^४ अपने स्वारथ कुं चहै^५ ॥११४॥

[१०८] १. प्र० ४ में यह छंद नहीं है ।

[१०९] १. प्र० १ नहीं घेरे, प्र० ३ जिहा घरे । २. प्र० १ देश ही । ३. प्र० १ छारा कै । ४. प्र० ४ में यह छंद नहीं है ।

[११०] १. प्र० १ घाटे, तृ० १ छुडै । २. तृ० १ त्रण चरै । ३. प्र० ३ कहे तो जाय । ४. प्र० ३ मुझ ।

[१११] १. प्र० ३ एसे । २. तृ० १ भागेलू कू सिंघ न मारे ।

[११२] १. प्र० १ कही । २. प्र० ३ के । ३. तृ० १ मे चरण का पाठ है : ओर गरजत सुनी फुनि गरजे ।

[११३] १. प्र० ३ सरीरस्य । २. प्र० १ डोहौ ।

[११४] १. प्र० १ चरचा वधे, तृ० १ जे नर वाचा । २. तृ० १ सारहि गनिये । ३. प्र० ३ कहीइ । ४. प्र० १, ३ सो । ५. प्र० ३ अपनो सुक कुं दहीये । ६. तृ० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : झूठे वचन मन माहि विचारे । तो आपन सब श्रुत हारे ।

‘सुनत वचन त्रिग’^१ सच पायो । तजि कै त्रास सीधन पै आयो ।
 अब तूं ‘कहे’^२ सो ही हुं करिहूँ । तो‘प्रतीति’^३काहूँ‘सु’^४न डरिहूँ ॥११५॥
 सीधन त्रिग ल्यायो उर रसियो । तुं तो प्रान‘नेह मन’^१ बसियो ।^२
 तो कुं दीनी मैं या देही । तूं पूरब सुख परम सनेही ॥११६॥
 मो रसलत तूं ले सुखकारी । त्रिगनी‘भली’^१कै सीधनि नारी ।
 याको प्रीति परेषो ‘लीजे’^२ । कंद्रप कोटि ‘कामरस’^३ पीजे ॥४११७॥
 सीधन के तन बिरहा ‘भरै’^१ । त्रिग की जिय की धरक न‘टरै’^२
 मिटै न बिरह सीधन की जो लुं । प्रगटै नहीं कामरस तो लुं ॥३११८॥

(दूहा सोरठा)

तो तन औरै चाह : मो ‘तन’^१ कछु औरै ‘चही’^२ ।
 ज्यु गूंगे की गाह : ‘मन की तो’^३ मन मैं ‘रही’^४ ॥११९॥

(चोपई)

तो तन चाह सुरत सुख मडै । मेरो जिय की धरक न छंडै ।
 ‘घोखै’^१ प्रान ‘काल सुष’^२ आसै । ज्यु^३दीपगप्रगट्यो तम नासै ॥४१२०॥

- [११५] १. प्र० १ सत वचन मर्व । २. प्र० १ कही । ३. तृ० १ प्रताप ।
 ४. प्र० ३ सा ।
- [११६] १. प्र० ३ स मो तन । २. तृ० १ मे अर्द्धाली है: सिधनि मृगकु अक
 उर लायो : तू तो प्रान मोहि भायो ।
- [११७] १. प्र० १ भलै । २. प्र० १ दीजे । ३. प्र० १ होय सुष । ४. प्र० ४,
 द्वि० १ में यह छंद नहीं है ।
- [११८] १. प्र० १ बिरहा भारे, तृ० १ बिरह सतावै । २. तृ० १ जावै । ३.
 प्र० १ मे द्वितीय अर्द्धाली नहीं है, तृ० १ में अर्द्धाली है : जरना बहुत
 सिंध की तौलूँ : ...काम मृगा की जौ लूँ ।
- [११९] १. प्र० ३ मन । २. प्र० ३ दहे । ३. प्र० १ मन्ही की । ४. प्र० ३ रहे ।
- [१२०] १. प्र० १ धरकै । २. प्र० १ काम सुष, प्र० ३ काल सुं । ३. प्र० १
 में ‘पतंग’ । ४. तृ० १ में अर्द्धाली है : घोखै काम कला गडै सासा :
 ज्युं रवि तेज तिमिर सव नासा ।
 म० वार्ता २ (११००-६३)

धोखे 'ध्यान धरो'^१ नहीं सूझै । धोखे सूर न रन मैं भूझै ।
धोखे 'काम अगन'^२ नहीं बूझै ।^३ धोखे पंडित अखिर नहीं सूझै ॥१२१॥

(सीघन वाक्य)

'अनदेखे बिस खाये मरही'^१ । 'भूझन काज काहा ते डरही'^२ ।
मरबो 'टरै'^३ न बिन 'अत'^४ 'मरै'^५ । निस्वारथ 'बंधो'^६ 'कित करै'^७ ॥१२२॥

(कवीस्वरो वाच^१)

बोहोत कथा कहत रस फीको । 'आगम समीयो'^२ सरस अति नीको ।
सीघनि भ्रिग बहु भांति रिझायो । जीय को सब संदेह मिटायो ॥१२३॥
बस कीनौ 'रति के रसि'^१ फूझो । 'भ्रिग राचो घर की त्रिया'^२ भूझो ।
अति उमंग 'ढोलै'^३ मद मातो । भ्रिग सीघन ऐसे रस रातो ॥१२४॥
बढ्यो प्रेम कछु कहत न आवै । एक एक बिन प्राण गमावै ।
सीघन आरति 'अंछ्या'^१ पावै । भ्रिग कारन 'बहु'^२ 'जीव संतावै'^३ ॥१२५॥
पहली डरत चरत नहीं चारो । अब तो भयो 'सींह'^१ लुं गारो ।
संगति के फल पायो पूरो । सूर के 'डिग'^२ कायर सूरु ॥१२६॥

[१२१] १. तृ० १ दंभ धरतो । २. प्र० १ आनै काम नही, प्र० ३ आन काद्रप न । ३. तृ० १ मे चरण है : धोखे काम धाम नवि सूझै ।

[१२२] १. प्र० ३ अनदेखे बिस खाए मरही, तृ० १ बिन बूझे विष खाइ कै मरै ।
२. प्र० ३ तो लूं काम काज कित डरही, तृ० १ भूझन काज कहा लूं डरै । ३. प्र० ३ मिटे । ४. प्र० १ मरता । ५. तृ० १ मरिये ।
६. प्र० ३ धोषे, तृ० १ धोखो । ७. तृ० १ कित करिये ।

[१२३] १. प्र० २ सिघनि वायक, प्र० ३ कवी वायक । २. प्र० आगे समजो ।

[१२४] १. प्र० १ रति के सर, प्र० ३ रति के रसी, तृ० १ अरु बहुते ।
२. प्र० ३ चतुराई अपनी सब, तृ० १ चंचलाइ सब आपनि ।
३. प्र० ३ फिरे ।

[१२५] १. प्र० ३ अंघ्या । २. प्र० १ बोहो, तृ० १ कछु । ३. तृ० १ मइ है बड़ाइ ।

[१२६] १. प्र० १ सीरी । २. प्र० ३ संग ।

‘जित तित मिरग देखि भ्रिग दोरै’^१ । सींघनि ‘धाइ धाइ’^२ उर फोरै ।
 जे सुख पाये ‘सहज की’^३ करनी । त्रिण ते बज्र करै ‘बिधि’^४ करनी ॥^{१२७}॥
 आस पास पसु रहै न कोई । सींघनि मिरग ‘रहै वन’ दोई ।
 अैसे दिवस भये तिहां केते । ‘दोऊ मास न एको’^२ चेते ॥^{१२८}॥
 तो लुं सीघ सयल ते आयो । सींघन ताको ‘आहट पायो’^१ ।
 किती एक दूर ‘लुं’^२ साम्ही आई । कीनो आदर बोहोत बडाई ॥^{१२९}॥
 इण जाण्यो तोलुं भ्रिग जैहै । भोरो ‘जात’^१ सींघ कित खैहै ।
 भ्रिग ‘डर डारि ढोल ज्यु’^२ फूलो । चपलाई अपनी सब भूलो ॥^{१३०}॥
 गीधो मरै कै बीधो मरै । ताको दोस ‘कोन’^१ सिर धरै ।
 हलै न चलै ‘टरै नही’^२ टार्यो । आयो सींघ दोरि भ्रिग मार्यो ॥^{१३१}॥

(मालती ‘वाक्य’^१)

सुनि मधु ‘तूं रे’^२ कहत बिसार्यो । ऐसे नही सींघ भ्रिग मार्यो ।
 मोसूं ‘असौ’^३ प्रपंच न कीजे । एह ‘प्रसंग’^४ मोपै सुनि लीजे ॥^{१३२}॥
 जा दिन सींघ ‘सयल’^१ ते आयो । सींघन ‘भ्रिग ले दूर दुलायो’^२ ।
 क्री च्यारि सुख ‘सूं रति’^३ कीनो । फुनि जल पीवन कूं ‘चित’^४ दीनो ॥^{१३३}॥

[१२७] १. प्र० १ विम्रघ देशी मरघ दोरो, प्र० ३ तित नित व देषि मृग
 दोडे । २. प्र० १ घाउ मास, प्र० ३ घाउ घाव । ३. प्र० १ सहजै सुष,
 प्र० ३ सीहकी । ४. प्र० ३ कित । ५. तृ० १ में यह छंद नहीं है ।

[१२८] १. तृ० १ वन बिलसैं । २. प्र० ३ दोऊ मे कोई एक न ।

[१२९] १. प्र० १ ताको आहार पायो, प्र० ३ ताकुं आह लपटायो ।
 २. प्र० १ क ।

[१३०] १. प्र० ३ जान । २. प्र० १ डरत बोलै यु । ३. तृ० १ में अर्द्धाली है ।
 • मृग डर डारि दियो रस फूलै : चंचलाइ तजि के अति फूलै ।

[१३१] १. प्र० १ कोणै । २. प्र० १, २ टेरया न ।

[१३२] १. प्र० ३ वायकं । २. प्र० ३ तोहे । ३. प्र० ३ इतनो ।
 ४. प्र० ३ कथा ।

[१३३] १. प्र० १ सहल । २. प्र० ३ मृगकुं आह लपटायो । ३. प्र० ३
 सुरत । ४. तृ० १ सुष ।

नदी तीर चलि आए 'दोई'^१ । भ्रिग बैठ्यो द्रग दाख्यो 'सोई'^२ ।
 सीधन 'बरियां'^३ दोय खंखारी । आई 'मोति'^४ टरै नही टारी ॥ १३४॥
 'देखत सीधन'^१ भागो हरणा । मूरख बूधि ताही 'कित'^२ करणा ।
 हाइ हाइ करि मन मैं रोवै । सीधन 'मलिन'^३ बदन मुख जोवै ॥ १३५॥
 जारुं जीतब काज 'काहा आवै'^१ । मोहि 'देखत भ्रिग'^२ प्राण गमावै ।
 हुं पापणी अतनो नही चीनी । करता कुंन 'कुबुधि मोहि दीनी'^३ ॥ १३६॥

(दूहा सोरठा)

मूए पर मरि जाए : को जानै केसी भई ।
 सांची प्रीति सुनाय : भ्रिग 'नयना देखत मरुं'^१ ॥ १३७॥
 है मरबो एक बार : जीवन को लालच 'करै'^१ ।
 'एह न होए'^२ करतार : जो 'मन कछु अंतर धरुं'^३ ॥ १३८॥
 मो गल बंधी प्रीति : भ्रिग कू तो सोभा भई ।
 अब मरबे की रीति : अंतर 'जिन पारो'^१ दई ॥ १३९॥

(काव्य)

उदयति यदि भानुः पश्चिमायां दिशायां :
 विकसति यदि पद्मं पर्वताग्रै शिलायां ।
 'प्रचलति यदि'^१ मेरुः 'शीततां'^२ याति वह्निः
 'न चलति विधि विसाखा'^३ यावन्ती कर्म रेखा ॥ १४०॥

[१३४] १. प्र० ३ मे पत्र त्रुटित है । २. प्र० ३ सोऊ । ३. प्र० बेरी ।
 ४. प्र० ३ म्रत ।

[१३५] १. प्र० १ सिंघन देखत, प्र० ३ सिंघन देख्यो । २. प्र० ३ कहा ।
 ३. प्र० १ मिलिती ।

[१३६] १. प्र० ३ कहावे । २. प्र० ३ देखे भ्रिग, तृ० १ देखे जिन । ३. प्र० ३
 बुद्ध अह कोनी ।

[१३७] १. प्र० ३ पेहली सीधनी मुई ।

[१३८] १. प्र० ३ कर । २. प्र० ३ इह न देही । ३. तृ० १ मृग पेहली
 ना मरुं ।

[१३९] १. प्र० ३ जन पाडे ।

[१४०] १. प्र० १ प्रजलती नदि । २. प्र. ३ सीतला । ३. प्र० ३ तदपि न
 चलतीय । ४. प्र० ४ में यह छंद नहीं है ।

(२१)

(चोपई)

बिधि के अंक लिखे क्रम जोई । ता में कछु न अंतर होई ।
 त्रिग की मोत सींघन को साको । चित दे 'सुनियो'^१ समीयो ताको ॥१४१॥
 बेठो हरिण सीह नै देख्यो । मानुं मूवो करिकै बेल्यो ।
 जीवतो हरण न बेठो रहै । कासी 'बीहु'^१ सीह की सहै ॥१४२॥
 केहर मन में 'एह'^१ 'बिचारो'^२ । तोलुं त्रिग 'बेठो र खंखारो'^३ ।
 सुनतहि सीह कोपि चढि आयो । कर ग्रहि 'ऊंचो हतन कूं'^४ धायो ॥१४३॥
 तोलु सींघन आडी आई । परी दौरि 'सीघन'^१ पै जाई ।
 फूटे सींघ दोउ उर आगै । निकसे 'पीठ सेल से'^२ लागै ॥१४४॥
 'चूको'^१ त्रिग उठ्यो सिर झारी । 'सींघनि गिरी मोट सी डारी'^२ ।
 निकसी आंत करेजो 'फूट्यो'^३ । 'बचन प्रमाण कियो तन छूट्यो'^४ ॥१४५॥
 परबत सिला परै 'ज्यू'^२ आई । मानुं बीज सरग ते व्याई (धाई) ।
 'बंदर'^२ गिरै ब्रच्छ तैं जैसै । सींघन मन तन 'कीयो तैसै'^३ ॥१४६॥
 सती न कोउ असो सत करै । ज्युं पतंग दीपग तनु जरै ।
 अैसे सूर न रन में लरै । सींघन करी 'जो'^१ कोउ न करै ॥१४७॥
 'सींघन कारण मूड 'पछारयो'^१ । तो लुं सींघ आइ त्रिग माख्यो ।
 'असी'^२ गति 'किहु'^३ कारन कीनी । बचन पुकारि 'धाइ'^४ एक दीनी ॥१४८॥

[१४१] १. प्र० ३ सुनो ।

[१४२] १. तृ० १ वहु ।

[१४३] १. प्र० १ द्रोह । २. तृ० १ विचारी । ३. प्र० ३ उह वेर खखाख्यो,
 तृ० १ उठो सिंघ झारी । ४. प्र० १ उचे तान कै ।

[१४४] १. प्र० १ सीहीन । २. प्र० ३ आंत पीठसैं, तृ० १ पीठि सिंग सी ।

[१४५] १. प्र० ३, तृ० १ चमको । २. तृ० १ तौलू सींघ उठो झुझकारी ।
 ३. तृ० १ फूटे । ४. तृ० १ मानौ प्रान सग लै सठकै ।

[१४६] १. प्र० १ जू । २. प्र० ३ बानर । ३. प्र० ३ कीनो अैसे ।

[१४७] १. प्र० ३ ज्युं ।

[१४८] १. प्र० ३ पखाख्यो । २. प्र० ३ एसी । ३. प्र० १ कही ।
 ४. प्र० १ धाई ।

(२२)

(दूहा सौरठा)

मुह देवै की प्रीति : असी तो सब कोह करै ।

एह फुनि उलटी रीत : अगि ऊपरि^१ सीघनि मुई ॥१४१॥

(अलोक)

जा दिनं पतिते बिंदु माता गर्भेषु निर्मित ।

ता दिनं लिखिते 'देवा'^१ हानि वृद्धि सुखं दुखं ॥१५०॥

(चोपई)

हानि विद्धि सुख(सुख)दुख 'दोई'^१ । 'सो क्युं मिटै बज्र मसि धोई'^२ ।

'रोए हंसे न मानै कोई'^३ । 'होयी होए सो सिर परि'^४ होई ॥१५१॥

इडं कहि सीह गयो बन छंडि । मालती कथा कही एह मडि ।

'सुनि मधु तू ए'^१ कहत बिसारो । 'असी'^२ भई तबै अगि माख्यो ॥१५२॥

(दूहा सौरठा)

मधु मरिबो एक बार : 'अवर'^१ बडुं कै कंध चढि ।

सबद 'रहे'^२ संसार : अगि ऊपरि सीघनि मुई ॥१५३॥

(मधु वाक्य)

सीघनि 'एह केहि कारन'^१ कीनो । 'इनमै'^२ सुख संतोष काहा लीनो ।

त्रिया की 'बुद्धि'^३ विवेक न चीनो । अगि मराय 'आप'^४ जीय दीनो ॥१५४॥

(मालती वाक्य)

एह उह प्रीति न होइ : 'स्वान सियारे'^१ 'जो'^२ धरै ।

सीघनि कीनी सोइ : फुनि सीघनि होइ सो 'करै'^३ ॥१५५॥

[१४६] १. प्र० १ उपरी ।

[१५०] १. प्र० ३ विधाता ।

[१५१] १. प्र० ३ सोड । २-३. प्र० ३ मे ये दो चरण नहीं हैं । ४. तु० १
तेरी रजा होइ सू ।

[१५२] १. प्र० ३ मधु मोसु तु । २. प्र० ३ एसे ।

[१५३] १. प्र० १ आवै । २. प्र० ३ रह्यो ।

[१५४] १. प्र० ३ इह कारन कहा । २. प्र० ३ आमै । ३. प्र० १ गति ।
४. प्र० ३ अपनो । ५. तु० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : त्रिया की
बुद्धि बहुत निटुराई : आपु मरी अरु अगि कूं मराई ।

[१५५] १. तु० १ सुनो सयाने । २. प्र० ३ नहीं । ३. तु० ना करै ।

मधु समीयो अति 'कहि'^१ समझायो । मालती के मन एक न 'भायो'^२ ।
वै ही लच्छिन 'फुनि फुनि'^३ मडै । भोरी महरी टेक न छंडे ॥१५६॥

(मालती वाक्य)

मधु 'कारन फिर'^१ बानी कहै । तू मेरे जिय की एक न लहै ।
बिरह अगन 'मो तनहि लगाई'^२ । 'फुनि एते ऊपर दुखदाई'^३ ॥^४ १५७॥
मो तन मध्य सकल तू बसै । मो तन चितवत 'एक'^१ न हसै ।
मैं 'तन मन सब तो पर'^२ दीनो । कनक सुहाग लों तैं कित कीनो ॥^३ १५८॥

(मधु वाक्य)

मधु जपै मालती अयानी । 'सीष्या'^१ बुद्धि न होय सयानी ।
'जित एक'^२ प्रेम दूर मुख दरसै । 'तेतो एक प्रेम'^३ नाही तन परसे ॥^४ १५९॥
चंद चकोर कुसुद कुं देषो । फुनि अंबुज कवि(रवि ?)राज 'कुं'^१ पेषो ।
'ज्यूं सिषि मेघ'^२ दरस सुख पावै । परसे ते सब भरम गुमावै ॥ १६०॥

(मालती वाक्य)

भर्यै मालती मनोहर मुरिषा । औसो बरत ग्रहै 'क्युं पुरिखा'^१ ।
मैं तेरा जीय की सब जानी । तैं तो नूत कुमर की ठानी ॥ १६१॥

(मधु वाक्य)

मालती कुं मधु 'बूझै औसो'^१ । नूत कुमार 'को'^२ समीयो कैसो ।
कैसे भई सोइ सुनि लीजे । तो फुनि ताको उत्तर दीजे ॥ १६२॥

[१५६] १. प्र० १ कहै । २. प्र० ३ भाई । ३. प्र० ३ फिर फिर ।

[१५७] १. प्र० १ करने की । २. प्र० ३ मोहि सतावे । ३. प्र० ३ दाघा
ऊपर लूण लगावे । ४. तृ० १ मे यह छंद नहीं है ।

[१५८] १. प्र० ३ नेक । २. प्र० ३ इतनो मन सब तोहि । ३. तृ० १ मैं यह
छंद नहीं है, छूटा लगता है ।

[१५९] १. प्र० ३ सीषे । २. प्र० ३ जेतो । ३. प्र० ३ तेतो सुष । ४. तृ० १ मे
अर्द्धाली है : जो सुख होइ दूर मुख दरसे : ते सुख नाही अंतर परसे ।

[१६०] १. प्र० १ कुन । २. प्र० १ जूं सुप मीथु, प्र० ३ जुं सषी घन,
तृ० १ सिषर मोर जर ।

[१६१] १. प्र० १, २ क्यु मुरषा, तृ० १ कोउ पुरुषा ।

[१६२] १. प्र० ३ पूछे एसे । २. प्र० १ की ।

अपत कुमर कनोज को राजा । करण नाम ते 'सब जुग'^१ बाजा ।
 'उन एक 'विपरीत'^२ ब्रत लीनो । असो काहुं न कबहुं कीनो ॥१६३॥
 करै ब्याह त्रिया भोग न 'करही'^१ । उलटी रीति एह मन 'धरही'^२ ।
 जो अबला आय प्रथम कर गहै । तासूं सेम रमन की कहै ॥१६४॥
 सगरी निस बैठे ही 'बीतै'^१ । एक एक 'तो नाही चीतै'^२ ।^३
 मुख तैं बचन न कोऊ 'कहै'^४ । जुं गूरो की 'गाह मन मै रहै'^५ ॥१६५॥
 'उह'^१ जानै मेरो कर 'ग्रहै'^२ । 'त्रिया के मन कछु औरी बहै'^३ ।
 अबला प्रथम एतो कहा जानै । नर कूं तो नाहर करि ठानै ॥१६६॥
 एक दिवस एहि बिधि कै ब्याहै । दूजे अवर 'दूसरी चाहै'^१ ।
 तासुं फुनि औसी बिधि 'करहै'^२ । 'तजै नारि जिव संक'^३ न 'धरहै'^४ ॥१६७॥
 युं ही करत साठि त्रिया ब्याही । फुनि दूजी कोउ उवर न 'चाही'^१ ।
 अधकूप मंदिर में 'नावै'^२ । तारा कुंची 'ताहि बनावै'^३ ॥१६८॥
 बिन अपराध त्रिया 'नै'^१ दुष दीनो । 'भांडन'^२ बहुत 'भंडवानो'^३ कीनो ।
 अपकीरति चिहु दिस लुं दोरी । करण नाम कोइ 'लहै न कौरी'^४ ॥१६९॥

[१६३] १. प्र० ३ जग तदि । २. तृ० १ अपुरब ।

[१६४] १. प्र० २ करे । २. प्र० ३ घरे ।

[१६५] १. प्र० ३ चितवे । २. प्र० ३ साहमो नहीं चितवे । ३. तृ० १ मे
 अर्द्धाली है : रैन समे बैठी रहे इव सोभया : मुख सों कबहु न बोले सरभया
 ४. प्र० २, तृ० १ बोले । ५. प्र० १ गाह मन ही की मन मै रहै, प्र० २,
 तृ० १ परे (सी—तृ० १) गाह न बोले, प्र० ३ गाह मन की मन
 माहे रहे ।

[१६६] १. प्र० १ वू । २. प्र० १ गहै ई । ३. तृ० १ दूजे दिवस दूसरी ब्याहै
 (तुल० १६७.१) ।

[१६७] १. प्र० १ दूसरै चाहै, प्र० ३ दूसरी ब्याहै । २. प्र० ३ करै, तृ० १
 करिहै । ३. तृ० १ तीजै नारी कहुनो । ४. प्र० ३ घरै, तृ० १
 घरिहै ।

[१६८] १. प्र० १, २, ब्याही । २. तृ० १ नाइ । ३. तृ० १ तिहा दी राइ ।

[१६९] १. प्र० ३ कुं । २. प्र० १ माड, प्र० ३ भाटन । ३. प्र० १ उन
 भंडवा । ४. प्र० १ लह न गोरी ।

चली बात सोरठ मै आई । सूरसेन 'नरपति'^१ सुनि पाई ।
 बिन अपराध साठि त्रिया छंडी । जीवत भरतार भई सब रंडी ॥१७०॥
 'सगरे'^१ नगर लोक शुं कहै । फुनि 'रनवास'^२ मांस सुधि लहै ।
 सूरसेनि की 'धी ही'^३ कुवारी । पदमावती नाम 'तसु'^४ प्यारी ॥१७१॥
 उन एह बात श्रवन सुनि पाई । करण वरण 'कु'^१ मनसा धाई ।
 सखी 'बुलाए तात पै पठाई'^२ । कहियो पदमावती एह 'दढाई'^३ ॥१७२॥
 करणराह कुं निहचे बरिहूं । दूजे बचन नाहि चित धरिहूं ।
 तात बिचार एह सुनि लीजे । श्रवन सुनत कछु बिलब न कीजे ॥१७३॥
 सखी चलि 'बेग'^१ राह पै आई । 'नूप'^२ के सरवन बात सुनाई ।
 पदमावती करण कुं वरिहै । नातर प्राण घात कै मरिहै ॥१७४॥
 पठाई मोहि कहन कुं आई । 'कंवरी तुम्हारी एह उपाई'^१ ।
 कै याको मोहि उत्तर दीजे । कै तो जाय आप सुधि लीजे ॥१७५॥
 राजा सुनत महल मै आयो । अपनो सब परवार बुलायो ।
 भइया बंध कटुंब 'अर रानी'^१ । बोलै 'सूर'^२ सबन सुं 'बानी'^३ ॥१७६॥
 पदमावती 'कहि मोहि पठाई'^१ । करण 'वरण'^२ कुं मनसा धाई ।
 तुम सगरे मिल बरजो जाई । निस्वारथ ए कौन बढाई ॥१७७॥
 'सगरी नारि'^१ ब्याह करि छंडी । जानि बूझि तूं तापरि मंडी ।
 औसो बूझि न कीजे 'बारी'^२ । आप हानि अर कुल कु गारी ॥१७८॥

[१७०] १. प्र० ३ नृप ने ।

[१७१] १. प्र० २ सषजे । २. प्र० ३ नृपवास । ३. प्र० धीअ । ४. प्र० ३ अत ।

[१७२] १. प्र० ३ की । २. प्र० ३ पठाए तात पे जाई, तृ० १ बुलाय ततकाल पठाई । प्र ३. १ ठाई ।

[१७४] १. प्र० १, २ में यह शब्द नहीं है । २. प्र० ३ राय ।

[१७५] १. प्र० ३ कुमरी तुम्हारी एह वताई, तृ० १ तूम कुमरि येह बुद्धि उपाई ।

[१७६] १. प्र० ३ ने रानी, तृ० १ सब नारी । २. प्र० ३, तृ० १ राय । ३. तृ० १ बारी ।

[१७७] १. प्र० १ एहे उपाई । २. प्र० ३ ब्याहि ।

[१७८] १. प्र० ३ सखली राणी । २. प्र० ३ बाइ ।

सषी मिलि जाए कुमारी कुं बूझै । पदमावति 'तो कुं'^१ काहा सुझै ।
 'प्रिथी'^२ मांझ नही कोइ राजा । करण वरो सो 'कौन के'^३ काजा ॥१७१॥
 जाकै ग्रह 'त्रियकुं'^१ सुख नाही । तूं केहि कारण ईछै तांही ।
 बड़े बड़े राजन की बारी । वै अपनो भव 'जूवा'^२ हारी ॥३१८०॥
 तिहां जाये 'तुम'^१ काहा सुख पैहो । पाछे ठग मूरी सी खेहो ।^२
 कह्यो मान 'सगरे'^३ युं कहै । हरिल को लकरी कित गहै ॥१८१॥
 पदमावती सवनन सुनि कहै । करता की गति कोउ न लहै ।
 मांगत सुख(सुख)पाव नही कोई । बिन मांगे दुख 'दूर न होई'^१ ॥२१८२॥
 मात पिता बपरे कहा करिहैं । लिखे कर्म सो ही फल 'परिहैं'^१ ।
 हूं काहू को कह्यो न करिहूं । मन मेरो सो ही बर 'बरिहूं'^२ ॥१८३॥

(दूहा)

मन कपूर की एक गति : कोई^१ कहो हजार ।

'कंकर'^२ कचन 'तजि रुचै'^३ : गुंजा मिरच अनुसार ॥१८४॥

कुमरी 'जनमि'^१ लता ज्युं बाढै । सुख दुख फरम आपनो काढै ।
 तुम मो कुं बरजो 'जिनि'^२ कोई । भला बुरा कछु होइ स होई ॥१८५॥
 मगर मकोरा हरियल काठी । त्रिया की गति 'इण हूं तें'^१ माठी ।
 कै तो अपनो जानो करै । 'नातर'^२ प्राण घात करि मरै ॥१८६॥

[१७६] १. प्र० ३ तोहे । २. अ० ३ प्रथवी माहि । ३. प्र० १ कोण ।

[१८०] १. प्र० १ त्रिया । २. प्र० ३ युंही । ३. तृ० १ में यह अर्द्धाली नहीं है, छूटी लगती है ।

[१८१] १. प्र० ३ तु । २. तृ० १ में यह अर्द्धाली नहीं है, छूटी लगती है ।
 ३. प्र० ३ सघरे ।

[१८२] १. तृ० १ लहै पुरनरु । २. तृ० १ मे यहाँ १८३. ४ अतिरिक्त रूप से आया हुआ है ।

[१८३] १. प्र० १ पैहै । २. प्र० १ वरहू ।

[१८४] १. प्र० ३ कोऊ । २. प्र० ३ कुचर । ३. प्र० १ तू ज रुचै, प्र० ३ भी रुचै, तृ० १ तम रुचै ।

[१८५] १. प्र० १ जनम, प्र० ३ मन मै । २. प्र० १ जन, प्र० ३ मन ॥

[१८६] १. प्र० १ इण सू । २. प्र० ३ नही तो ।

बचन कुमरी के युं सुनि पाये । 'नूपति सूर सबै'^१ समझाए ।
 बिप्र बुलाए नारेख पठायो । सबै मंडाण ब्याह को ठायो ॥१८७॥
 लगन महरत 'सोधि पठायै'^१ । उत तै करण 'ब्याहन कुं आयै'^२ ।
 मडफ 'परसि महल में पैठौ'^३ । पाणि ग्रहण हथलेयो 'बैठौ'^४ ॥१८८॥
 फुनि चोरी स 'फटुकना'^१ कीनू । बोहतक 'सड'^२(?) दाइजो दीनू ।
 कीनू सरस आचार विचारा । 'जसौ अपने'^३ कुल बिंवहारा ॥१८९॥
 महल अटारी सूधै 'ओपी'^१ । अगर 'चंदन'^२ धूप सूं धूपी ।
 मिलि रणवास वैस(?)इक(?)ठाई । पदमांजती 'सोवणै'^४ 'पठाई'^५ ॥१९०॥
 करण कुसम सेक सुखकारी । कुंवरी जाय तिहां अनुसारी ।
 'पीठी'^१ गहि पाटी 'रख आरी'^२ । 'पिलग'^३ टेक कै बैठी बारी ॥१९१॥
 चैनरेखा सखी चेजे लागी । निरषत नयन सबै अम भागी ।
 'पोहर'^१एक'लु'^२'लच्छन चीने'^३ । 'जैसे'^४ आनि भाकसी 'दीने'^५ ॥१९२॥
 'बोलै नही डोलै नही कोई'^१ । चित्र 'संवार'^२ धरे मानुं दोई ।^३
 सूधे पान न कोई फरसै ।^४ मानुं 'अंग दाभवे'^५ तरसै ॥१९३॥

[१८७] १. तृ० १ नृप मलि सबे ।

[१८८] १. प्र० ३ सोभि पठायो, तृ० १ सोधि लषायौ । २. प्र० ३ व्याहन कुं आयो, तृ० १ ब्याह को आयौ । ३. प्र० ३ रचि चोरी मे बैठो । ४. प्र० १, २ पैठो ।

[१८९] १. प्र० ३ पनोठा, तृ० १ फुटकना । २. प्र० ३ तिहां । ३. प्र० ३ जेसे जाकें ।

[१९०] १. तृ० १ लीपी । २. प्र० ३ कपूर । ३. प्र० १ सैव पठाई, प्र० ३ वे इह ठाई । ४. प्र० १ सोणै, प्र० ३ सुणेर । ५. तृ० १ नार पठाई ।

[१९१] १. प्र० ३ पटी । २. प्र० १ रखारी, प्र० ३ दिग आरी । ३. प्र० ३ पलंग ।

[१९२] १. प्र० ३ पेहर । २. प्र० १ तै । ३. प्र० ३ निसन चीनी । ४. प्र० ३ ओसे । ५. प्र० ३ दीनी ।

[१९३] १. तृ० १ मे चरण है : हाले न डोलै न बोलै न सरै । २. प्र० ३ समान । ३-४. तृ० १ में ये दो चरण नहीं हैं । ५. प्र० ३ अंग दाह जव ते, तृ० १ अंग की दाभवे ।

चैनरेखा पै 'सह्यो न जाए'^१। बचन भेद एक 'काक सुनाए'^२।
 पदमावती सरब रस खोई। भीजत कांवरी भारी होई ॥१६४॥
 यह तो 'साठ'^१ 'साठ जब'^२ छंडी। तू 'इकसठमी तास'^३ पर मडी।
 'साठ'^४ ही साठ 'अहरनिस(?)'^५ जागै। 'बासठमी बहोर 'कून कु'^६ लागै ॥१६५॥
 मन मुं समरि दैह संवारी। 'फुनि युं ही रहत दीसत है बारी'^१।
 'कै तो कोऊ बूधि बिचारो'^२। कै तो ब्रषभ कुं 'षूटा गारो'^३ ॥१६६॥

(दूहा)

प्रथम समागम रैण की : जिय जिन डरपै बाल।
 भोर भए पछितायहो : वे साठन के छु 'हवाल'^१ ॥१६७॥
 षटरस स्वाद ब्रषभ काहा जानै। अंधो काहा पंचरंग बषायै।
 जा मैं बीती सोई बूमै। बिरह बिथा बैद कुं कहा सूमै ॥१६८॥

(पदमावती वाक्य दूहा)

सेभ 'सवारी पोहोप रचि'^१ : सूधे 'तिलक'^२ संभार।
 अवर कहा 'कछु'^३ युं कहूं : आव 'बैल मोहे'^४ मार ॥१६९॥
 छक्कै पंजै मै धरी : पीव पासो गहि डार।
 अवर कहा 'कछु'^१ युं कहूं : आव 'बैल मोहि'^२ मार ॥३२०॥

- [१६४] १. प्र० ३ सही न जाइ, तू० १ रह्यो न जाई। २. प्र० ३ करक सवाइ, तू० १ कछ्यो सुणाई।
- [१६५] १. प्र० ३ सब। २. प्र० ३ साठ जिण, तू० १ ही साही। ३. प्र० ३ इकसठमी ता, तू० १ बासठमी ता। ४. प्र० ३ सब। ५. प्र० १ अलजीस, प्र० ३ अनलनिसी। ६. प्र० ३ इकसठमी बहोर लुइन कुं, तू० १ बासठ बहुर कौन सूं।
- [१६६] १-२. तू० १ में ये दो चरण छूटे हुए हैं। ३. प्र० ३ आइ पंगारे, तू० १ षूटै गारी।
- [१६७] १. प्र० ३ बाल।
- [१६८] १. तू० १ बिछाये पुष्प रचि। २. प्र० ३ तुपक। ३. प्र० ३ अवर कहा हूं, तू० १ अबहू मुख से। ४. प्र० ३ बेहल मुभ।
- [२००] १. प्र० ३ हूं। २. प्र० ३ बेहल मुभ। ३. द्वि० १, तू० १ में यह छंद नहीं है।

नैन सैन अति दे रही : उर अंचरो दीयो 'डारि'^१ ।

अवर कहा 'कछु'^२ युं कहुं : आव 'बैल'^३ मोहि मार ॥४२०१॥

'पिलंग बिछायो रुटक करि : दीपग दीनो बारि'^१ ।

अवर कहा 'कछु'^२ युं कहुं : आव 'बैल'^३ मोहि मार ॥४२०२॥

मो जल पंथी की भई : दिगही काठ तराए ।

जो 'निग्रह'^१ तो बूडिहू : 'ग्रहुं'^२ तो बिसहर 'खाए'^३ ॥२०३॥

(चेनरेखा वाक्य चोपई)

जौ लुं बुद्धि न आप जिय होई । तोलुं काहा सिखावै तोही ।

भली कहत कोइ बुरी बिचारै । सीख देइ सो 'गांठि'^१ की हारै ॥२०४॥

तैं वर 'लीयो'^१ ढुंढि है मन सुं । अब 'एह'^२ बात कहै है किनसुं ।

तू तेरो 'करणी'^३ फल पैहै । मेरो 'कहा'^४ गांठि 'को'^५ जैहै ॥२०५॥

तीन 'पहर'^१ लुं निस समझाई । चेनरेखा जिय मैं दुख पाई ।

ऐ लरकी 'लरकी'^२ होय जैहै । मोकुं दोस सब 'त्रिया'^३ देहै ॥२०६॥

लई गुलाब सुं भरी पिचकारी । पदमावती की पीठ मैं मारी ।

चौकी उचक परी 'उर'^१ लागी । नूत कुमर की संका भागी ॥२०७॥

भीजे 'वसत्र'^१ दूर जब कीने । दुख दाएक होए 'सब'^२ सुख लीने ।

मधु मोसुं एती 'कित'^३ कीनी । मालती दस अगुरी मुख दीनी ॥२०८॥

[२०१] १. प्र० ३ डार । २. प्र० ३ हुं । ३. प्र० ३ बहेल । ४. द्वि० १ तथा
तृ० १ मे यह छंद नहीं है ।

[२०२] १. तृ० १ में चरण है : सेफ बिछाई भागिकै : पलिंग पछेरो सार ।
२. प्र० ३ हुं । ३. प्र० ३ बहेल । ४. द्वि० १ मे यह छंद नहीं है ।

[२०३] १. प्र० ३ न गहुं । २. प्र० ३ गहु । ३. प्र० ३ बायो ।

[२०४] १. प्र० ३ गाठ ।

[२०५] १. प्र० १ लीघो । २. प्र० ३ तू । ३. प्र० ३ गति का । ४. प्र० ५
कह्यो । ५. प्र० १ क्यों ।

[२०६] १. प्र० ३ पोहर । २. प्र० ३ लखी । ३. प्र० ३ मिले ।

[२०७] १. तृ० १ गलै ।

[२०८] १. प्र० ३ वचन (< वचन) । २. प्र० ३ के । ३. प्र० ३ गति ।

(३०)

(मधु वाक्य)

त्रपत कुंवर अपनो ब्रत राखो । जैसे बेद 'पुराणो'^१ भाषो ।
चातुर पुरुष तास सुं कहिए । समझ बिना नाही 'कछु'^२ गहिए ॥२०१॥

(दूहा)

तपत तीष 'इष नर'^१ : नारी नेह गरथ्य ।
कोरो काचो देषि करि : 'भोलु गहिए'^२ हथ्य ॥२१०॥

(मालती वाक्य चोपई)

त्रिया 'के'^१ तन की इसारत पावै । नर 'ललचायो स्वान ज्यु'^२ आवै ।
एह 'मेरे'^३ एक न भावै । हुं कछु 'कहु'^४ अर तूं कछु गावै ॥२११॥

(श्रलोक)

'ना वृत्तिः अग्नि काष्ठानां'^१ नापगानां महोदधि ।
'नांतक'^२ सर्वभूतानां 'न [पुसा] वाम लोचन'^३ ॥२१२॥

(चोपई)

त्रिपती न पावक काठ के 'जारे'^१ । त्रिपती न सायर सलित के मारे ।
त्रिपती न काल प्रान कै लेतै । त्रिपती न नर नारी के हेतै ॥२१३॥

(मधु वाक्य)

मधु 'जंपै'^१ मालती सुनि लीजे । सत छोड़े 'केता'^२ दिन जीजे ।
तूं अर्यांन होइ बात मोकुं कहै । सुननहार कैसै सुनि रहै ॥२१४॥

[२०६] १. प्र० १ पुराना । २. तृ० १ कर ।

[२१०] १. प्र० १ भषैइ नारी । २. प्र० ३ पीछे गइए, तृ० १ तौ गहि
गहियै कुनि ।

[२११] १. प्र० १ का । २. प्र० ३ ललचाइ वेग दिग, तृ० १ ललसाय स्वान
जु । ३. तृ० १ तेरे । ४. प्र० ३ गावुं ।

[२१२] १. प्र० १ नाग्नि काष्ठ त्रिपुताना । २. प्र० ३ नापक । ३. प्र० ३
य पस्यति स पस्यति ।

[२१३] १. प्र० १ जाखो, प्र० ३ मारे ।

[२१४] १. प्र० ३ भपे । २. प्र० ३ कितेक ।

‘तो’^१ मो गुरु एक पाठ पढाई। दूजी तूं नरपति की जाई।
 एह जिव समस्त बिबेक नही बूझै। आंधी भई तोहि काहा सूझै ॥२११॥
 ‘हंस गुरु आदि दे’^१ साषी। उत्पति बेद ‘पुरानह’^२ भाषी।
 ‘अडज षान देव दुज राखी’^३। ‘मधु मूरिख सुनि भुं ए साखी’^४ ॥२१२॥
 एक गरभ ‘तै’^१ उपजे दोई। ताकुं दोस धरै ‘नही कोई’^२।
 ‘तो’^३ मो कुल की ‘अंतर’^४ बाढ़ी। झूठी ‘किरच काहे कुं’^५ काढ़ी ॥२१३॥
 मंत्री सुत मधु मनहि बिचारै। त्रिया बचन कछु कहत न हारै।
 मालती तन लच्छन ‘यु’^१ चाढ़ै। ‘ज्युं जल नैन भाद्रवै काढ़ै’^२ ॥२१४॥
 तजिए कनक श्रवन जिहां तूटै। तजिए पंथ ‘चोर जिहां लूटै’^१।
 तजिए प्रीति जिहां दुख ‘पाई’^२। निस्वारथ परधाम न ‘जाई’^३ ॥२१५॥

(श्लोक)

विना कार्येषु ये मूढा गच्छन्ति पर मंदिरे।
 ‘अवश्यमेव’^१ लघुतां याति रवौ समीपे यथा शशिः ॥२२०॥

(दूहा)

ससि सूरज अरु सुरसरी : श्रीपति सबै अनूप।
 निस्वारथ पर ग्रह गए : भए दीन लघु रूप ॥^१२२१॥

[२१५] १. प्र० ३ तू।

[२१६] १. प्र० ३ आदि गुरु आदि दे, द्वि० १ ब्रह्मा विष्णु आदितर्ह।
 २. प्र० ३ पुराणां। ३. प्र० ३ अडज षान देव द्विज राखी, द्वि० १
 अतरिच शसि सूर है साषी। ४. प्र० ३ मधु मूरत सुनीये ए साषी,
 द्वि० १ मालति करुना करि करि भाषी।

[२१७] १. प्र० ३ सुं। २. प्र० ३. सब कोहुं। ३. प्र० ३ तु। ४. प्र० ३ अंत
 न। ५. प्र० ३ किरच कहाते, द्वि० १ कीरत कहा तैं।

[२१८] १. प्र० १ जू। २. द्वि० १ वह कुंभत कछु कहत न छाड़े।

[२१९] १. प्र० १ जीहा रे जूटै। २. प्र० १ दाई, प्र० ३ पइये। ३. प्र० ३
 जइये।

[२२०] १. प्र० ३ तै नरा।

[२२१] १. तू० १ ये यह छंद नहीं है।

(३२)

(चोपई)

मधु यह 'सोच माह मन गहियो'^१ । ता दिन ते पढबे 'नहि गह्यो'^१ ।
 कुंजर खेद्यो ज्यु बन छडै । सब दिन राम सरोवर मडै ॥२१२॥
 कर गिलोल खेलत नही हारै । 'गोरे'^१ ले पछिन 'कुं'^२ डारै ।
 'अरबराय अड अड उड भज्जै'^३ । 'पंष प्रवाह मानुं घन गज्जै'^४ ॥२१३॥
 उडहीं अरब खरब 'रबि'^१ रोहैं । मानुं घटा मेघ की सोहै ।
 भीने पंष मानुं घन बरसै । सो जल मधु अपनो 'तन'^३ फरसै ॥२१४॥
 भरही नीर सुंदर 'पणिहारी'^१ । मधु के चरित देखि कै हारी ।
 करि 'सिर'^२ कुंभ 'लिये जिहां जैसे'^३ ।

'चितवत चकित चित्र फुनि तैसैं'^४ ॥२१५॥

'मानहुं मनवा'^१ जूथ भुलानी । 'काम जार तीय सबै रुकानी'^२ ।
 प्रगटै मैन कंचुकी तरकै । जल के कुंभ सीस तैं ढरकै ॥२१६॥
 मधु ए चरित देखि कै 'लाजै'^१ । जा डर काज 'कोउ बन भाजै'^२ ।
 सो डर जहां तिहां मोहि आगै । छूटूं कहा कोण पर भागै ॥२१७॥
 'तमक'^१ तुरी चढ़ि कै 'ग्रह'^२ आयो । 'वह ठाहर को'^३ 'खेल'^४ मिटायो ।
 दूती देखि 'गई'^५ गति सारी । मालती सुद्ध 'दौर देय'^६ बारी ॥२१८॥

[२१२] १. प्र० ३ जीयसु सकोच मन भयो । २. प्र० ३ कुं नायो ।

[२१३] १. प्र० ३ गोरी ले । २. प्र० ३ पर । ३. प्र० ३. अरब खरब जीव तिह
 भज्जै, ठि० १ हरहराए भागे फिरि आवै । ४. प्र० १ मधु यह चरित
 देखि सुख पावै ।

[२१४] १. प्र० ३ वर । २. प्र० १ मन ।

[२१५] १. प्र० ३ वर नारी । २. प्र० ३ में नहीं है । ३. प्र० ३ लिए सिर
 जैसे, तृ० भरे जल ठाढ़े । ४. प्र० १ चितवत कुंभ लिए सिर तैसे, तृ०
 १ मधु देखन की मनसा बाढ़े ।

[२१६] १. प्र० १, २, तृ० २ मानुं मिलवा, तृ० १ मानुं सुनियां । २. तृ० ६
 काम जरत सब सुंदर रानी ।

[२१७] १. प्र० १ लीजे । २. प्र० १ कीउ बन लीजे ।

[२१८] १. प्र० ३ तांम । २. प्र० ३ गेह । ३. प्र० ठन ठाहर सुं । ४. तृ० १
 खोज । ५. प्र० १ गही । ६. प्र० ३. दे रही, तृ० १ आनि दई ।

मधु वियोग दोय दिन 'हूती'^१ । 'लै कै खबर'^२ गई तिहां दूती ।
 खेलन मिस सब सखी बुलाई । चलि कै राम सरोवर आई ॥२२१॥
 सुनि सखि मो चित जिय जैसे । पीउ 'सुनाइ'^१ पुकारूँ कैसे ।
 जान बेदन व्यापै जिय 'जिसौ' (?)^२ । धोखै भाइचक्रित 'चिहु दिसै'^३ ॥२३०॥^४

(दूहा सोरठा)

अंतरगत की 'प्रीति'^१ 'करता विन कोउ न लहै'^२ ।
 तन मन धरै न धीर किसहि पुकारूँ किसै कहूँ ॥२३१॥
 बिरह बिथा की पीर को जाने कासुं कहूँ ।
 'तन'^१ मन धरै न धीर प्रीतम जाकै दरस बिन ॥२३२॥^२
 मेरो मन थिर नाहि पिंड बिथा कै पीर सुं ।
 किसहू कही न जाए गुप्त बात मधु (?) मालती ॥२३३॥^१

(चोपई)

मालती आय सरोवर भंखी । चितवत विपति परी 'तिहां'^१ पंखी ।
 सखी 'सकल के'^२ बदन बिलोके । मानुं चंद 'सु दीसै'^३ कोकै ॥२३४॥

(दूहा सोरठा)

चकई भयो बिछोह 'अरुण कवल संपुट दियो'^१ ।
 चाहत रह्यो चकोर 'देखि'^२ बदन छबि मालती ॥२३५॥

[२२६] १. प्र० ३ रेहती । २. प्र० ३ देखि सरोवर ।

[२३०] १. प्र० १ सुनाही, प्र० ३ सुने नहीं । २. प्र० ३ जसै । ३. प्र० १ जीय जसै, प्र० ३ चिहु देसे । ४. प्र० ४ मे यह छद नहीं है ।

[२३१] १. प्र० ३ पीर (तुल० बाद के दोहे मे 'पीर') । २. तु० १ को जानै काकूँ कहूँ ।

[२३२] १. प्र० ३ मो । २. द्वि १ मे यह छद नहीं है ।

[२३३] १. द्वि० १ मे यह छद नहीं है ।

[२३४] १. प्र० ३ उडा । २. प्र० ३ सधन को । ३. प्र० चिहु दिस ।

[२३५] १. प्र० ३ अरुण कवल संपुट दहे, तु० १ रैन लमै सगम नहीं ।
 २. प्र० ३ देख ।

(३५)

स्रवनन 'राचै राग'^१ 'घंट'^२ नाद सुनि मृग थकित ।
सर सनमुख उर 'लागि'^३ प्रेम न चूकत मालती ॥२४३॥

(चौपाई)

अंगी प्रेम बढाय बतायो । 'तातै'^१ बिरह बान उर लायो ।
तबही मधु 'मनसा मै आयो'^२ । 'तन'^३ चटपटी मानुं कछु 'खायो'^४ ॥२४४॥

('दूहा सोरठा)

बिरहा 'व्यापी कुंवार (कुंवारि)^१ 'पैड च्यार चलि 'पै'^३ गई ।
'तिहां'^४ चकई आणि पुकार सबद सुनो एह मालती ॥२४५॥

('चोपई)

'चकई पीव पीव कहै'^२ जपै । 'लेहि उराह (उरांह) आहि'^३ कित कपै ।
मालती 'सुनत स्रवन सच पायो'^४ । चकई कूँ चानक सी 'लायो'^५ ॥२४६॥

(मालती वाक्य)

कठिन 'प्राण'^१ तेरो सुनि चकई । पति बियोग कैसे 'कहि सहई'^२ ।
चरन 'पंख नाही जी'^३ थकी । 'ढिग डुकि जाय चहुँ दिस बकी'^४ ॥२४७॥

[२४३] १. प्र० १ राची रग । २. प्र० ३ गृहे । ३. प्र० ३ लाव ।

[२४४] १. प्र० ३ जैसे । २. प्र० ३ इच्छा मे आइ । ३. प्र० ३ तब । ४. प्र० ३ पाइ ।

[२४५] १. प्र० १ मे 'सेवेत्री वाक्य' और है । २. प्र० ३ व्याप कबाल ।
३. प्र० ३ कै । ४. प्र० ३ मे नहीं है ।

[२४६] १. प्र० ३ मे 'चकवी वाक्य' और है । २. प्र० ३ पीउ पीउ बेर बेर
कहा । ३. प्र० ३ लेइ उसास आइ । ४. प्र० ३ सबद सुनी रस पाइ ।
४. प्र० ३ लाई ।

[२४७] १. तू० १ प्रेम । २. प्र० १ पति पाउ, प्र० ३ करि सकइ । ३. प्र० ३
पंथ रही थिर । ४. प्र० १ ढिग डुकि जाय चहुँ निस बकी, तू० १ दूदत
करम नाम उर बकी ।

(३६)

(चकई वाक्य)

सुन मालती कहै जलचरणी । मो पै परी राम की करणी ।
तो बिचि तुच्छ^१ पटा नही फटै (फाटै)^१ । मेरो सराप^२ राम अब^३ कटै (काटै) ॥२४८॥
'चकई आज निसि'^१ तोहि मिलाऊं । कहि येतो (?) तोपै 'कछु'^२ पाऊं ।
मो बिचि तुच्छ^१ पटा नही^३ फटै (फाटै) । तेरो सराप राम अब कटै (काटै) ॥२४९॥
पठई पचारि कै आयस दीनो । बधिक पुकारि बेग^१ तब^१ लीन्हो ।
करी^१ प्रपच^२ सयन सब कीनो (चीनो) । 'चकई कत मिले सोइ कीनो'^३ ॥२५०॥

(गाहा)

धन स 'आज रयणी'^१ 'चकई भण चकवा पच्छै'^२ ।
'चिरजीववि थां राहु विह अकूखरा भजिया जेण'^३ ॥२५१॥

(चोपई)

पंछी पकरि पंजरे नावे । चित्रसार के द्वार बधावे ।
मधि निसा कहि आप धरि भखावे । बिरह बियोग कैसे सच पावै ॥२५२॥^१
चकई जपै सुनि २ सजनी । तू बूझै सो नहि 'आ'^१ रजनी ।
जो 'असै'^२ मिलवै सच पावै । पंछी 'बोहोत'^३ पंजरै नावै ॥२५३॥
संकट मध्य जेतो (येतो) सच पड्यै । 'को दुख सहै बिजोग न सहिये'^१ ।
झूठे मन कैसे समझ्यै । बागुर चूसे 'रस'^२ कित पड्यै ॥२५४॥^३

[२४८] १. प्र० १ मो बिच पाट न फूटै, तू० १ मा विजोगिनी कटे । २. प्र० ३ कौन ते ।

[२४९] १. प्र० ३ आज निसा हु । २. प्र० १ कही । ३. प्र० ३ तुछ फटाई ।

[२५०] १. प्र० ३ दिग । २. प्र० ३ पजर । ३. प्र० १ चकई कंत मिल्यो सोई कि हीन, तू० १ मे यह चरण छूटा हुआ है ।

[२५१] १. प्र० १ अषरयणी, प्र० ३ आज रयणेह । २. प्र० ३ चकवी तब ऐसी कहे । ३. प्र० ३ वन जीवो लष करेह मेटियो राम लेहाण ।

[२५२] १. यह छंद प्र० १, २ मे नहीं है, किन्तु बाद वाले छंद से प्रकट है कि यह प्रसंग के लिए अनिवार्य है, इसलिए उनमे छूटा हुआ लगता है ।

[२५३] १. प्र० ३ या । २. प्र० ३ ऐसे । ३. प्र० १ बोहर ।

[२५४] १. प्र० १ को दुष रह बीजोग नै रह । २. प्र० १ में यह शब्द छूटा हुआ है । ३. प्र० ३, तू० १ मे यह छंद नहीं है ।

(३७)

(मालती वाक्य)

‘तू’^१ बियोग सुख दुख मिलायो । पीउ पीउ करि कै सबद सुनायो ।
फुनि केते संकट कित आयो । बागुर ‘चूसी’^२ मोहि बतायो ॥२१५॥

(चकई वाक्य)

‘सरस’^१ निरस की गती न ठानै । तू बारी इतनो काहा जानै ।
अथम समागम सुख न सूझै । बागुर ‘चूसी काहा तू बूझै’^२ ॥२१६॥

(दूहा सोरठा)

मिटत न सहज सुभाव ‘जिहौ’^१ बिधना जैसे दियौ ।
सीधन प्रसूति ‘पिराय’^२ ‘अम तूट’^३ कुंजर ‘हयो’^४ ॥२१७॥
‘भादु’^१ निसा के भाइ अंधकार रवि दरस लुं ।
चंद जानि ‘बिगसावै’^२ कुमुद कहा करतूत इह^३ ॥२१८॥

(चोपई)

हूँ पंछिनि थोरी बुधि मेरी । पढी ‘विगूचै’^१ ‘वे’^२ गति तेरी ।
तू‘चकोर(चकोरि)होय’^३ दूरहि‘दूकी’^४ । ‘मलय’^५ भुयंगम की गति‘चूकी’^६ ॥२१९॥
चकई बचन सुनत सच ‘पाई’^१ । जैतमाल सखी बेगि बुलाई ।
‘तिणसु’^२ बात ‘कहत’^३ संक धरई । ‘जिन’^४ करतार कछु बिपरीत करई ॥२२०॥

[२१५] १. प्र० ३ तोहि । २. प्र० ३, तू० १ सुचे ।

[२१६] १. प्र० १ मे यह शब्द नहीं है । २. प्र० ३ चुसे तोहि कहा सूजे ।

[२१७] १. प्र० १ जीय । २. प्र० १ पिरावै । ३. प्र० १, २ अम तूटै, प्र० ३ मृग डुटे । ४. प्र० ३ मृग हीयो ।

[२१८] १. प्र० ३ भाम । २. प्र० ३ बरसावतो । ३. प्र० १ हौ ।

[२१९] १. प्र० १ वेगूनवे । २. प्र० ३ वा । ३. प्र० ३ चकोरहि । ४. प्र० ३ डुके । ५. प्र० १ स्थल्य, प्र० ३ मिले । ६. प्र० ३ चुके । ७. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : तैं चकोर होइ चित लायो । मधुकर चित कछु औरैं गायो ।

[२२०] १. प्र० १ पायै । २. प्र० ३ तास । ३. प्र० ३ कहे तै । ४. प्र० ३ अल ।

(३८)

(दूहा सोरठा)

‘प्रेम’^१ संपूरन ‘सोय’^२ ‘दोय जन की कोउ’^३ न लहै ।
‘तीजो जानै’^४ सोय जिहि बिधना घट निरमयो ॥२६१॥

(चोपई)

‘दोय’^१ के बीचि वसीठ न होई । साचो चातुर कहिए सोई ।
मानुं मीन पीवै कित पानी । ‘असी’^२ प्रीति ‘न होइ निदानी’^३ ॥४२६२॥
‘सखी दुराय मै आप दुरायो’^१ । तातै मेरै हाथ न ‘आयो’^२ ।
जब कछु करत न करनी लहिए । तब तो ‘आए सखियन सुं कहिए’^३ ॥४२६३॥

(श्लोक)

चित्तातुरानां न सुखं न निद्रा :
कामातुरानां न भय’^१ न लज्जा ।
जुधातुरानां न बल न तेजः
अर्थातुरानां ‘स्वजनो न’^२ बंधुः ॥२६४॥

(चोपई)

खुधारथी ‘मेरे (मेरै)’^१ अनुरागी । ‘व्यंता’^२ काम काम करि जागी ।
लज्जा डर मेरे भय भाषी । सुन सखी जैतमाल की साखी ॥३२६५॥

[२६१] १. प्र० १ मे यह शब्द नहीं है । २. प्र० ३ होय । ३. प्र० १ दीपजन
त काउ । ४. प्र० १ वीको जाव ।

[२६२] १. प्र० १ दीप । २. प्र० ३ एसी । ३. तु० १ मोहिनी जानी ।

[२६३] १. प्र० ३ सषी दुराय मै आप दुराइ, द्वि० १ सषी चुराय कै आन
भूषायो । २. प्र० ३ आइ । ३. प्र० ३ अब सहीयन कहिए । ४. तु०
१ मे अर्द्धाली का पाठ है : जब करनी करत न आई । तब सषी मै
तोहि सुनाई ।

[२६४] १. प्र० १ भवनं । २. प्र० १ सजनत्या ।

[२६५] १. प्र० मेरी । २. प्र० ३ एतो । ३. द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है :
चित्ता काम काम कर जागी : सुन सषी जैतमाल यो त्यागी ।

जैतमाल तू 'द्विज'^१ की बारी । सब सखियन मैं 'तुं मोहे'^२ पियारी ।
 तोनै 'दुराव'^३ नही कछु मेरै । मेरो पिराण 'पस्यो'^४ बसि तेरै ॥२६६॥
 दुज कुं सकल लोक 'नर'^१ ध्यावै । 'सुनियत दब्ब लछन सोइ'^२ पावै ।
 याको कोन भेद कहि मोसुं । पाछै मन की 'बूझै'^३ तोसुं ॥२६७॥
 जैतमाल 'जपै'^१ सुनि बाई । तैं मोसुं ए 'काक'^२ सुनाई ।
 सब जुग 'आहि देव के'^३ धंधै । 'दुज के चरण सकल जुग बंदै'^४ ॥२६८॥

(श्रलोक)

देवाधीना जगत् सर्व 'मंत्राधीना'^१ च देवता ।
 ते मंत्रा ब्राह्मणाधीना तस्मात् ब्राह्मण देवता ॥२६९॥

(मालती जाक्य)

ऐसे 'मंत्र'^१ सखी मुख तेरै । काज न आए एक ही मेरै ।
 मधु मधु करत 'मोहि'^२ दिन बीते । कोडि तैतीस कौन 'कु'^३ 'जीते'^४ ॥२७०॥
 जो कसतूरी त्रिगह न 'खाई'^१ । मुक्ता माल गज कंठ 'न आई'^२ ।
 मणिधर मणि की गति 'नहुँ'^३ चीनी । तेरै 'मंत्र'^४ एहै गति कीनी ॥२७१॥

(दूहा)

सृगमद गब सिर 'स्वाति'^१ सुत पंनग 'पास मनिराज'^२ ।
 या'ते निरधन ही भला जो जीवत 'न आवै'^४ काज ॥२७२॥

[२६६] १. प्र० १ हीन, प्र० ३ दिल । २. प्र० १. मे तोहि । ३. ओर ।
 ४. प्र० ३ मेरो ।

[२६७] १. प्र० ३ निज । २. प्र० ३ सुनि मन मोदष्ट वसु, द्वि० १ इच्छा करै
 सोइ फल । ३. प्र० ३ पुछे ।

[२६८] १. प्र० ३ बोले । २. प्र० ३ कहा । ३. प्र० १ आए दै । ४. प्र० ३
 देव सकल दुजन सुष बधे, तृ० १ देव सकल द्विज सू आरमै ।

[२६९] १. प्र० १ मित्राधीना ।

[२७०] १. प्र० १ मीत्र । २. प्र० ३ केही । ३. प्र० ३ परि । ४.
 प्र० १ जेते ।

[२७१] १. प्र० ३ पाई । २. प्र० ३ नाइ । ३. प्र० १ न । ४. प्र० १ मीत्र ।

[२७२] १. प्र० ३ सीप । २. प्र० ३ मणि मन राज । ३. प्र० ३ ता ।
 ४. प्र० ३ नावे ।

(४०)

(चोपई)

‘तुम्ह’^१ मुक्त प्राण नहीं कछु अंतर । बिधना ‘देह’ लिखे दोए’^२ जंतर ।
मो मरतां तूं निहचै मरै । तेरै ‘मंत्र’^३ काज कहा सरै ॥२७३॥
जैतमाल फिर उत्तर दीनो । तैं अपजस मेरै सिर कीनो ।
‘तै’^१ परपंच मधु मोहि ‘दुरायो’^२ । ‘सो तो तेरै हाथ न आयो’^३ ॥२७४॥

(दूहा सोरठा)

‘पलट प्राण दिठ’^१ प्रीति मैं मन बच क्रम कै करी ।
पिक बायेस की रीत तैं मोसुं मन मै धरी ॥२७५॥
जिहि ‘जिय कै जिय’^१ लाज भेद छेद तिण ‘सु’^२ कहै ।
‘सरै न’^३ ताको काज प्रीत कपट ‘जिहीं’^४ मालती ॥२७६॥

(चोपई)

मालती दोरि चरन लपटानी । मेरो चूक सबै मन मानी ।
अब तो मोकुं मरत जिवावै । मधु मूरति मोहि ‘नैन’^१ बतावै ॥२७७॥^२
जंपै जैत मालती भोरी । आरतवंत काज बुधि थोरी’^१ ।
‘तै’^२ मनसा चात्रग ‘लु’^३ बधी । ‘बे ही’^४ विकल काम की अथी ॥२७८॥

[२७३] १. प्र० ३ ते । २. प्र० ३ दोय देह रची एक । ३. प्र० १ मीत्र ।

[२७४] १. प्र० ३ जे । २. प्र० ३ दुराई । ३. प्र० ३ नेकन कबहु भेद न पाइ ।

[२७५] १. प्र० ३ प्रगट प्रमाण दिग ।

[२७६] १. प्र० ३ जाकै कुल । २. प्र० ३ कुं । ३. प्र० १ सरनै । ४. प्र० दिग ।

[२७७] १. प्र० ३ नेक । २. तृ० १ मे यह छंद नहीं है ।

[२७८] १. तृ० १ में अर्द्धाली है : जपै जैत मालती अयानी । सीषी बुद्धि न होय सयानी । (तुल० १५६ १, २) । २. प्र० ३ तो । ३. प्र० १ क । ४. प्र० ३ वीचल ।

(४१)

(अलोक)

नहि पश्यति कामान्धो जन्मान्धो नैव पश्यति ।
नहि पश्यति मदोन्मत्त अर्थी दोषो न पश्यति^१ ॥२७६॥

(दूहा)

जोही गति जनमंध की सो ही गति कामध ।
'मदमत सोई'^१ अंधरो 'आरत'^२ पूरन अध ॥२८०॥
'आरति'^१ अपनी जानि कै चरन पखारत खीर ।
गरज 'सरै' समियो फिरै नेक न 'पावै (प्यावै)' नीर ॥२८१॥
अति आदर सनमान देय 'फुनि'^१ निछावरी होइ ।
आरत बिन सुनि मालती बात न 'पूछै'^२ कोइ ॥२८२॥

(चोपई)

मालती जैतमाल 'तन चहै'^१ । 'मेरी दाइ'^२ कौन 'मन'^३ गहै ।
बड़े 'आप'^४ तन कुं दुख सहै । ओछी बात न मुख सुं कहै ॥२८३॥

(दूहा)

जीवन पर उपगार हित देखो धरनी आभ ।
वा बरसै 'वा नीपजै'^१ 'छेहा गिणै न'^२ लाभ ॥२८४॥
देषो 'धु'^१ गति अंब की फलै विस्व के हेत ।
वो इत ते पत्थर हणै वो 'उत'^२ तै फल देत^३ ॥२८५॥

[२७६] १. प्र० ३ मे यह छंद नहीं है ।

[२८०] १. प्र० १ ओ तीहुन मै । २. तृ० १. अरथी ।

[२८१] १. तृ० १ अरथी । २. प्र० ३ सरी । ३. प्र० ३ पावत ।

[२८२] १. प्र० ३ अरु । २. प्र० ३ बूफे ।

[२८३] १- प्र० ३ नेक कहे । २. प्र० ३ मेरो वचन । ३. तृ० १ चित ।

४. प्र० ३ आइ ।

[२८४] १. प्र० ३ अति नीर सू । २. प्र० ३ पर उपगारे ।

[२८५] १. प्र० ३ घो । २. प्र० ३ इत । ३. तृ० १ मे चरण का पाठ है :
पथी पाहन स्यू हनै वे अमृत फल देत ।

फुनि तरवर की गति सुनो परहित कुं ज रचांह ।

धूप सहै सिर आपणै छाहा करै औरांह ॥२८६॥

(श्लोक)

श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रंथ कोटिभिः ।

परोपकाराय पुण्याय पापाय पर पीडनं ॥२८७॥

(चोपई)

‘अरध’^१ श्लोक माहि यू भाषी । बेद पुराण सकल द्रिग साखी ।

पर उपगार पुत्रि नही असो । पर दुख समो पाप नहीं कैसो ॥२८८॥

बोछी बोछी बुद्धि विचारै । बड़ो बडाई करत न हारै ।

‘ए’^१ तो आहि सहज के लच्छन । उत्तर जाई ‘कै रहो दच्छन’^२ ॥२८९॥

जैत ‘बिहसि’^१ मालती उर लाई । तू कुंवरी ‘जिन मन’^२ दुख पाई ।

धीरज राखि जीव दृढ तेरो । करूं सो ‘ख्याल’^३ देखि ‘अब’^४ मेरो ॥२९०॥

कहै तो गगन चंद रबि ‘रंघू’^१ । कहै तो इंद्र मेघ जल बंधू ।

कहै तो बिन पावक ‘पख (पक)’^२ रांधू । ‘सुरग पताल सुर तीसू बांधू’^३ ॥२९१॥

कहै तो जोगिणी बीर हंकारू । कहै तो गिरिवर सुं गिर ‘मारू’^१ ।

कहै तो ‘उदधि धिरित करि जारू’^२ । कहै मेरु अंगुरी सुं ‘टारू’^३ ॥२९२॥

कहै तो बसुधा ‘चलन लचारू’^१ । कहै तो ‘इण (अन) रितु मेघ’^२ बरसाऊ ।

कहै तो अष्ट धात गिरि धारू । ‘कहै तो सात समुद्र पिव डारू’^३ ॥२९३॥

[२८८] १, प्र० ३ आधे ।

[२८९] १. प्र० १ अह । २. तू० १ रह्यो कोउ पच्छिम ।

[२९०] १. प्र० १ विहस्या । २. प्र० १ जीनमै, प्र० ३ मन मै । ३. प्र० ३ काज । ४. प्र० ३ बल ।

[२९१] १. प्र० ३ बंधू । २. प्र० ३ करि सधू । ३. प्र० ३ कहे तो सुरग पताल सर साधू, तू० १ मे यह चरण नहीं है ।

[२९२] १. प्र० ३ टारू । २. प्र० ३ उदध गरम करि डारू । ३. प्र० ३ डारू । ४ तू० १ मे अर्द्धाली है : कहे तो दस द्वार पकड़ कराधू । कहे तो राजा प्रजा एक साधू ।

[२९३] १. प्र० ३ चरण चलाई । २. प्र० ३ अमरत जल । ३. द्वि० १ कहै तो सरिता उलटि बहाऊ, तू० १ कहै तो चलिता चाल चलाऊ ।

‘मलिन मंत्र’^१ ‘होइ ते सह’^२ जानूं । सुर नर सकल ‘बंध करि’^४ आनूं ।
 जो मधु नेक देखबे पाऊं । पंछी लुं ‘गहि कै अक’^३ लाऊं ॥२१४॥
 मधु की सुद्धि राम सर पाई । दूती देखि जैत पै आई ।
 ‘दुज’^१ कुंवरी सुनि कै उठि धाई । मालति ‘कंम’^२ हेत चित लाई ॥२१५॥
 ‘मंत्र’^१ मोहनी मुख उच्चरही । वसीकरन ‘की वानी’^२ धरही ।
 थोरी वैस बुद्धि तो पूरी । परहित काम करन कुं सूरि ॥२१६॥
 ‘लई’^१ हंकारि सखी दोय च्यारा । ‘सज्या कीनो’^२ सोला सिणगारा ।
 मंजन चीर रच्या उर हारा । कर कंकण नेवर झणकारा ॥२१७॥
 तिलक भाल नैना दिण अंजन । माला ‘मुगताफल’^१ मनरजन ।
 तन चंदन ‘उर’^२ कंचुकि ‘तरकै’^३ । ‘कटि पर छुद्र घंटिका’^४ षलकै ॥२१८॥
 मुख तंबोल बीरी ‘मुख डारी’^१ । मानुं ‘किर पंकज निरवारी’^२ ।
 अति चातुर मुख सोभा सोहै । ‘जित चितवै तित ही मनु’^३ मोहै ॥२१९॥
 मात गयद ‘चाल ता’^१ सोहै । ‘जां देखे मुनिवर मन’^२ मोहै ।
 सरवर ‘निकट’^३ सखी चलि आई । मधु खेलत देखे सच पाई ॥२००॥
 पहिले याकुं वचन ‘भखाऊ’^१ । कैसो चातुर ‘सो इत’^२ पाऊं ।
 प्रेम असारत ‘कु सर सांधू’^३ । पाछे मंत्र सकति करि ‘बांधू’^४ ॥२०१॥

[२१४] १. प्र० १ मिलिठ मित्र । २. प्र० ३ वही । ३. प्र० ३ जे सत्र । ४. प्र० ३ बाधिके ।

[२१५] १. प्र० ३ द्विज । २. प्र० ३ काम ।

[२१६] १. प्र० १ मा । २. प्र० ३ वानी मन ।

[२१७] १. प्र० १ ले, प्र० ३ लेह । २. प्र० ३ सज कीने ।

[२१८] १. प्र० ३ तिलक भाल (तुल० पूर्ववर्तीचरण) । २. प्र० १ मन ।
 ३. प्र० ३. झलके । ४. प्र० १, २, ३, ४ पग नेवर कटि मेखल ।

[२१९] १. द्वि० १ करि गोरी । २. द्वि० १ इद्र अपछरा मोरी । ३. प्र० ३ जा देषे मुनिजन ।

[३००] १. प्र० चाल तन । २. प्र० ३ जित चितवै तितही मन । ३. प्र० १ नीकली ।

[३०१] १. प्र० ३ बकाउं । २. प्र० ३ सोहीहुं । ३. प्र० ३ कर पर संधू ।
 ४. प्र० ३ बंधूं ।

(४४)

जैत 'राम'^१ सर ऊभी रहै । मधुकर मिस 'मधुकर नै'^२ कहै ।
मालती कुसम ब्रच्छ तल राखी । एक ही 'समल अवर सब साखी'^३ ॥३०२॥

(दूहा)

पाडल 'ब्रच्छ'^१ मालती भई भंवर भए मधु आय ।
प्रीति पुराणी 'छांड़ि'^२ कै 'किहां रहे'^३ बिलमाय^४ ॥३०३॥
सुभग सरस रसपूर 'निरखे हो तुम तो नए'^१ ।
मधुकर मन के कूर कित जीवै सोइ मालती ॥३०४॥^२

(मधु वाक्य)

रह्यो मुसट धरि 'मोनि'^१ 'बोलहु'^२ तो कछु सुद्धि कै ।
मधुकर दूसन कौन 'अनरिति' फूली मालती ॥३०५॥

(जैतमाल वाक्य दूहा सोरठा)

षट रिति बारह मास 'सकल कुसमल ही रहे'^१ ।
'रीभ्यो आक पलास भेस धरो सिर मालती'^२ ॥३०६॥

(चोपई)

रीभ्यो आक पलास कटाई । 'सुघराई सगरी एह'^१ पाई ।
मन में घटी बढी नही बूझै । 'तो ए प्रेम कहा तै'^२ सूझै ॥३०७॥

[३०२] १. प्र० ३ माल । २. प्र० ३ मधु कारन । ३. प्र० ३ समल दुने
रस चाषी ।

[३०३] १. प्र० ३ ते । २. प्र० ३ छोड । ३. प्र० १ काहा रहा । ४. द्वि० १
च० १ मे यह छद नहीं है ।

[३०४] १. प्र० ३ परम प्रीत जाके हीये । २. तृ० १ मे यह छद नहीं है ।

[३०५] १. प्र० १ मुनी । २. प्र० १ बोलो । ३. प्र० ३ अनरत ।

[३०६] १. प्र० ३ सकल कुसम कुं तुम रटे, द्वि० १ सदा कुसम रस लेत, तृ० १
सफल कुसम तुम्ह कूं रहै । २. द्वि० १ आक पलासों हित करौ दोस
मालती देत ।

[३०७] १. प्र० ३ चतुराई सधरी इह । २. प्र० ३ पूरव बात कहां नही ।

रोगी 'होय तो रोग वसि'^१ जपै । वैद अथांन होय कित कपै ।
मधुकर जो रे मालती 'तजिहै'^२ । 'आक पत्तास कंटाई भजिहै'^३ ॥३०८॥

(दूहा सोरठा)

फल हु न आवै काज कुसुम कोउ 'फरसै नहीं'^१ ।
'आकर'^२ आक 'अकाज'^३ मधुकर रीकै 'तास सू'^४ ॥३०९॥

(मधु वाक्य)

आक कुसम यह जानि कै मधुकर बैढ्यो हेत ।
मरण जानि उहि ढिग मयो सत्य बचन सुनि जेत ॥३१०॥

(जैतमाल वाक्य)

प्रथम स्याम फुनि लाल फल हू पत्र गँवाइ के ।
केसू कुसम गुलाल अलि परसो तुम कवच गुन ॥३११॥

(मधु वाक्य)

केसू पावक जानि के मधुकर मरबो हेत ।
जरबे कूँ वेहि डुम गयो येही जान तू जैत ॥३१२॥

(जैतमाल वाक्य)

कंठ्याई कांटे सघन ताको अति बिस्वास ।
मधुकर अति गुनवंत तू सदा रहत तिह पास ॥३१३॥

(मधु वाक्य)

सर्प पिंजर सेज्या रची अलि बियोग के हेत ।
कंठ्याई मधुकर गयो सत्य बचन सुन जेत ॥३१४॥

(जैतमाल वाक्य)

आप स्वारथ कुं बन बन भटके । मन यों बिरह न मनछा अटके ।
रस लै अनत उडत तिहां देखै । फुनि यह लता बढै जू सूकै ॥३१५॥

[३०८] १. तू १ रोग सब लही । २. प्र० १ तजीयै । ३. प्र० ३ मे यह
चरण छूट हुआ है ।

[३०९] १. प्र० १ कैसे सही । २. प्र० १, २ आखर । ३. प्र० ३ अ आक ।
४. प्र० १ तार सूठ ।

(४६)

(मधु वाक्य)

द्रुम बेली मधुकर फिरै जग जानै रस लेह ।

यह वे पूरब प्रीत कुँ बन बन भटके तेह ॥३१६॥

(जैतमाल वाक्य)

बेदन आहि कौन मधु तो तन । द्रुम बेली भटके सब बन बन ।

सांची बात मोहि समझायो । कूर कलावंत लों कित गावो ॥३१७॥

(मधु वाक्य)

कूर कलावंत जो घर भूलै । मधुकर सो फुनि यह गति डोलै ।

पै यह अचरज लागे मेरे मन । लता भटकत फिरत केहि गुन ॥३१८॥

(जैतमाल वाक्य)

जैत सकुचि मन लज्जा पाई । मेरी बात मोहि पर आई ।

मैं मधु तोसूँ सांची बूझी । तेरे जिय कछु और ही सूझी ॥३१९॥

(चोपई)

वनिता लता अरु पंडित नरा । 'इन कै'^१ सहज 'एक चित धरा'^२ ।

जो लुँ एक न 'आख्य'^३ ग्रहै । तो लु भला न कोऊ कहै ॥३२०॥

(श्रलोक)

वैद्वयं मणि माणिक्य हेमाश्रयं भूषणं ।

विनाश्रय न शोभति पंडिता वनिता लता ॥३२१॥^१

[३१०-३१६] ये समस्त छंद प्र० १, २, ३, ४ अर्थात् प्रथम शाखा की समस्त प्रतियों में नहीं हैं, और इनके न रहने से छंद ३०६ तथा ३२० में परस्पर का संबंध नहीं रह जाता है, इन्हीं से उनकी संगति मिलती है, इसलिए ये छंद प्रथम शाखा की किसी आदि पूर्वजमें भूलसे छूटे हुए ज्ञात होते हैं । समस्त आदर्श का एक पृष्ठ ही छूट गया होगा, जिन पर ये छंद आते थे । ये छंद और शाखाओं की समस्त प्रतियों में आते हैं, इसलिए प्रथम शाखा की प्रतियों का विकृति-संबंध ये छंद प्रमाणित करते हैं ।

[३२०] १. प्र० १ इनके । २. प्र० १. आई एक जरा, तु० १. आनि कै धरा ।
३. प्र० १. अस्टम, प्र० ३. आश्रम ।

[३२१] १. यह छंद प्र० ३ में नहीं है ।

(४७)

(चोपई)

मधु कुं जनम 'आपनो'^१ सूझै । मिस करि जेतमाल कुं बूझै ।
मधुकर कौन मालती कैसी । उतपति मोहि सुनाओ 'जैसी'^२ ॥३२२॥

('जेतमाल'^१ वाक्य)

सुन मधु कथा कहुं तो 'आगल'^२ । मधुकर अमर मालती पाडल ।
उतपति 'भई'^३ 'तो आहि सुनावुं'^४ । पाछे कछु 'एक'^५ 'तो पै हुं पाऊं'^६ ॥३२३॥
महादेव काम जब जाख्यो । भसम अंगार छार करि डाय्यो ।
जारत अनंग देखि कै गोरी । अति आकुल बाकुल होइ दोरी ॥३२४॥

(दूहा)

संकर कोप अनंग दहो बिकल भई बर नार ।
बामा कर लघु अंगुरी लीनुं निर्मल तुसार ॥३२५॥

(चोपई)

'जरि बरि काम भयो जग'^१ नाहर । भसम अंगार रहे 'उहि'^२ ठाहर ।
पाडल भमर तास 'के'^३ कीने । करता की गति कोउ न चीने'^४ ॥३२६॥

(दूहा)

भसमी 'तो'^१ पाडल भई कोयला भया अंगार ।
नाके 'ए'^२ मधुकर भए सो कारे एह 'प्रकार'^३ ॥३२७॥

(चोपई)

ढिग हो ब्रच्छ सेवंत्री केरो । सो अवतार एही मधु मेरो ।
पाडल भमर 'आहि'^१ तुम दोऊ । 'विध'^२ के खेल न जानै कोऊ ॥३२८॥

[३२२] १. प्र० १ आपनु । २. प्र० ३ तेसी ।

[३२३] १. प्र० १ मधू । २. प्र० ३ सुनमधु कथा कहुं तो आडल, द्वि० १
कथा कहत उपजे रसना जल । ३. प्र० १ होय । ४. द्वि० १ सोई
सुन लीजे । ५. प्र० ३ हुं । ६. द्वि० १ मे चरण का पाठ है : मनसा
वाचा कै चित दीजे ।

[३२६] १. प्र० ३ जगत काम भइ जव । २. तृ० १ तिहा । ३. प्र० ३ कुं
४. प्र० ३ कोन ते चीनी ।

[३२७] १. प्र० ३ ते । २. प्र० ३ इह । ३. प्र० ३ विचार ।

[३२८] १. प्र० ३ इह । २. प्र० ३ बुध ।

पहरी 'पूरब' प्रीत सुनाऊँ^१ । पीछे अवर 'चातुरी'^२ समझाऊँ ।
 मनमथ 'उतपति'^३ देह तुम्हारी । प्रेम निबाहन कूँ अवतारी ॥३२१॥
 मालती कुसम ब्रच्छ 'तल फूली' । मधुकर प्रीति जान कै 'भूली'^२ ।
 अति रस लुब्ध मगन भए 'दोई'^३ । अतर होइ न बिछुरे 'कोई'^४ ॥३३०॥
 कबहुँक 'सैल'^१ काज बन फिरै । मालती बिना न मनसा 'थिरै'^२ ।
 'इह प्रतीत आज लहै'^३ कोई । पाडल फूल भँवर तिहां होई ॥३३१॥
 मध्य रयणि समीयो 'जिहां'^१ होई । दिव्य देह प्रगटै तन दोई ।
 'अति रस सुरत केलि तिहां' करै^२ । 'सूरज ऊवत ही'^३ तन धरै ॥३३२॥
 किति एक देवस ऐसे बन बहे । अंतर 'भेद'^१ न कोऊ लहे ।
 निकट सेवत्री 'सब'^२ पहचानै । 'भवर'^३ मालती 'तास न'^४ जानै ॥३३३॥
 ससिर बसंत औषम रिति बीती । बरस सरद काल तिहाँ जीती ।
 'कठिन हेमंत'^१ सीत बहु भारी । 'हेम'^२ तुसार मालती बारी ॥३३४॥
 ऐसे समय 'आनि'^१ दब लागी । साखा सिखा मूल 'छोँ दागी'^३ ।
 हेम जरी अस 'पावक'^४ जारी । 'विधि'^५ लोहार केरी गत्या धारी ॥३३५॥

[३२६] १. प्र० ३ पूरब वात सुणाउ, तू० १ पूरबली प्रीत सुणाऊ । २. प्र० ३ वात । ३. प्र० ३ उतर ।

[३३०] १. प्र० ३ वन फूले । २. प्र० ३ भूले । ३. प्र० ३ दोऊ । ४. प्र० ३ कोऊ ।

[३३१] १. प्र० ३ सकल । २. प्र० ३ धरै । ३. प्र० १ अह प्रितत त लैहू कोई ।

[३३२] १. प्र० १ तिहा । २. प्र ३ अनत रस कैल रसै । ३. प्र० ३ सूर भएह फिर उह ।

[३३३] १. प्र० ३ प्रीति । २. प्र० ३ कु । ३. तू० १ मधु । ४. प्र० ३ ताहि नही ।

[३३४] १. प्र० ३ निकट हेमत । २. प्र० ३ तिहां ।

[३३५] १. प्र० ३ तिहां । २. प्र० १ दो लागी (तूल० प्रथम चरण) । ३. तू० १ में यह चरण छूटा हुआ है । ४. प्र० ३ पंऊज । ५. प्र० १ विद्या ।

सेवत्री जरत कछू एक बांची । दिन दोए प्रान 'रहे तन सांची'^१ ।
 मधुकर प्रीत तहां उन पर 'खी'^२ । 'जरत'^३ मालती नयनइं निरषी ॥३३६॥
 दिवस दूसरइं कीन्ही फेरी । किनइं सबद 'सेवत्री'^१ टेरी ।^२
 मैं निरषी गति सबै 'तिहारी'^३ । तुम सुं प्रीत करे तिहां गारी ॥३३७॥

(दूहा)

अए 'देव सो'^१ आन 'निरषै हो तुम तो नए'^२ ।
 गई प्रीत 'पहचानि'^३ को मधुकर को मालती ॥३३८॥
 मुख 'देखी'^१ की प्रीत ऐसी तो सब कोइ करै ।
 वे फुनि 'न्यारे'^२ मीत 'जीए'^३ जीवै 'मूए'^४ मरै ॥^५३३९॥
 'जरी'^१ मालती 'जोर'^२ मधुकर 'कुं'^३ भावै नहीं ।
 दिन दोए 'रहो'^४ न सोग लोक लाज सबही तजी ॥३४०॥
 जरिबो मरिबो 'कठिन'^१ है मधू मालती संग ।^२
 'जुग बिबहार न करि सकै'^३ असम चढावत झंग ॥३४१॥

(चोपई)

इहि बिधि बचन कहै 'है उनसै'^१ । पुनि सेवत्री ब्रिच्छ 'हु'^२ सूकै ।
 सो हूँ आय जैत दुज वेई । मधु मोपै 'सगरो'^३ सुनि लेई ॥३४२॥

[३३६] १. प्र० ३ दिन दोय प्रान रही तन संची, द्वि० १ तातै कथा कहत सब
 सांची । २. यह अक्षर तथा परवर्ती चरण प्र० १ में छूटे हुए हैं ।
 ३. तृ० १ जैत ।

[३३७] १. तृ० १ मालती । २. प्र० १ में यह अर्द्धाली छूटी हुई है ।
 ३. प्र० ३ तुमारी ।

[३३८] १. प्र० ३ विदेसी ! २. प्र० ३ निरषै हो तुमतो नहीं, द्वि० १ मधु
 मूरति निरषे नयन । ३. प्र० ३ पेछाण ।

[३३९] १. प्र० १ देखन । २. प्र० १ नारे । ३. प्र० ३ जीवत । ४. प्र० ३
 मृत । ५. तृ० १ में यह दोहा नहीं है ।

[३४०] १. प्र० १ जरती । २. प्र० १ जोग । ३. प्र० १ कै । ४. प्र० ३ गयो ।

[३४१] १. प्र० ३ कठण । २. तृ० १ में चरण है : बड नही वेली मही नहीं
 काहु कौ संग । ३. तृ० १ कोन कारन भमरो रटे ।

[३४२] १. प्र० १ सुनि आगै, प्र० ३ इह उषा । २. तृ० १ तन । ३. प्र० ३
 सघरी ।

म० वार्ता ४ (११००-६३)

(५०)

(मधु वाक्य)

सेवंत्री एती बात 'कहा'^१ जानै । झूठी आ कि पचासक ठानै ।
जीय बातै सोई बात न बूझै । पर घर 'आनि'^२ पडोसनि झूझै ॥३४३॥

(दूहा)

जरत मालती देषि मधुकर तो तब ही जरै ।
सो प्रतीति अब पेष मूए बिन कोऊ अवतरै ॥३४४॥

(चोपई)

मूए बिन कोइ सरग न देषै । मूए बिन अवतार न पेषै ।
मूए बिन 'कोउ प्रतीति न'^१ जानै । 'बिन प्रतीति कोइ बात न मानै'^२ ॥३४५॥

(जैतमाल वाक्य)

सेवंत्री 'जेति बात'^१ 'द्विग'^२ दाषी । तितीक मै 'तोहि आगमच'^३ भाषी ।
जो ए बचन कूड करि गिनिये । तो 'साचे'^४ तेरे मुख तैं सुनिए ॥३४६॥

(मधु वाक्य)

मालती जरत मधुप जरि निषटै । फुनि वाके नव पञ्चव प्रगटै ।
साखा ब्रच्छ पत्र भए तबही । मानु दगध भये नहि कब ही ॥^१३४७॥
अलि के प्रान पवन संग रहै । मिले संग 'सुरग मारग चहै'^१ ।
देखी इहां प्रीत 'है'^२ कांची । 'मधुकर'^३ सुन्या मालती बाची ॥३४८॥
बन में सहज आपनै फूली । प्रीत 'पुरानी'^१ सो सब भूली ।
मधुकर प्रेम संपूरन 'दाषो' । अंतरेख अपनो जिय 'राखो'^३ ॥३४९॥

[३४३] १. प्र० १ कहा । २. प्र० ३, तृ० १ कहा ।

[३४५] १. प्र० ३ परभव नहीं । २. तृ० १ प्रीत बिना कोउ कहा बषानै ।

[३४६] १. प्र० ३ जेतीयक । २. प्र० १ डिट । ३. प्र० ३ आगम करि ।
४. प्र० ३ साची । ५. तृ० १ मे यह छंद नहीं है ।

[३४७] १. प्र० ३ तथा द्वि० १ मे यह छंद नहीं है, किन्तु प्रसंग के लिये
आवश्यक है, इसलिए छूटा लगता है ।

[३४८] १. प्र० १ सूर गमन मारग चहै, प्र० ३ सघी सग महमह, तृ० १
अग जान कै चहै । २. प्र० ३ भइ । ३. प्र० १ जरत मधुप ।

[३४९] १. तृ० १ पुरातन । २. द्वि० १ देख्यो । ३. द्वि० १ पेष्यो ।

(५१)

इकिति एक दिवस बीते औसै करी । मालती बोहोरि 'सीत पावक' ^१ जरी ।
तिहां सेवंत्री कोक (काक) 'सुनायो' ^२ । अभ्यंतर को भेद न 'पायो' ^३ ॥३५०॥
मधुकर अवर उडत तिहां देखे । 'कवन ज सयानै अंक करि लेखे' ^१ ।
औसै जान होय 'जो' ^२ पूरे । 'तिन घरि' ^३ आनि 'चिवावत मूरे' ^४ ॥३५१॥

(अलि वाक्य दूहा)

मूरख प्रेम भुलाए बिन बूझे बातां करै ।
वे मधुकर 'ये' ^१ नाहि काक सुनावै जास तूं ॥३५२॥

(चोपई)

अलि जीव अंतरेष होय बोलै । सुनि सेवंत्री 'चूकि हूँ' ^१ भूलै ।
'कहत कहू तर बोहोतक' ^२ जोलुं । मालति प्राण आय 'मिले' ^३ तोलु ॥३५३॥
अलि मालती मिले जीय जातै । कीनी बोहत परस्पर बातैं ।
जैतमाल सो समो सुनीजै । 'एक मन एक अग्र चित दीजै' ^१ ॥३५४॥

(दूहा सोरठा)

तो तन जरतो देखि मैं देही ऊपर दही ।
'बिछुरन निमल न पेख सो एते दिन क्यु रहै' ^१ ॥३५५॥
तो 'मो' ^१ पूरब नेह जानी पै बूझी नही ।
तै कीनी गति तेह ज्यु नूप मानघाता मही ॥३५६॥

[३५०] १. प्र० १ पावक मै । २. प्र० ३ सुनाई । ३. प्र० ३ पाई ।

[३५१] १. प्र० ३ कोन वसवे एव रस लेषे, द्वि० १ ताही मन महि
सच करि पेख्यो, तृ० १ मन मौ प्रेम मालती होषै । २. प्र० ३ जिहा
३. प्र० ३ तो नगर, द्वि० तिहठा । ४. प्र० १ चाबी वत मूंडी,
प्र० ३ बतावे सूरे, द्वि० १ विवाहै मूरे ।

[३५२] १. प्र० ३ वे ।

[३५३] १ प्र० ३ चोकही । २. तृ० १ केतक उत्तर बोले । ३. १ मल ।

[३५४] १. द्वि० १ झूठी बात न मन मों दीजै । २. प्र० ३ मैं यह
छुद नहीं है ।

[३५५] १. द्वि० १ प्रीत पुगतन पेष रटत तोहि और न चढ्यो ।

[३५६] १ प्र० ३ मानु ।



(५२)

(चोपई)

धरी मानधाता ग्रह धरनी । तै कीनी मोसु ए करनी ।
 'त्रियां सु'^१ प्रीत करो जिन कोई । 'मोरि'^२ पटतर बूझो खोई ॥३१७॥
 मैं मेरो जिय तोपरि दीनो । तैं प्रपच मोसु एह कीनो ।
 मेरी देह छार होय 'निघटी'^१ । तू बन मैं नव पल्लव प्रगटी ॥३१८॥
 अतर गत की 'पीर'^१ न बूझी । मालती कुन बुधि 'तिहां'^२ सूझी ।
 बाजीगर 'ज्यु'^३ मो गति कीनी । ढोल बजाए बात 'तैं'^४ कीनी ॥३१९॥
 पुरष मरत त्रिया ऊपर मरही । पिण त्रिया ऊपर पुरष न जरही ।
 सो मैं तो ऊपर गति ठानी । तैं 'मेरे जीय की'^१ एक न जांणी ॥३२०॥

(दूहा सोरठा)

'पुरुष'^१ प्रेम बसि होय त्रिया प्रपच पूरन गही ।
 देखी सुनी न कोइ नागर बेलि मंडफ चही ॥३२१॥

(जैतमाल वाक्य चोपई)

मधुकर बचन सुनी जै अैसे । उत्तर देहि मालती कैसे ।
 सो फुनि कुंवर अवन दे सुनियै । अपनी 'ही'^१ साची करि गिनियै ॥३२२॥
 पुरष कहै सो सब त्रिया सहै । त्रिया कठोर बचन कित कहै ।
 जपै दीन बचन मधुकर सु । तेरे मिलन कुं मैं अति तरसु ॥३२३॥

(सोरठा)

उत्तपत एक 'समूर'^१ प्रीत हेत 'तनु दोये धरे ।
 'पुहवी'^२ उतै 'न'^३ सूर जो अंतर होए मालती ॥३२४॥

-
- [३५७] १. प्र० ३ तातैं । २. प्र० ३ मोसु ।
 [३५८] १. प्र० १ न घट्टी, प्र० ३ निकटा ।
 [३५९] १. प्र० ३ प्रीत । २. प्र० ३ तोहि । ३. प्र० १ जो । ४. प्र० ३ सब ।
 [३६०] १. प्र० ३ मेरी कछु । २. प्र० ४ तथा तू । १ मैं यह छुद नहीं है ।
 [३६१] १. प्र० १ पूरव ।
 [३६२] १. प्र० ३ सब ।
 [३६४] १. प्र० १ समरु । २. प्र० १ पोहोवी । ३. प्र० ३ मैं 'न' नहीं है ।

(मालती वाक्य)

जो कछु जीय मैं खोट तो साखी सकर कहूँ ।

कै तन रहै 'अखोट'^१ कै 'फरसै'^२ मधुमालती ॥३६५॥

(चोपई)

मो तन तुम 'सुधि'^१ 'कारन'^२ प्रगटे । जानुं नहीं जो तुम जरि 'निघटे'^३ ।^४
 'नव खंड'^५ 'सात' 'समुंद्र'^६ लु भटकी । निस बासर कहुं 'नैक न अटकी'^७ ॥३६६॥
 ग्रह पूरब 'खोज्यां'^१ दुख पावै । 'एक न कोऊ सुद्धि बतावै'^२ ।
 पंछी भमर आनि अति देखे । तुम बिन सुन्य सबै करि लेखे ॥३६७॥
 'ज्यु'^१ 'निसि 'उडिगन चंद'^२ बिहूनी । फुलवारी चपक बिन सूनी ।
 रिति बसंत 'पिक'^३ 'बिन नही नीकी । बरधा रिति दामनी बिन फीकी ॥३६८॥
 सैन सुभट 'घन पै त्रप नाही'^१ । सरवर 'पंख न पंखी तिहां हो'^२ ।
 मणि 'धरी'^३ लाल हेम बिन सूनी । त्रिया नव जोवन कत बिहूनी ॥३६९॥
 मालती करुणा 'करत'^१ सुनावै । एकहुँ अलि की सुद्धि न पावै ।
 अबहूँ निहचै प्राण गमाव(गमावुं) । 'पतिबिजोगकैसेपति'^२ पाव(पावुं) ॥३७०॥
 रटति नाम 'श्री'^१ कृसन हरी हर । 'आराधु (आराधो) सकर'^२ नीके करे ।
 'मधुकर'^३ प्रीत हेत 'चित धारी'^४ । एह बचन करि देह 'प्रजारी'^५ ॥३७१॥

[३६५] १. प्र० ३ अखोट । २. प्र० १ परसै ।

[३६६] १. प्र० १ सधि । २. प्र० ३ करण । ३. प्र० घटै, प्र० ३ निकटे । ४. द्वि० १ मे अर्द्धाली है : तो मोहि बचन गनत आभिथ्या । तो बिन जनम मोहि सब वृथ्या । ५. प्र० ३ वसत । ६. तृ० १ दीप । ७. प्र० १ नैक न अटकै, प्र० ३ नहि अटकी ।

[३६७] १. प्र० ३ खोज्यां । २. प्र० ३ इ काहु सुही न पइए ।

[३६८] १. प्र० १ जू, प्र० ३ जो । २. प्र० १ चंद गीगन । ३. प्र० १ पीब ।

[३६९] १. प्र० ३ नृपनी नहीं त्याही । २. प्र० ३ सुनो पानी नाही, द्वि० १ कछु न पकज ताही । ३. प्र० ३ घर ।

[३७०] १. प्र० ३ करहि । २. प्र० ३ प्रीतम बिन कैसे अग सुख ।

[३७१] १. प्र० ३ मन । २. प्र० ३ आरहु संकट तुम । ३. प्र० ३ मधुकर । ४. प्र० ३ सुखकारी । ५. तृ० मभारी ।

पवन प्रतीत प्रीत दिढ राखी । 'दंपति मिले दिही तिहां' साखी ।
जिण कोई 'उपदेसन काढै'^२ । 'कोऊ घटै न कोऊ बाढै'^३ ॥३७२॥

(सोरठा)

मालती समो न प्रेम (प्रेमि ?) मधुकर से प्रीतम नहीं ।
कोऊ 'घटै न तेम'^१ मनसा बाचा कर्मना ॥३७३॥
पवन 'पंखी'^१ मधुमालती कोउ घटै न लेख ।
'मसि'^२ 'कागद गच धोलहर'^३ एह पटंतर पेख ॥३७४॥

(चोपई)

'प्रेम बचन सुनि कै भ्रम भागो'^१ । 'अलप जीए गगन मधि लागो'^२ ॥
'फुनि'^३ अवतार बनिक ग्रह लीनो । इहि प्रपंच 'केहि'^४ कारन कीनो ॥३७५॥
मालति 'जनम नृपतिग्रह बरिका'^१ । तुम तो भए साह 'घरि'^२ लरिका ।
तुम जाण्यो 'इह'^३ अतर होई ।^४ मेरी सुद्धि न 'पावै'^५ कोई ॥३७६॥
राजा 'बनिक व्याह कु होए'^१ । इह बिपरीत तेरे जिय जोए ।^२
असी तो 'मधु मन मै'^३ बूझै । करता की गति 'कोइ न सूझै'^४ ॥३७७॥

[३७२] १. प्र० १ दपति मिलि देही (दिही) तिहा, प्र० ३ दपति मिले मइ
तिहा, द्वि० १ जैत बिना कोउ लहै न । २. द्वि० १ मो उपदेस
बतायौ । ३. द्वि० १ सोइ दियौ पै हाथ न आयौ ।

[३७३] १. प्र० ३ भए न मेक ।

[३७४] १. प्र० ३ प्रीत । २. प्र० १ मीस, द्वि० १ सम । ३. प्र० ३ कागल
घसि धोल करि, द्वि० १ कागद पाइन लिषी ।

[३७५] १. द्वि० १ प्रीत इढावन सुन भ्रम भागी । २. प्र० ३ अलप जिय लाज
गगन मधि लागो, द्वि० १ मधु सकोच रहै जिय लागी । ३. प्र० ३
कुण । ४. प्र० ३ किण ।

[३७६] १. तृ० १ नृपति ग्रहे कुमारिका । २. प्र० ३ के । ३. प्र० १ आहा ।
४. द्वि० १, तृ० १ मे यहाँ और है : नृपति कुचरि नृपती कू बरिहै ।
५. प्र० ३ जाणो ।

[३७७] १. प्र० १ बीना बाहै कीम होई, द्वि० १, तृ० १ बिना न व्याहै
कोई । २. द्वि० १, तृ० १ मे यह चरण नहीं है । ३. प्र० ३ मन मे
नहीं । ४. प्र० १ कछु न चीनी ।

तुम तो 'आहि देव'^१ अवतारी । 'तातै'^२ जाति 'करो क्युं न्यारी'^३ ।
 मानिक^४ रंक हाथ जो 'चढै'^५ । 'कंचन'^६ बिनु कहीं 'अनत न जडै'^७ ॥३७८॥
 देवन की उतपत्ति सुनाऊं । निंदा कहा आप मुख गाऊं ।
 'एतो मोपै कहै'^१ न आवै । जैतमाल मधु कुं समझावै ॥३७९॥

(मधु वाक्य दूहा)

'सबै सयानप'^१ 'छुडि'^२ दे 'जैतमाल'^३ सुनि बैन ।
 पूरबली पूरब 'कुं'^४ गई सो अब 'बासर'^५ रयणि ॥३८०॥

(चोपई)

पूरबली तुम सबै बिसारो । 'अब'^१ तो लादि गयो विणजारो ।
 तिथि बीती कोइ बिप्र न बूझै । तिन को जैत सयानप 'सूझै'^२ ॥३८१॥
 राजा मीत सुने नही 'कोई'^१ । तीनलोक में बूझो लोई ।
 काहू करी न कोऊ करिहै । 'नृप की प्रीत न आगे सरिहै'^२ ॥३८२॥
 एक त्रिया जात अरु नृप 'बंसी'^१ । एह नही प्रीत 'संपूरन'^२ कैसी ।
 जैसी लता करेली करै । 'न्यारी'^३ बोहोर बकाइन 'चढिहै (चढै)'^४ ॥३८३॥

[३७८] १. प्र० ३ दे आवहि । २. प्र० ३ उनकी । ३. प्र० १ करै कुण नारी ।
 ४. प्र० २ में यहाँ 'राव' और है । ५. प्र० १ चार । ६. प्र० ३
 कनक । ७. प्र० १ अंत न जार, प्र० ३ अग न बदे ।

[३७९] १. प्र० ३ एतो मो कुं कहत, तृ० १ जैतमाल हेत ।

[३८०] १. तृ० १ स्यामपि सूझै । २. प्र० ३ छोड । ३. प्र० ३ मधु मालती ।
 ४. प्र० ३ सु । ५. प्र० १ बीसरे, प्र० ३ वासो ।

[३८१] १. तृ० १ सो । २. प्र० १, २ बूझै (किन्तु यह पूर्ववर्ती चरण का
 तुक है) । ३. प्र० ३ में यह नहीं है, किन्तु परवर्ती छंद के लिए
 आवश्यक है, इस लिए भूल से छूटा लगता है ।

[३८२] १. प्र० ३ कवही । २. द्वि० १ नृप कुवरी नृप कुवर कू बरिहै,
 तृ० तापर बहुत बकायण परै (तुल० ३८३ ४) ।

[३८३] १. प्र० ३ वेसी । २. प्र० ३ न पूरन । ३. प्र० ३ तापर । ४.
 प्र० ३ फिरे ।

(५६)

(काव्य)

काके शौच्यं द्युत कार्येषु सत्यं
झीवे धैर्यं मद्यपे तत्त्व चिन्ता ।
सर्पे चान्तिः स्त्रीषु कामोपशान्तिः
राजा मित्रं केन दृष्ट श्रुतं वा ॥^१३८४॥

(चोपई)

‘काग ज’^१ ‘सुच्या’^२ ‘सुनो’^३ नही कोई । जूवां ठोरि ‘जिहां’^४ सत्य न होई ।
‘विहवल’^५ कोई सूर न देख्यो । ‘सुरापान कोइ तज न पेघो’^६ ॥३८५॥
सरप षांति बिन खाए रहै । काठ अगिन बिन जारे दहै ।
पुनि त्रिय काम ‘त्रपत’^७ ‘कित’^८ होई । ‘तैसे’^९ राजा मीत ‘सुने’^{१०} नही कोई ॥^{११}३८६॥

(दूहा सोरठा)

राजा मीत न होइ बूझो जो कोऊ कहै ।
मन गत लखे न कोए गज ‘दरसन’^१ बारिज ‘कमल’^२ ॥३८७॥

(जैतमाल वाक्य चोपई)

तू ‘दच्छन लच्छन’^१ चित धारै । मालती तो अनुकूल बिचारै ।
पूरब प्रीत जान(जानि)चित‘धरिण’^२ । नातर बनिक मित्र को ‘करिण’^३ ॥३८८॥

[३८४] १. प्र० ३ में यह छंद नहीं है, किन्तु परवर्ती छंद में उसका भाषांतर है, इसलिये यह छंद भूल से छूटा लगता है ।

[३८५] १. तृ० १ कागश्वर । २. प्र० ३ तृ० १ सुच । ३. प्र० १ सुनु (= सुनो), प्र० ३ सुने । ४. प्र० ३ तिहा । ५. तृ० १ भागे दल । ६. प्रथम शाखा की समस्त प्रतियों में है : सुरातन कित चिन्ता पेघो, जो संस्कृत श्लोक से भिन्न है, तृ० १ सुरापान कित चिन्ता पेखे ।

[३८६] १. प्र० १ साज । २. प्र० ३ ज । ३. प्र० १ जैते । ४. प्र० १ में यह शब्द नहीं है । ५. तृ० १ में छंद है : सरब खाय बिनषाए डरियै । त्रिया सग जन अपजस धरियै । राजा मित्र सुन्यो नहि कोई । जैतमाल सब पूछै लोइ ।

[३८७] १. प्र० ३ दसण । २. तृ० १ गहै ।

[३८८] १. प्र० ३ लछिन दसीन । २. प्र० ३ धरे । ३. प्र० ३ करे ।

(५७)

(अलोक)

न चार्थं न च सामर्थं वणिक मित्र कदाचन ।
प्रज्वलितं घन केशानां अगारोऽति च भस्मकर^१ ॥३६६॥

(चोपई)

“आरत”^१ भीर ‘टरे’^२ नहीं कैसे । बनिक मित्र केरी गति जैसे ।
जैसे जलै केस के भारे । भस्मी होए न ‘परे’^३ अंगारे ॥३६०॥

(मधुवाक्य)

तू ‘ए बात कौन पर’^१ कहै । पंनग तिहां न दीपग रहै ।
राज काज की ‘बात नयारी’^२ । ‘को बूझे गूंगे की गारी’^३ ॥३६१॥
‘सीखो जाए’^१ बात की कीली । ता पीछे तुम करो उकीली ।
‘देखी’^२ सुनी न कबहूँ कीगे । अपने ‘कुलां क्रम’^३ चित दीजे ॥३६२॥

(अलोक)

शस्त्रे शूराः रणे धीराः परस्पर विरोधिनः ।
नही विप्राः राजयोग्याः भिन्नायोग्य पुन पुनः ॥३६३॥

(चोपई)

‘गधो रे चढ़ि’^१ रण ‘कबहु’^२ न लरै । परस्पर अति विग्रह करै ।
स्वारथ त्रिषुना अति घन ‘बाढी’^३ । ‘आ थे’^४ भीष कपालै ‘चाढी’^५ ॥३६४॥

[३६६] १. प्र० ३ मे यह छंद नहीं है, किंतु भाषांतर का बाद का छंद है, इस-
लिए यह छंद उसमे भूल से छूटा लगता है ।

[३६०] १. तृ० १ अर्थ । २. तृ० १ सरै । ३. प्र० १ प्र ।

[३६१] १. प्र० ३ कही बात एकन सु । २. प्र० ३ गति एक न बूझे
(तुल० छंद ३६५) । ३. प्र० ३ इन कु भीष मागवो सुझे (तुल०
छंद ३६५) ।

[३६२] १. तृ० १ पेहली सीष । २. तृ० १ कही । ३. प्र० १ कल क्रम,
प्र० ३ कुल कर्म ।

[३६४] १. प्र० ३ घर बाहिर । २. प्र० १ कबहु । ३. प्र० २ गाढी । ४.
प्र० १ आप थे, प्र० ३ ताथे । ५. प्र० १ चाटै । ६. यह छंद
प्र० ४, तृ० १ में नहीं है ।

(५८)

ज्युं चकोर पाउक भख करै । पंछी अवर छीवत 'ही'^१ मरै ।
राजकाज गति 'एक न बूझै'^२ । 'ते कुं भिख्या मंगवौ सूझै'^३ ॥३६१॥

(जैतमाल वाक्य)

मधु ए वचन 'सुनहु'^१ मन धारी । 'अपनी गरज सहूँ तो गारी'^२ ।
तुम दोउ 'मिलन'^३ लिख्यो करतार । 'जब'^४ तब गगा 'सोरम'^५ पार ॥३६६॥
नर अति 'आप'^१ सयानप करै । जो लुत्रिया सुं काम न परै ।
कंवळ कटाख बाण उर लागै । ग्यान ध्यान 'तजि कै सब'^२ भागै ॥३६७॥

(दूहा)

तौ लुं पुरष गहै बेद बिधि तौलुं करै सियान ।
जो लुं उर भेदै नही त्रिया दग बारिज बान ॥३६८॥
ताम सयानप ताम गुन ग्यान ध्यान तप नांम ।
जावत रमणी रूप के बाण न लागै जांम ॥३६९॥

(चोपई)

मधु 'सु'^१ बातन की भर लाई । सखी पठाए मालती बुलाई ।
औचक आनि 'दामिन सी'^२ कौधी । निरखत नएन 'भई'^३ चकचौधी ॥४००॥

[३६५] १. प्र० ३ जरि । २. प्र० १ एक ही नारी (तुल० ३६१), प्र० ३
कि वाता न्यारी । ३. प्र० ३ को बूझे गूगे की गार ।

[३६६] १. प्र० ३ मान । २. प्र० ३ अपनी गरज सबन कुं प्यारी, तृ० १
अपने काज सहू सब गारी । ३. प्र० १ मिली । ४. प्र० १ तब । ५.
१ सौलौ, तृ० १ सौरु ।

[३६७] १. प्र० ३ आए । २. प्र० ३ जरी कै सब, द्वि० १ तन ते तजि । ३.
प्र० ४, द्वि० १ मे यह छंद नहीं है ।

[३६८-३६९] प्र० ३ मे इन दो दोहो के स्थान पर पाँच अन्य दोहे हैं (दे०
परिशिष्ट) ।

[३६९] १. प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ मे यह छंद नहीं है ।

[४००] १. प्र० ३ कु । २. प्र० ३ काम को । ३. प्र० १ मए ।

तब परेच 'भांषित'^१ मुख देख्यो । 'अचक'^२ रूप 'नखसिख लुं पेख्यो'^३ ।
 उपमा 'कोन'^४ पटंतर 'कोहूँ'^५ । सुरनर नाग 'त्रिया'^६ मन मोहूँ ॥४०१॥
 बदन कलानिधि रूपइ तरुनी । कबि 'को(उ)उपमा'रूप'^१ न बरनी ।
 सखि कला घटि घटि 'केतन'^२ बाढ़ै । मुख सोभा दिन दिन अति 'चाढ़ै'^३ ॥४०२॥
 वेणी 'मांग मध्य'^१ 'दई'^२ पाटी । मानुं सेस फुनि करवत काटी ।
 तापर सीस फूल मणि धारी । मृगमद तिलक 'रसना'^३ दे(दई)कारी ॥४०३॥
 सुभग 'हुंह'^१ स्यामता सुहाई । 'कलम'^२ हाथ सरसती बनाई ।
 कीधुं काम धनुक कर 'तूटे'^३ । चितवत 'ज्युं नावक सर'^४ 'छूटे'^५ ॥४०४॥
 नयन कम दल मधुकर 'बैठै'^१ । मृग खंजन आरन उर 'पैठै'^२ ।
 फुनि बिसाल राजै द्विग 'कोए'^३ । मानुं मीन माह जल 'धोए'^४ ॥४०५॥
 'नासा कैसू कली बनाई'^१ । 'केहर नख'^२ 'मुख सूकै पाई'^३ ।
 मुकता चार 'अलक ढिग सोहै'^४ । 'अंजन पर जैसे'^५ नागिन रोहै ॥४०६॥
 अधर 'प्रवाली'^१ निरखत हारे । फुनि बिंबा पाके 'निरहारे'^२ ।
 तामै दसन मुसक(मुसकि)मन मोहै । 'निसि अँधियारी बीज सो कोहै'^३ ॥४०७॥

[४०१] १. प्र० १ ऋषी । २. प्र० ३ अछे । ३. द्वि० १, तृ० १ कलानिधि ।

४. प्र० ३ केहु । ५. प्र० १, २ कहूँ, प्र० ३ कोउ । ६. प्र० ३ तिहुं ।

[४०२] १. प्र० ३ ओर । २. प्र० १ तन । ३. प्र० ३ काटे ।

[४०३] १ प्र० ३ मध्य मद । २. प्र० १ दे । ३. प्र० १ रस । ४. तृ० १ उदकारी ।

[४०४] १. प्र० ३ सोह । २. प्र० ३ कलमा । ३. प्र० १ तूतै, प्र० ३ तुटी ।

४. प्र० १ वलीक नवरस प्र० ३ ज्यु नव के सब । ५. प्र० १, ३ छुटी ।

[४०५] १. प्र० १ बैठो । २. प्र० १ पैठो । ३. प्र० १ कोई । ४. प्र० १ धोई ।

[४०६] १. प्र० १ में यह चरण छूटा हुआ है । २. तृ० १ केशर पै नष । ३. प्र० ३ के सु सुख पाई, तृ० १ की सुल सूनाइ । ४. प्र० १, २ अल-
 क्रित सोहै, प्र० ३ अली की त सोहै, तृ० १ अब तिहा मोहै । ५. प्र० ३ ता ऊपर फुनि ।

[४०७] १. प्र० १ प्रवाकै । २. प्र० ३ परिवारे । ३. द्वि० विज की मनो रक्त घन कोहै; तृ० १ में यह चरण नहीं है । ४. प्र० ३ मे अर्द्धाली है ; निस पदित पातसि सोहे । देषत मुनिजन के मन मोहे ।

ठोडी कुमद कली फुनि कोरी । सोभा 'सभुक तास पर दौरी'^१ ।
 मृग मद बुंद किधुं 'तिल'^२ बाढे । कै अलि 'कंज'^३ कोरि कै काढे ॥४०८॥
 ग्रीवा निरखि 'कपोति'^१ लजानी । 'फुनि जराव भूखन तिहां बानी'^२ ।
 चौकी स्याम डोरि 'छवि'^३ पाए । मानुं कार्लिंदी तट 'नवग्रह'^४ आए ॥४०९॥
 कुच स्यंभू किधुं संपुट 'चाढे'^१ । कुंज कोस किधुं नारग 'बाढे'^२ ।
 तापर 'खमक'^३ कचुकी 'दीनी'^४ । 'मानुं'^५ 'सनाह'^६ 'काम तै'^७ कीन्ही ॥४१०॥
 लहंगा 'जरद जराव'^१ अतलस को । तापर चीर जरद जरकस को ।
 सूधै सगग बगग^२ सूथरी । मानुं इंद्र 'भवन'^३ ऊतरी ॥४११॥
 'भुज'^१ मृनाल कीधुं 'बोहोतक'^२ गौभा । कै सुंदर कदली सुत सोभा^३ ।
 तापर बलय बहुरि छवि 'छाए'^४ । 'मानु बाल ससि बे'^५ कर नाए ॥४१२॥
 अंगुली 'कली कनीर'^१ बनाई । फुनि पोहचै पोहची छवि छाई ।
 'जैसे कंवल कली अलि लागै । सच पाए उमंगो रस पागै'^२ ॥४१३॥

[४०८] १. प्र० ३ त्रिबुध तास वषरी । २. प्र० १ तल्या, प्र० ३ तन । ३. प्र० १ कुज, प्र० ३ के ।

[४०९-४१४] प्र० १ मे ये छंद नहीं है ।

[४०९] १. प्र० ३ नपोत । २. द्वि० १ पोतछटा छवि की अधिकार है ।
 ३. प्र० १ छीव । ४. प्र० १ नवर्गा, प्र० ३ मोग्रह ।

[४१०] १. प्र० ३ बाढे । २. प्र० ३ चाढे । ३. प्र० १ षम । ४. प्र० १ दीसि । ५. द्वि० १ शभु । ६. प्र० १ सहा, प्र० ३ हेम । ७. द्वि० १ कमंडल ।

[४११] १. द्वि० १ गहनो निकसो । २. प्र० ३ मे यहाँ 'रही' और है । ३. प्र० ३ भुवन मे ।

[४१२] १. प्र० ३ भुजग । २. प्र० ३ बोहम । ३. प्र० १ मे यहाँ 'की' और है । ४. तृ० १ पाए । ५. प्र० १ मानुबाल ससि ये, प्र० ३ मानु बाल दसिद । द्वि० १ तृ० १ काम कटक (सटक-तृ० १) सोभा । ६. द्वि० १, तृ० १ मन भाए ।

[४१३] १. प्र० १ कनीर के । २. प्र० ३ मे यह अर्द्धाली नहीं है, प्रसंग मे आवश्यक है, इसलिए भूल से छूटी लगती है ।

नाभी 'बल्ली'^१ 'दाढिक घटी'^२ जैसी । फुनि त्रिबली सजैहत (१)कैसी ।^३
 पैबी काम चढण कूं कोन्ही । कै बिधि आनि अगुरी दीन्ही ॥४१४॥
 अंगी कटि किधु केहर ढब ही । मानुं तूट परै जिन अब हीं ।
 तापर 'छुद्र'^१ घंटिका बघी । मानुं बिधि 'तुच्छ जानिकै'^२ संधी ॥४१५॥
 कनक खंभ कदली 'जघ'^१ सोहैं । 'पाधरि'^२ काम तरक्कस ल्यों हैं ।
 किती एक कहूँ 'बहुरि छबि'^३ ऐसी । औंड़ी 'इंद्रायन'^४ फल जैसी ॥४१६॥
 राजहिं चरण फवल रबि बसी^१ । गज मराल केरी गति बिहंसी ।
 'नूपर रविहिं'^२ सुरत के सुरे । मानुं काम दूत है पूरे ॥४१७॥

(दूहा सोरठा)

'द्वादस'^१ अभरण अंग सजि फुनि सिंगार नवसात ।
 उलटी सोभा 'उनकु'^२ भई देखो 'घौं'^३ इह बात ॥४१८॥

(दूहा)

काठ बनाए सिगारीय सो फुनि सोभा 'होए'^१ ।
 बिना भूषन तन राजही साची 'सोभा सोए'^२ ॥४१९॥

(चोपई)

मालती बिन भूषन तन सोहै । सोभा 'साज देखि सुर'^१ मोहै ।
 तीन लोक 'मैं भई न कोई'^२ । 'बिधि बनाय कलसा सी'^३ 'घोई'^४ ॥४२०॥

[४१४] १. द्वि० १ कूप । २. तृ० १ दीहुम फल । ३. प्र० ३ मे यह अर्द्धाली नहीं है प्रसंग में आवश्यक है, इसलिए भूल से छूटी हुई लगती है ।

[४१५] १. प्र० ३ छिद्र । २. तृ० १ सुजान के ।

[४१६] १. प्र० ३ जुग । २. प्र० ३ पीधरि । ३. प्र० ३ काम तरे जुग मोहे द्वि० १ जान पचसर मोहै । ३. प्र० १ छुन्या । ४. प्र० १ चंद्राण्य ।

[४१७] १. प्र० १ छुवी वसी, प्र० ३ रविवेसी । २. प्र० १ उनव रवही, प्र० ३ नूपर रचे, तृ० १ नेउर रविहिं । ३. प्र० १ मे यह छद नहीं है ।

[४१८] १. प्र० ३ षटदस । २. प्र० ३ वाकु । ३. प्र० १ मधु ।

[४१९] १. तृ० १ देह । २. तृ० १ उपमा तेह ।

[४२०] १. प्र० १ सीय देसु रा, तृ० १ देषत कामी मन । २. प्र० १ मैं भई न कोई, प्र० ३ भइ कहु न सोहे, तृ० १ हुई न होई । ३. तृ० १ बहु बिघना औसी कर । ४. प्र० १ घोई, प्र० ३ घोहे । ५. द्वि० १ में

(जेतमाल वाक्य दूहा)

षट् रिति बारा मासं तुं चात्रक 'मंद'^१ पियास ।
स्वाति बुंद 'पाउक' भरै तो रे पुकारै कास'^२ ॥^३४२१॥

(सोरठा)

बूझो सयाने लोए हूँ तोसुं केती 'कहूँ'^१ ।
मांगे मिलै न दोए एक मोती दूजी मालती ॥४२२॥
'ज्युं दधि मंथन'^१ होय एह गति मन की बूझिए ।
बोहोर न जामै सोय माखन तक मिलाइयै ॥४२३॥

(श्रलोक)

अजा युद्ध 'मुनि आप'^१ दपति कलहमेव च ।
चत्वारो विलभीर्य याति प्रभाते मेघ डंबरे ॥४२४॥
अजाजूध तै चांट न 'परही'^१ । 'मुनि के सरापि'^२ डरभ कित चरही'^३ ।
दंपति कलह निसा नहि 'न्यारे'^४ । बरघै नही प्रात घन वारे ॥४२५॥
नीरस बचन तुम मुख उच्चरही । सुनत बचन मालती अब मरही ।
सबही सयानप जेहै तेरो । मधु एह बचन सत्य सुनि मेरो ॥४२६॥

(मधुवाक्य)

औसै बचन 'नही'^१ चित धरिहूँ । 'फुनि कबहूँ विभचार न करिहूँ'^२ ।
'जीय तै सत्य न तजिहूँ मेरो । करिहै जैत कहाँ लु सेरो'^३ ॥^४४२७॥

अर्द्धाली का पाठ है : बस चतुर्दश लच्छुन पूरी । पूरन कल सकल
विधि सूरी ।

- [४२१] १. तृ० १ मरे । २. द्वि० १ बिन सुख नहीं रटत सदा मधु आस ।
३. प्र० ३ मे यह छंद नहीं है ।
- [४२२] १. प्र० ३ कही ।
- [४२३] १. प्र० १ जो दध्या मथन, प्र० ३ दधि माखन ।
- [४२४] १. प्र० १ मना अपि, प्र० ३ जटा आक ।
- [४२५] १. प्र० ३ परहे । २. प्र० १ मनि के सराप, तृ० १ द्विज के सराप ।
३. प्र० ३ दंभ अती करहे । ४. प्र० १ न्यरितता ।
- [४२७] प्र० ३ जोय । २. द्वि० १ देह विदा यह कबहु न करिहूँ । ३. प्र० ३
१. मे अर्द्धालीहैः सबे सयानप जेहे तेरे । मधु ए सत्य बचन सुनि मेरो ।
४. प्र० ३ मैं यह छंद ४२८ की प्रथम अर्द्धाली के बाद आता है ।

जैत माल मन मध्य विचारै । 'वात कहत ये'^१ कबहुं न हारै ।
 अगरो ही 'सगरो'^२ दिन जैहै । पाछै 'मंत्र'^३ काज 'काहा'^४ करिहै ॥४२८॥
 जिन मंत्र 'ते'^१ तरवर सूकै । फुनि सूके ते 'पल्लव'^२ मूकै ।^३
 माते कुंजर मद जो 'उतारु'^४ । सोई 'इन बरियां क्युं'^५ न 'संभारु'^६ ॥४२९॥
 मधु चरित्र ए निरखि 'निहारी'^१ । पढ़ि कै 'मंत्र'^२ मोहिनी डारी ।
 बसि कीनो 'अरु'^३ बात लगायो । 'फुनि थल आगै उतर बतायो'^४ ॥४३०॥

(जैतमाल वाक्य)

मधु तैं कहाँ सो मेरे मनमानी । 'बीभचार'^१ दूसन ए ठानी ।^२
 देवन मै बीती सो कोजे । 'मेरो बचन सत्य सुनि लीजे'^३ ॥४३१॥
 उषा अनिरुद्ध भई है ज्यूही । 'गंध्रप'^१ ब्याह करो तुम त्यूंही ।
 पूरब नेह प्रेह चित दीजै । इन बातन कुं बिलंब न कीजै ॥४३२॥

(मधु वाक्य)

पूरबली, गति कोह न जानै । अब तो नूतन 'बनिक की'^१ ठानै ।
 लरक बुद्धि जो 'मन'^२ मे धरिये । इन बातैं नाही 'विस्तरियै'^३ ॥४३३॥

[४२८] १. प्र० १ वितैहै जो । २. प्र० ३ सघरो । ३. प्र० १ मीत्र । ४.
 प्र० ३ कित ।

[४२९] १. प्र० १ भी । २. प्र० ३ तन जीम । ३. द्वि० १ में अर्द्धाली
 का पाठ है : जिन मंत्रन सरिता सर सूके । पुनि सकेत रूप ले टूके ।
 तृ० मे है : जिन मंत्रन चलिता जल चूकै । सूका तरवर पल्लव
 मूके । ४. प्र० ३ उतारे । ५. प्र० १ व को । ६. प्र० ३ सभारे ।
 ७. तृ० १ में चरण का पाठ है : सोई वीर हू अबही हंकारुं ।

[४३०] १. प्र० १ निहारै । २. प्र० १ मीत्र । ३. प्र० १ डर । ४. द्वि० १
 तौ लौ मत्र और पढ़ि धायो ।

[४३१] १. प्र० ३ विन बिचार । २. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : कछू
 एक मधु मानत नाही । कबहुं उतर देत कछू नाहीं । ३. द्वि० १ छाड़ि
 सियानप वचन चित दीजै ।

[४३२] १. प्र० ३ कद्रप । २. यह छंद प्र० ४, तृ० १ में नहीं है ।

[४३३] १. प्र० १ कु । २. प्र० ३ जीअ । ३. तृ० १ में यह चरण नहीं है ।

सुनत राए खिन एक मै मारै। निस्वारथ ए बुद्धि विचारै।
बिगरे मते जो 'बसीठी'^१ करिहो।^२ साप छुछुदरि की गति 'सरिहो'^३॥४३४॥

(मालती वाक्य)

असै बचन 'कवन पै'^१ भाखै। 'तो कुं हते स मोही राखे'^२।
पूरब प्रीत 'जोही'^३ चित धरिण। मरवे काज 'कहां लु'^४ डरियै॥४३५॥
जनम धरै सो सब 'जुग'^१ मरै। याको सोच न कोऊ करै।
अब 'जिन'^२ जिय मै अवर विचारै। सुख दुख लिषो सो कोइ न 'टारै'^३॥४३६॥
मधु कुं 'पाय'^४ मंत्र बस कीनो। उत्तर नीठ नीठ करि दीनो।
निरखि मालती रूप 'लोभानो'^१। रित बसंत पाये पिक मनु(मानो)^२॥४३७॥
नर अति आप सयानप धारै। सगरे 'जुग कुं जीति'^१ उबारै।
करता तिही ठाहर प्रब गारै। 'गरब करै सो पूरष'^२ हारै॥४३८॥
जे जे बात जैत उच्चारही। 'मधु सोई सुनि कै चित धरही'^१।
कीनुं 'लरमु'^२ हुतो जे लाकर। 'फुनि जो(ज्युं)बाजीगर को'^३ माकर॥४३९॥
लीनुं लगन 'बेद जुग ज्युही'^१। परसे पानि परसपर ल्युंही।
कर कंकण अंचरा गहि बांधो। तूठो नेह 'परसपर'^२ सांधो॥४४०॥

[४३४] १. प्र० १ बसीठी। २. तृ० १ मे चरण का पाठ है : बिगर परे बसिठ
कहा करिहै। ३. प्र० ३ घरहो, तृ० १ भरिहै।

[४३५] १. प्र० ३ कोप करि। २. प्र० ३ जे कही ते सो मोही भाषे। ३. प्र०
१ जान। ४. तृ० १ कवन तैं।

[४३६] १. द्वि० १ ही। २. प्र० जनम। ३. तृ० ३ सारे।

[४३७] १. प्र० ३ बाधि। २. प्र० १ लोभाणी। ३. तृ० १ मे अर्द्धाली है :
एक मेरे मन लब्धा होइ। जग मा भलो ना कहे कोइ।

[४३८] १. प्र० ३ जनक जनम। २. प्र० ३. गरब करै सो पूरष, द्वि० १
अतहि आइ जिया यै।

[४३९] १. प्र० १ मे यह चरण दुहराया हुआ है। २. प्र० १ लरमु। ३.
प्र० ३ ज्यु वसि होय जोगी के। ४. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है :
मधु बस कीन्हो द्विज की बारी। मालति काज सकल विधि सारी।

[४४०] १. प्र० ३ वेध टाल युही। २. प्र० ३ बहुरि फिरि।

रखे कलस जुं अंबुज केरा । मधु मालती कराया फेरा ।
मंगलाचार जैत उच्चरही । 'सुर निरखैं तिहां अति सुख'^१ धरहीं ॥४४१॥

(दूहा)

'विचि ब्याही'^१ मधु मालती 'सुर निरखैं सुख होए'^२ ।

फुनि बिग्रह बाढ़ै कथा चित दे सुनियो सोए ॥४४२॥

(चोपई)

राम सरोवर के ढिग बारी । बिलसैं सुख मधुमालती नारी ।
लाली एक दुन्यो तिहां रहै । 'सगली'^१ बात राय सुं कहै ॥४४३॥
मंत्री सुत अरु राज कंवारी । दिवस ब्यारि के 'तजी न बारी'^१ ।
'करैं किलोल'^२ कछु संकन धरैं । मो पै कछु एक कहत न परै ॥४४४॥
नूप दुख पाइ महल में आये । कनकमाल त्रिय बेग बुलाए ।
'सुनी'^१ हो बात कन्या क्रम काढ्यो । मंत्री सुत सुं नेह ज बाढो ॥४४५॥
कन्या उदर पढो जिन कोई । सुख चाहत 'तिहां दुख जै'^१ होई ।
नीके कहै तो ग्रिह प्रथ खोवै ।^२ बिगरे तो दोऊ कुल रोवै ॥४४६॥
'कहै'^१ बेग पायक 'हंकारो'^२ । मधुमालती दोउन कुं मारो ।
'एक'^३ कहत सौ एक अनुसरै ।^४ तोखुं कनकमाल काहा करै ॥४४७॥
चेरी एक 'उहि बेर'^१ बुलाई । पठई 'बेग राम सर'^२ जाई ।
मधु मालती दोउन 'कू'^३ कहियो । तजियो देस उहि ठोर न रहियो ॥४४८॥

[४४१] १. प्र० ३ सूरवीर तिहा घीरज ।

[४४२] १ प्र० ३ रन्यो व्याह, द्वि० १ बना व्याह । २. द्वि० १ जैतमाल
जस होइ, तृ० १ धवल मंगल सुख होई ।

[४४३] १. प्र० ३ सगली ।

[४४४] १. प्र० ३ निजतन कारी । २. प्र० ३ करे केल ।

[४४५] १. प्र० ३ सुनो ।

[४४६] १. प्र० ३ ताकु दुष । २. तृ० १ नारि रहै तो सबइ बधावै

[४४७] १. प्र० ३ कहो । २. प्र० ३ हंकारो । ३. प्र० ३ इह । ४. द्वि० १ मे
चरण का पाठ है : यह विचार राय चित धरै । ५. तृ० १ मे अर्द्धाली
है : एते कहत नीर भरि आयो । कन्या जनम कौन सुख पायो ।

[४४८] १. प्र० १ उही ऐक बेग, प्र० ३ एक उहां बेर । २. प्र० ३ राम
सरोवर । ३. प्र० ३ सू ।

म० वार्ता १ (११००-६३)

नूपत दूत पठयो तुम मारण । हु 'सुघ देहुं तुम धीय के' कारण ।
सुनि त मालती अति बिलखानी । मधु के कठ दोरि लपटानी ॥४४३॥

(मालती वाक्य)

प्रीतम बचन श्रवण सुनि लीजे । 'इण'^१ ठाहर रहि नीर न पीजे ।^२
चढ़ी (चढिय) तुरग अब बिलंब न कीजे । जाइये तिहां दिना दस जीजै ॥४५०॥

(श्लोक)

यत्र जलं तत्र तीर्थं यत्र 'अन्न'^१ तत्र देवता ।
यत्र भार्या गृहं तत्र 'स्वदेशो'^२ यत्र जीवनं ॥४५१॥

(सोरठा)

मालती धर 'जीय'^१ धीर मोहि गिल्लोल करता दई ।
अजहुं 'परै न'^२ भीर ज्यु मलयंद सुत सुं भई ॥४५२॥

(चोपई)

बोहोर मालती बूझै अरैसी । मलयद सुत सुं भई सो कैसी ।
'जो'^१ 'प्रसग भयो समीयो'^२ 'जैसी'^३ । मधु 'सु'^४ कहो बात है कैसी ॥४५३॥

(मधु वाक्य)

चंपावती नूपति मलयंद । ताको 'कवर'^१ नाम जसु चंद ।
बरस बीस बाईस मै सोई । तास पटंतर अवर न कोई ॥४५४॥
'जास'^१ मंत्रि ग्रह कन्या 'सुदरि'^२ । बरस 'अठारह'^३ माहि 'पुलंदर (पुलदरि)'^४ ।
रूप रेखा नाम तसु सोहै । जां देखे सुर नर मन मोहै ॥४५५॥

[४४६] १. प्र० १ सुघ देह घीह हाकै ।

[४५०] १. प्र० ३ इह । २. तू० १ मे चरण हैः एही ठोर को
नाम न लीजै ।

[४५१] १. प्र० ३ अग्नि । २. प्र० ३ सुदेसे ।

[४५२] १. प्र० ३ मन । २. प्र० ३ न परिहे ।

[४५३] १. प्र० १ जे । २. प्र० १ समीयो भयो बात कहो । ३. प्र० ३ जैसे ।
४. प्र० ३ सुनाम ।

[४५४] १. प्र० ३ कुमार ।

[४५५] १. प्र० ३ तास । २. द्वि० १ अनबरी । ३. द्वि० १ चतुर्दश । ४.
प्र० ३ पुरंदर ।

सुर समीप जिहां सुंदर बारी । 'पोहोप'^१ सुगंध जिहां सुखकारी ।
 कुंवरी सयल करण तिहां आवै । जाई 'जूई'^२ कुंज बणावै ॥^३४५६॥
 तिहां कहुं चंद कुंवर सुनि पाई । काम 'लालच मनसा हो आई'^१ ।
 'फेरी च्यारि बाग में करै । रूपरेख कारण मन धरै ॥४५७॥
 मालन एक 'डोकरी'^१ रहै । ता 'सु'^२ चंद कुंवर 'यु'^३ कहै ।
 'कुंज 'कोठरी'^४ करि इहां नीकी । 'फूली'^५ लता जाइ जूही की ॥४५८॥
 नीकी ठोर निरषि सुख 'पैहु'^१ । तोकुं उचित द्रव्या 'बोहु'^२ देहु ।^३
 'एह बचन कहि 'मिंदर'^४ आयो । कहो सो मालनी तुरत वणायो ॥४५९॥
 रूपरेख कुं घर न सुहाई । षरे 'दो पोहरे'^१ बाग में जाई ।
 निरषि 'कुंज'^२ नयन सुख 'पाए'^३ । रूपरेख जिय भरम भुलाए ॥४६०॥
 जान्यो मालती 'मोहि'^१ बुलाई । सखि इन 'छांड़ि'^२ आप तिहां आई ।
 मालती चंद कुमर कुं जानै । रूपरेख कुं नाहि पीछानै ॥४६१॥
 तो लुं चंद कुमर तिहां आयो । जुगल परसपर दरसन पायो ।
 'देषो धूं करता की करनी । निरषत 'गिरे'^१ बिकल होय धरनी ॥४६२॥
 मालती मन में सोच अति करै । सकै 'सीत'^१ भए दोड 'परै'^२ ।
 पीपर बांटन वु 'ग्रह'^३ दौरी । भयो प्रसंग इहां कछु औरी ॥४६३॥
 बपु संभार दोड उठ बैठै । मानुं 'मैन'^१ बान उर पैठै ।
 कुमरी 'चित्त'^२ चमक सुसकानी । चंद कुंवर सब जिय की जानी ॥४६४॥

[४५६] १. तृ० १ परमल । २. तृ० १ कुछु कहे । ३. यह छंद प्र० ३ में नहीं है, किन्तु प्रसंग में आवश्यक है, इसलिए छूटा लगता है ।

[४५७] १. प्र० ३ लालसा मनह जणाई ।

[४५८] १. द्वि० १ सुधर तिहा । २. प्र० ३ कुं । ३. तृ० १ एम । ४. प्र० १ कटोरी । ५. प्र० ३ कुनि ।

[४५९] १. तृ० १. पाऊ । २. प्र० ३ बहु । ३. तृ० १ में चरण का पाठ है । मालत तोहि सिर पचि पहिराऊ । ४. प्र० १ मींदर, प्र० ३ मंदिर ।

[४६०] १. प्र० १ दोहो परै, प्र० ३ दोपहरां । २. प्र० १ कुंद । ३. प्र० ३ पावे ।

[४६१] १ प्र० ३ बेग । २. प्र० ३ छोरा ।

[४६२] १. प्र० ३ गिरी ।

[४६३] १. प्र० १ सीस । २. प्र० ३ मरे । ३. प्र० ३ ग्रह कु ।

[४६४] १. प्र० ३ मीन । २. प्र० १ चेत ।

गही बाढ़ 'अंक'^१ उर 'फरसी'^२ । माहुं छूट गई काम करसी ।
 तन मन प्रान भए एक दोऊ । कहिए कोन भांत सुं 'सोऊ'^३ ॥४६५॥
 'बांधी'^१ सहेटि दोउ एक ठिकाणे ।^२ तीजो बात न कोऊ जाणै ।
 मधि रयणि समियो 'जिहां'^३ होय । बांधे बचन मिलैं तिहां दोय ॥४६६॥
 एक दिवस 'बाटिका मंझार'^१ । रूपरेख अरु चद 'कुमार'^२ ।
 कुसम सेरु रचि 'बैलै'^३ 'दोई'^४ । फुनि अंछा काम की 'होई'^५ ॥४६७॥
 रचे अंग सुगंध सुवासन । 'रति सुख सुरत मिले सुख आसन'^१ ।
 'बह'^२ बरिया एक नाहर आयो । रूपरेखा डरि, सबद सुनायो ॥४६८॥
 तजो मोहितुम उठि 'क्युन'^१ 'भाजे'^२ । 'यो नाहर निरखो'^३ मुंह 'आगों'^४ ।
 चित दे सुणो 'हिमत की'^५ साखी । चद कुंवर जैसे दूद राखी ॥४६९॥
 त्रिया आसन गह राषो 'असै' । कर कवाण कंवर गही 'तैसै'^२ ।
 'बबक'^३ 'बाघ ने सुक्ख'^४ पसाख्यो । देह कसीस 'सीस सुं'^५ माख्यो ॥४७०॥
 फूटो बाण जाय तरु अटक्यो । 'मानु'^१ प्राण 'सींघ ली(लिय) छूटक्यो'^२ ।
 दई कुवाण हाथ तैं डारी । कीधो सेज रमण 'रसकारी'^३ ॥४७१॥
 मन मैं कछु न संका कीनी । करना हिम्मत सपूरन दीनी ।
 'असै'^१ कोऊ धीरज धरिहै । एक बार 'तासु'^२ दई डरिहै ॥४७२॥

[४६५] १. प्र० ३ अरु अंग । २. प्र० १ परसी । ३. प्र० १ जोऊं ।

[४६६] १. प्र० ३ वही । द्वि० १ मे चरण का पाठ है : प्रगट्यौ मैन अधिक
 सुष माने । २. प्र० १ तीहा ।

[४६७] १. प्र० १ वारी के मझारी । २. प्र० १ कुवारी । ३. प्र० १ बैठे ॥
 ४. प्र० १, ३ दोऊ । ५. प्र० ३ भइ सोऊ । ६. तृ० १ से चरण है :
 इच्छा करी काम की दोई ।

[४६८] १. प्र० १ रीत्यं सुष सुरत्य पलई आसन । २. प्र० ३ उन ।

[४६९] १. प्र० ३ कै । २. प्र० १, ३ भाजो । ३. प्र० ३ उह नाहर निरखो,
 तृ० १ सिंघ एक देखे । ४. प्र० १ आगल, प्र० ३ आगों । ५. प्र० १
 हम ताछी ।

[४७०] १. प्र० ३ राषी ऐसी । २. प्र० ३ तैसी । ३. प्र० ३ पटक । ४. प्र० १
 बाघ त मोह । ५. तृ० १ बेग से ।

[४७१] १. तृ० १ सिंघ को । २. प्र० ३, तृ० १ संग लीये छटक्यो । ३-
 प्र० ३ रस नारी, तृ० १ सुषकारी ।

[४७२] १. प्र० १ जैसे । २. प्र० ३ ताछे ।

(६६)

(अलोक)

उद्यमं साहसं धैर्यं बलं बुद्धि पराक्रमं ।
षडेते 'यत्र तिष्ठति'^१ 'तस्य देवो'^२ पि शंकते ॥४७३॥

(मालती वाक्य-चोपई)

कबहुंक हीमति कोऊ धरही ।^१ तो फुनि पांच सात सु लरही ।
'नूप सु'^२ झूम कहां लों कीजे । मधु 'मेरी'^३ बिनती सुण लीजे ॥४७४॥
तैं गिलोल खेलन कुं धारी । परिहै झूम इहां अब भारी ।
बिन आवध तूं 'क्यु'^४ करि लरिहै । 'हाहा दैव'^५ कवन गति करिहै ॥४७५॥
हूं पापनी इतनो नही 'बूझी'^६ । मधु कुं कारन पहली^७ 'सूझी'^८ ।^३
श्री हर आयकैं अगहीं उबारै^९ । पुनि रबि आगै गोद पसारै ॥४७६॥
पहली जनम 'निअरथ'^{१०} गमायो । दूजै भटक भटक 'अब'^{११} पायो ।
फुनि तामैं एह बिग्रह बाढ्यो । करता कौन करम मैं काढ्यौ ॥४७७॥
मालती बिललाये थुं कहै । 'जब'^{१२} गोरी संकर तन चहै ।
स्वामी 'अब'^{१३} इनकी सुध लीजे । पूरन कृपा अनुग्रह कीजे ॥४७८॥
अब ही झूम बोहोत इहां परिहै । अतरेख रहि कै चित धरिहैं ।
'या'^{१४} का जिय की रख्या कीजै । सेवग अपनो जान चित दीजै ॥४७९॥
हर गोरी कोतिग कुं रहैं । 'मालती मधुकर[अ] नेकन कहै'^{१५} ॥
'चिहुं ओर तैं भीर जब परिहै'^{१६} । 'बिन आवध तूं क्युं करि लरिहै'^{१७} ॥४८०॥

[४७३] १. प्र० ३ यस्य विद्यते । २. प्र० १ तस मापी ।

[४७४] १. तू० १ सूर तो सूरापन करही । २. प्र० ३ नृप तुं । ३. प्र० ३ वेरी ।

[४७५] १. प्र० ३ कुं । २. प्र० १ ईहा देवन ।

[४७६] १. प्र० १, तू० १ चीनी । २. प्र० २ लीन्हि । ३. तू० १ में चहै
है : करता कौन बुद्धि मोहि दीनी । ४. प्र० ३ आप उगारे ।

[४७७] १. प्र० १ न अरथ, तू० १ यूही । २. तू० १ मै ।

[४७८] १. प्र० ३ तब । २. प्र० ३ हो ।

[४७९] १. प्र० ३ आ ।

[४८०] १-३. प्र० ३ मे ये तीन चरण छूटे हुए हैं । ३. द्वि० १ मे चरण
का पाठ है : मालति धीरज कैसे धरिहैं ।

मालती तू 'जीय न'^१ दुख पावै । 'लो सामंत'^२ मेरे 'मुख'^३ आवै ।
 बेर बेर कहा करू बडाई । तैं गिलोल की सुधि न पाई ॥४८१॥
 एक गिलोल चोट जब परै । छूटत कोटि कोटि बिस्तरै ।
 'फूटत'^१ अरब खरब जिहां लागै । आवध कहा कहूं 'एहि'^२ आगे ॥४८२॥
 अरजुन कूं गुरु द्रोण 'पढाई'^१ । सो विद्या मै सब सिखि पाई ।
 यातैं हुं कछु जिव न डराऊं । कहै तो तोहि प्रतीत दिखाऊं'^२ ॥४८३॥
 एक गिलोलन सुं ब्रह्म 'मारे'^१ । 'सगरे पत्र ब्रह्म सुं 'डारे'^२ ।
 'हरो'^३ निसाण रह्यो नही एको । 'मानुं तरु सूको करि लेखो'^४ ॥४८४॥
 मालती नेक निरब' सच'^१ पाये'^२ । तोलुं पाएक सब चलि' आए'^३ ।
 मार मार करि बचन पुकारे । एक गिलोलन सुं मधु मारे ॥४८५॥
 किते एक मुए नीर नही मागैं । किते एक घाएल सो फुनि भागैं ।
 सो त्रप आगे जाए पुकारे । 'मधु कोपे पायेक सब'^१ मारे ॥४८६॥
 त्रप कोपे जिय रोस भरि 'आये'^१ । जिन को इनके कुमख बुलाए'^२ ।
 लरका एक कहा जुध 'करै'^३ । परचकी निहचै 'संचरै'^४ ॥४८७॥
 तुरी सहस एक साज बनाए । चढि सामंत बेग 'ही' आए ।
 जैत मालती सुं मधु घेख्यो । 'बनिया आव'^२ सबद युं देख्यो ॥४८८॥

[४८१] १. प्र० ३ जिय मे जिन । २. प्र० १ को सम, प्र० ३ कुण सामंत ।
 ३. प्र० ३ मुह आगे ।

[४८२] १. प्र० १ छूटत, प्र० ३ फूटें । २. प्र० ३ न ।

[४८३] १. प्र० १ पठाए । २. प्र० १ दीषावो ।

[४८४] १. प्र० ३ मारु । २. प्र० १ सगरे ब्रह्म वौर सूडारै, प्र० ३ सघरे पत्र
 छिन छिन करि डारु । ३. प्र० ३ कख्यो । ४. द्वि० १ मे चरण का
 पाठ है : तब सच पायो नैन न देखे, तू १ सूके पत्र उड़े तहा देखे ।

[४८५] १. प्र० ३ सुष । २. प्र० १ पायो । ३. प्र० ३ आयो ।

[४८६] १. प्र० ३ एक गिलोलन सु मधु ।

[४८७] १. प्र० ३ आयो । २. प्र० ३ इनको 'मुष बुलायो । ३. प्र० ३
 करी है । ४. प्र० १ जूध करी है ।

[४८८] १. प्र० ३ तिहा । २. प्र० ३ बनिया बनिया ।

(मधु वाक्य)

कंकर सेर 'बाड मैं कीनी'^१ । हाथ गिल्लोल तराजू 'लीनी'^२ ।
सगरो कटक तोलि 'जू'^३ काहुं । नातर बनिक बस 'हुं'^४ बाहुं ॥४८१॥
उठो 'प्रचारि'^१ बांह बल तोलै । जैत माल उहां औसी बोलै ।

(जैतमाल वाक्य)

ठाढो कुंवर श्रवन सुनि 'बालै'^२ । 'या तो'^३ नही 'भूज'^४ की घातै ॥४९०॥
तूं तो जाह अकेलो लरिहै । 'जीय त्रास मालती'^१ धरिहै ।
श्रबला हांक सुनत ही मरिहै । पीछे जूध जीति कहा करिहै ॥४९१॥
जो 'तुम'^१ अपनो कारिज साधो । पूरब जनम कुल 'कुटम'^२ आराधो ।
प्रथम मालती वन 'बिसतारो'^३ । पाछे भंवर ज आनि 'हंकारो'^४ ॥४९२॥
'औसै बिन नही कारज होय[है]'^१ । 'अंगी मुहाल नोरि दल खैहै'^२ ।
तेरो अपजस कोउ न करिहै । बिन मारै 'सगरो'^३ 'अब'^४ मरिहै ॥४९३॥

(मधु वाक्य)

जैतमाल तैं अली बताई । पै इहां फोज सूड पै आई ।
इहि बरियां एह मतो न होई । ग्यान 'गनत पुरघा तन'^१ खोई ॥४९४॥
ऊषर मध्य आन जब परही । मूसल घाउ कहां लुं डरही ।
एक बेर उनकुं 'समुझावै'^१ । कुनि पाछै बहु बुद्धि 'उपावै'^२ ॥४९५॥

[४८६] १. प्र० ३ बाटि मही कीनी । २. प्र० ३ लीनी । ३. प्र० ३ के ।
४. प्र० ३ नही ।

[४९०] १. प्र० ३ पसारि । २. प्र० ३ लीजै । ३. प्र० ३ तो ऐसी । ४.
प्र० १ जुध ।

[४९१] १. प्र० ३ पीछे सोच बहुत मन ।

[४९२] १. प्र० ३ लु । २. प्र० ३ करम । ३ प्र० १ विसताखो । ४. प्र० १
हकाखो ।

[४९३] १. प्र० औसी वानी नही कर घेहे । २. प्र० ३ भृगी समुह आनि
दल । ३. प्र० ३ सबही । ४. द्वि० १, तृ० १ दल ।

[४९४] १. प्र० ३ गीत परीषनह ।

[४९५] १. प्र० ३ समझाऊ । २. प्र० ३ उपाऊ ।

मधु कुं भीर बोहोत 'जिहां'^१ परै । तिहां त्रिखल रुद्र की फिरै ।
सिव रण्या औसी जिहां करै । 'सुर नर कूक कवण' तै लरै^२ ॥५०३॥

(सोरठा)

हारे सुभट हजार फुनि पायक दल 'सब सुए'^१ ।

त्रप सुं करी पुकार 'घाएल ज्युं हाएल भए'^२ ॥५०४॥

चंद्रसेन घाएल कुं बूझै । कित एक 'राय कटक'^१ रण भूझै ।
सो हूँ बात श्रवन सुन 'पाई'^२ । तापर 'तैसे कुमल पठाई'^३ ॥५०५॥
घाएल कहै कटक कोउ नाही । गद्दी गिलोल मधु कुंवर तांही ।
कंकर मारि छिद्र सब कीने । दुजै आवध नहीं करि लीनै ॥५०६॥
चंद्रसेन नूप बात न मानै । बनिया कहा जूध की जानै ।
कटक गिलोलन सुं कित मरै । लरका एक कहां लुं लरै ॥५०७॥
पद चक्री निहचै कोइ 'पायो'^१ । सुनिकै खत्री बेग बुलायो ।
पंच हजार बोहोर सक्त कीजे । 'चढो वेग'^२ नूप आयस दीजे ॥५०८॥

(जैतमाल वाक्य)

मधु 'श्रब करिहै कहो हमारो'^१ । लरो तो अपनो कुल बिसतारो ।
'जो तजि चलो'^२ तो ठाहर छंडो । दोए थल मारु एक थल मंडो ॥५०९॥

(मधु वाक्य)

नूप को चोर होए कित जाऊँ । इन बातैं कैसे 'पन'^१ पाऊँ ।
'जो सूदन'^२ आगै रण 'भजै'^३ । सुनत 'बानीए के'^४ कुल लजै ॥५१०॥

[५०३] १. प्र० १ जव । २. प्र० ३ प० सुभट कोइ पाय नहीं धरे ।

[५०४] १. प्र० १ इसम । २. प्र० ३ घायल ज्यु हारल हुआ । .

[५०५] १. प्र० ३ सुभट मुआ । २. प्र० ३ लीजे । ३. प्र० ३ तैसी बधि
करीजे ।

[५०८] १. प्र० ३ आयो । २. प्र० १ चढ्यो कोष ।

[५०९] १. त० १ बचन हमारो चित धारो । २ प० ३ भली चाहो ।

[५१०] १. प्र० ३ परि । २. प्र० १ ज्यो सूरन, त० १ जो सुर नर । ३. प्र० १
मंजू । ४. प्र. १ राए, नीए (बानीए) के । प्र० ३ जेत बनिया । ५ द्वि०
१ में श्रद्धाली का पाठ है; जो नर इन सन मुखतै मागै । ते यह जन्म
धर्यो किह काजे ।

मो कुं 'जुग'^१ बनिया करि जानै । मालती नूपति 'कुंवरि'^२ करि ठानै ।
 'हम तो प्रेम परीखन हारै'^३ । 'खीर नीर मिलि होए' न न्यारै'^४ ॥२११॥
 रण सिंगराम 'भाजि कित'^१ जाऊं । तो मो कही सो बुद्धि उपाऊं ।
 बेग मालती 'बन'^३ बिसतारो । फुनि मधुकर को जूथ हकारो ॥२१२॥
 राम सरोवर के ढिग बारी । छोटे मोटे बिरछ 'मभारी'^१ ।
 'भार'^२ अठारै जाति अनेरी । सो सब 'भई'^३ मालती केरी ॥२१३॥
 तो लुं जैत पवन आराध्यो । सीतल मंद सुगंध 'ही साध्यो'^१ ।
 'अति ही बास'^२ चिहूँ 'दिस'^३ 'धाई'^४ । भंवर 'मुहाल सेन चलि'^५ 'आई'^६ ॥२१४॥
 कंडर मध्य 'माखी'^१ 'लस कोरी'^२ । सुनत सुवासुचिहूँ दिस दोरी ।
 'मत्री'^३ सुत समरन फुनि करै । 'ल्युं ल्युं'^४ अलि समूह बिसतरै ॥२१५॥
 'असै'^१ समय कटक चडि आयो । मधु कुंवर 'सुनतहि उठि आयो'^२ ।
 मालती दोरि 'चरन'^३ लपटानी । बोलै जैतमाल कहा बानी ॥२१६॥

(जैतमाल वाक्य)

धीरो कुंवरि 'बयण चित दीजै'^१ । काज 'अकाज ही 'क्यूँकर'^२ कीजै ।^३
 नहु सुं त्रुटै हुम जो सोई । काठ न काठ 'कुहारै'^४ कोई ॥२१७॥

[५११] १. प्र० ३ सब । २. प्र० १ कूवर । ३ प्र० १ हमै तूम प्रेम पूरने धारे ।
 ४. द्वि० १ देव अश क्यों होंहि नियारे ।

[५१२] १. प्र० ३ छोरिके । २. प्र० १ वीन ।

[५१३] १. प्र० १ मभारे । २. प्र० १, २, ३ भार । ३. प्र० १ भयो ।

[५१४] १. प्र० ३ कर डाखो । २. प्र० ३ अतिही सुगंध, तृ० १ अति सुनवार
 ३. प्र. ३ दिसतें । ४. प्र० १ ध्याये । ५. प्र० ३ समूह सेन सब । ६.
 प्र० १ आये ।

[५१५] १. प्र० ३ ककर मधुमाखी, तृ० १ फेर मधुमाखी । २. तृ० १ विस्तारी ।
 ३. प्र० १ मित्रि । ४. प्र० १ तू तो ।

[५१६] १. प्र० १ वसै । २. प्र० ३ सुनत उठि आयो । ३. प्र० १ उर,
 तृ० १ कठ ।

[५१७] १. प्र० १ छ्यो न चोत दीजै, प्र० ३ वचन सुनि लीजे । २. प्र० १
 अकाज ही की कर, प्र० ३ ही काज कुंवर कहु । ३. तृ० १ मैं चरण
 है : कौन काज तै आप चढीजै । ४. प्र० ३ कुराडो ।

कीरन पै 'सब'^१ कटक सुवाज् । तो कुं एह परतीत दिखाज् । ॥ ५१८ ॥
 अलि के 'डसत'^२ जीउ न उबरही । तो न्युं आज यहां जुध करहीं ॥ ५१९ ॥
 बुद्धि सयानी 'चातुर'^१ भाषी । सुनि मधु कुंवर जैत की साखी ।
 जो लुं जाय कै सेवग लरै । तोलुं 'झूझ'^२ न साहिब करै ॥ ५२० ॥
 आवत ही 'सब'^१ ब्रच्छ 'भंभेरो'^२ । भंवर मुहाल माखी सब छेख्यो ।
 ज्युं टारै 'कहुं गार'^३ पगारी । ल्युं अलि अते सेन पर डारी ॥ ५२० ॥
 'विरचे भंवर'^१ कटक मै 'आई'^२ । जैसे टीडी खेत कुं 'खाई'^३ ।
 कोटि कोटि एक तन कुं लागै । मानु अगार ब्रच्छ त्रिण दागै ॥ ५२१ ॥
 हंस बरन 'कटक उजियारो'^१ । पल मै भयो छाग 'सो'^२ कारो ।
 भंवर मुहाल माखिन तन 'चाढे'^३ । मानुं कटक 'कांमरी'^४ वोढे ॥ ५२२ ॥
 डसहिं भंवर मानुं पूरन वीछू । झूझक तुरी षग डारत 'पीछू'^१ ।
 जोधा 'झूझन'^२ की गति हारे । उवड़े मूंड मानु मतवारे ॥ ५२३ ॥
 तुरी 'तार घर (खुर)'^१ 'करै अपाई'^२ । 'घर माते'^३ 'घर मते'^४ सपाई'^५ ।
 कहुं 'कुवाण'^६ कहुं तरगस तूटे । नेजा 'सीस'^७ परसपर फूटे ॥ ५२४ ॥
 कहुं खंजर कहुं गिरी कटारी । कहुं 'जमधर'^१ कहुं ढाल ही न्यारी ।
 कहुं तरवार कहुं कीत खंडा । कहुं 'गिरी'^२ गुरज 'पटा कहुं छंडा'^३ ॥ ५२५ ॥

[५१८] १. प्र० १ सबी । २. प्र० १ डरत ।

[५१९] १. प्र० १ चातुरी । २. प्र० १ जुद्ध । ३. तृ० १ मे यह छंद नहीं है ।

[५२०] १. प्र० ३ सु । २. प्र० ३ ज भेल्यो । ३. प्र० ३ बहु गरी ।

[५२१] १. प्र० ३ विचरे भमरा । २. प्र० ३ आए । ३. प्र० ३ खाए ।

[५२२] १. प्र० ३ सब कटक उजारो । २. प्र० ३ ज्यु । ३. प्र० ३ चुंटे, द्वि० १ तोड़े । ४. प्र० ३ कावली ।

[५२३] १. प्र० १ पाछै । २. प्र० ३ झूझन ।

[५२४] १. प्र० ३ तार कर, द्वि० १ चमकि भागै । २. प्र० १ कसहै सपाई, द्वि० १ घर जाई । ३. प्र० ३ घर माने, द्वि० १ खेत रहे । ४. द्वि० १ तिहा सकल क्षिपाही । ५. तृ० १ मे अर्द्धाली है : तुरी तोषार घर घरेह आपइ । घरमरि घरी मधी सापइ । ६. प्र० १ कुवाण । प्र० ३ ढाल ।

[५२५] १. प्र० १ जबूर । २. प्र० १ गरि । ५. प्र० १ पताषू छंडा, तृ० १ पताका झंडा ।

कहुं कर्वाण बंदुक कहुं 'तूटे'^१ । 'मरि मरि सबही सेन'^२ अखूटे ।
 'फरसी फरी बगहरी घेरै'^३ । 'आवध रहै न एकहु नेरै'^४ ॥५२६॥
 मधु लुं 'भूक्त'^१ करन 'कुं'^२ आए । ज्युं समीर घन घटा घटाए ।
 बचे एक दीए कोई भागे । उन बार कीनी नूप आगे ॥५२७॥
 'भागी'^१ कटक भवरन कुं खाए । बिन 'भूक्के'^२ सब^३ धरनी 'आए'^४ ।
 नर तुरंग तन तुचा 'न बचे'^५ । जीवत मुए रहै दम 'बंचे'^६ ॥५२८॥
 सुनत राए मुख अंगुरी नाए । 'पंच सहस कैसे अलि खाए'^१ ।
 भूठी बात कहां ते ल्याए । डसे भंवर सो आनि दिखाए ॥५२९॥
 'तोऊ'^१ नूपति चित बात न आए । फुनि पोकार तोलुं अरु पाए ।
 डसे भंवर सो आनि दिखाए । कछु सांची कछु 'भूठी जनाए'^२ ॥५३०॥
 परचक्री निसचै कोइ आयो । भंवर रूप कछु सरह 'चलायो'^१ ।
 हुं भूक्तन कुं हाथ खुजाऊं । घर बैठौ 'आपौ कित'^२ पाऊं ॥५३१॥
 दोरे बेग दमामा 'घाई'^१ । अर चासनी समी'^२ करनाई ।^३
 घुरे निसान मानु 'घन राई'^४ । सींधू राग बाजै 'सहनाई'^५ ॥५३२॥

[५२६] १. प्र० ३ छूटे । २. प्र० ३ डसे डसे सेना सब । ३. प्र० फरसी फरी
 बग हीरा घेरा, प्र० ३ फटक सिपर बगहरी रेघे, द्वि० १ कोई भूने कोई
 गिरे नियारे । ४. प्र० १ आवध रह्यो न अरु कोई नेरा, द्वि० १
 आयुध रह्यो न कोउ कर सारे ।

[५२७] १. प्र० १ जूष । २. प्र० १ लु ।

[५२८] १. प्र० ३ गिरे । २. प्र० १ भूक्त । ३. प्र० १ नाये । ४. तृ० १ में
 चरण है : डसे भंवर सो आनि देखाए । ५. (तुल० ५२६'४)
 प्र० ३ सची । ६. प्र० १ दस बचै ।

[५२९] १. प्र० ३ मे इसके स्थान पर है : इह ती आज तुमने सुनाई ।

[५३०] १. प्र० ३ तोलुं । २. प्र० १ भूठ बणावै ।

[५३१] १. प्र० ३ बुलायो । २. प्र० ३ आपै कित, प्र० ३ कछु कहां न ।

[५३२] १. प्र० ३ घाई । २. प्र० १ अजू चासनी समी, प्र० ३ अर चारस
 निकरो । ३. तृ० १ मे चरण है : अरु चहु श्रीर वजै करनाई ।
 ४. प्र० ३ घरनाई । ५. ३ सरमाई । ६. तृ० १ में चरण है :
 सिंधू राग घुरे मन भाई ।

गज तुरंग तन चाम 'संढाए'^१ । ^२सक्ति 'सनाह सामंत'^३ चडि आए ।
 भवर डसन कुं ठाहर नाही । सब दल जतन कीयै नूप 'तार्ही'^४ ॥२३३॥
 तुरी सहस दस चंचल 'ताते'^१ । कुंजर पंच सहस 'मद'^२ माते ।
 'वेकर(बैरक)लाल लगी'^३ छवि पावै । मानुं 'गयंद दाभते धाए'^४ ॥२३४॥
 तातै 'तुरी तिहां चडि'^१ आए । देवै पच सहस अलिखाए ।
 'ओषित'^२ स्रवत 'गिरे'^३ तिहां सूरै । नूप जाख्यै या घायल पूरै ॥२३५॥
 लागै सांग परसपर नेजा । 'हिय पंजर तोरै कै'^१ भेजा ।
 यो तो नूप परचक्री जानै । भवर बात सब झूठी 'मानै'^२ ॥२३६॥
 दूत च्यार उहि 'बेग'^१ बुलाए । सीख दिई चिहुं ओर पठाए ।
 दोरी कटक देष कै आवो । 'अन्यत'^२ कहुं जिन भेद जनावो ॥२३७॥
 उतर दिसा एक दूत 'पठायो'^१ । 'चलिके'^२ राम सरोवर आयो ।
 बारी मांझ कुवर मधु देखै । दिन ही 'जैत'^३ मालती देखै ॥२३८॥

(दूत वाक्य दूहा)

जिहां कुल 'आतम'^३ दोष है जदपि ज्ञान कोउ पाए ।

कंठ न बांधे कोउ फिरै 'हाड'^२ ही हार बनाए ॥२३९॥

(चोपई)

करता कोन अयानप कीनो । लता सहज बनिता कूं दीनो ।

ढिग हुम होय ताहि 'चडि'^१ बाढै । ऐरंड अंब पटंतर काढै ॥२४०॥

[५३३] १. तु० १ ओटाए । २. प्र० ३ तुरगम चमर दलाइ । ३. प्र० ३
 सामत साम । ४. प्र० ३ साइ ।

[५३४] १. प्र० ३ नाते । २. प्र० १ दस । ३. प्र० १ तार हबार उट ।
 ४. प्र० ३ गज तक किंतु दुध ध्याए, तु० १ घटा चंद्र की आई ।

[५३५] १. प्र० ३ चडि तिहा चलि । २. प्र० ३ सुरनत । ३. प्र० १, २ में
 यह शब्द नहीं है ।

[५३६] १. प्र० ३ पजर तो कटकटे । २. प्र० ३ वाने ।

[५३७] १. प्र० ३ बेर । २. प्र० ३ अन्य ।

[५३८] १. प्र० ३ घायो । २. प्र० ३ सो फुनि । ३. प्र० ३ जन ।

[५३९] १. प्र० १ आम, प्र० ३ आमिष । २. प्र० १ हार । ३. तु० १ में
 यह शब्द नहीं है ।

[५४०] १. प्र० १ चढी न ।

जोरे होय मधु बिरहा माते । 'लहो दुरमति सोधौं कही कातै'^१ ।
 जो गजमात 'तो'^२ 'सुंड समारै'^३ । तेरी लुं नहि गहत अंगारे'^४ ॥५४१॥
 'नाम'^१ साह अरु कीनी चोरी । बिन बसत कित खेलत होरी ।
 बंदी बाभण सो^२ बिरुद कहावै । 'पुनि तो हिए की बुद्धि नहीं आवै'^३ ॥५४२॥
 बारी माफ़ 'कुंवर मधु'^१ बैठो । कोठै प्रान कोन तिहां पैठो ।
 कहिए कोन भांति बुध ताही । 'बाके'^२ पेट करेजा नाही'^३ ॥५४३॥
 नृप दल 'मार गह्यो जिय गारो'^१ । बैठो 'आनि अकेलो न्यारो'^२ ।
 असै समे आन (आनि)को 'घेरो'^३ । 'ऊपर करन कुं काहि कुं टेढो'^४ ॥५४४॥
 तेरो कटक कुमख को आये । हमै हेरु तु पै राए पठाए ।^१
 छल बल होए 'छतो'^२ झूझ मंडो । नातर मधु एह ठाहर छंडो ॥५४५॥
 एह 'सुनि'^१ कंवर(कंवरि)मालतीखीजै । दासी इनके 'मूड'^२ में दीजै ।
 दूत 'धीठ होए'^३ बोलै गाढो । 'गोता देह बाग सै'^४ काढो ॥५४६॥
 मारण 'कू' जब धाय प्रचारी'^१ । 'मधू कुवरि कुं हटक उबारी'^२ ।
 एह गरीब ऊपरि कित खीजो । 'इन बातैं कछु सरै न सीको'^३ ॥५४७॥

[५४१] १. प्र० ३ लहो दुरमन सोधु कहु ताते, द्वि० १ ते तुम समझ रहो
 मुख बाते । २. प्र० ३ हा । ३. प्र० १ मुंड ससारे, प्र० ३ सुध समारे ।
 ४. प्र० ३ गअग तारे ।

[५४२] १. प्र० १ माम । २. प्र० १, द्वि० १ बदी छोर । ३. प्र० १ पून्या
 तोही इह कुबुध कीत आई ।

[५४३] १. प्र० ३ कुमरीले । २. प्र० ३ ताके, द्वि० १ पै तोहि । ३. द्वि० १
 कठिन करेजा आही ।

[५४४] १. प्र० १ माफ़ गह्यो दल सारो । २. प्र० १ आइ अकेलो नारो ।
 ३. तृ० १ घेरे । ४. प्र० ३ ऊपर को न करत कही तेरे, तृ० १ कूण
 करे उपराला तेरे ।

[५४५] १. प्र० ३ में अर्द्धाली है : तेरो कुंमुख कोन बल अहे । हुं स हेरु कर
 राय पठेहे । २. प्र० १ तो अब ।

[५४६] १. प्र० ३ सुनत । २. प्र० ३ मुह । ३. प्र० १, टीग होए, प्र० ३
 दीठ बहुरि । ४. प्र० १ गोथा देह बाग मै ।

[५४७] १. प्र० ३ काब बधि के पसारी । २. प्र० १ मधु कुंवर कुं हटको
 बारी, प्र० ३ मधु कुवर हटकी उर बारी । द्वि० १ जैत मालती हट-
 क्यो न्यारी । ३. प्र० ३, तृ० १ ऐसे वचन कहा चित दीजे ।

केहरि जिहिकर 'हाथी'^१ मारै । उन हाथै मिडक नहीं मारै ।
रुठे तूठे जगहु न जाएँ । तो करतूति 'बडे कित मानै'^२ ॥५४८॥

(अलोक)

यस्मिन् रुष्टे भय नास्ति तुष्टे नैव धनागमः ।
निग्रहानुग्रहो नास्ति रुष्टे तुष्टे किं करिष्यति ॥^१५४९॥

(दूहा)

जिहि रुठे कछु डर नही 'तूठे'^१ सरै न काज ।
'कहै अली'^२ कित 'खीजिये'^३ दोऊ कुल की लाज ॥५५०॥
दीनो दूत बिदा करि तबही । करहु जो राय करो सो अबही ।
नव नव मन के 'धूह बजाए'^१ । 'सो क्यु' डरपै सूप बजाए'^२ ॥५५१॥
दूत ज आएँ एह सुनि लीनी । चढो क्रोध नूप 'आएस'^२ दीनी ।
पहलैइ दोई 'पटक पछाडो'^३ । पाछै कटक 'खोजि कै'^४ मारो ॥५५२॥
'हला कीने' हाथिन के हलका । लीने काढि सारके मलका ।
घेरो राय सरोवर बारी । बोले जिहाँ तिहाँ ते गारी ॥५५३॥
बनियो दुरो कहां लु' 'लरिहै'^१ । धरती 'फोरि त'^२ 'कहाँ समैहै'^३ ।
'विहगम'^४ चरन धरा मिलि गैहै । ताको खोज न कोऊ पैहै ॥५५४॥

[५४८] १. प्र० १ कोटि । २. तू० १ बैठ कहा ठानै ।

[५४९] १. प्र० ३ में यह श्लोक नहीं है । किंतु इसके भाषान्तर का छंद है,
इससे उसमें संस्कृत रचना होने के कारण छोड़ा हुआ लगता है ।

[५५०] १. प्र० १ तूठा । २. प्र० ३ तो आली । ३. प्र० ३ कीजिये ।

[५५१] १. प्र० ३ गुहर गुजाये । २. प्र० ३ सो कह डरे सो संघ बजाए ।

[५५२] १. प्र० ३ आइ तब । २. प्र० ३ आग्या । ३. तू० १ पकरि के मारौं ।
४. प्र० १ फोज ले ।

[५५३] १. प्र० ३ पहली कीनो ।

[५५४] १. तू० १ लाई । १. प्र० १ फोर न, प्र० ३ फाट न । ३. प्र० ३
तिहा समैहै, तू० १ निकस न जाई । ४. प्र० ३ विहग ।

अैसे बचन कहे सब 'टेरो'^१ । 'बारी आनि चिहूँ दिसि'^२ 'बेरी'^३ ।
 'सघन'^३ कुंज देखि कै अधिको । गज तुरंग तिहां पैसि न सको ॥२११॥
 तब नूप कहो काटो बन सारो । गज लगाय 'सगरे'^१ हुम ढारो ।
 तब कुंजर बन तोरन 'लागे'^२ । भंवर मुहाल बोहोर फिर जागे ॥२१२॥
 'दोरे'^१ भंवर कछु अंत न पारा । रोके 'जाय'^२ सबै दल भारा ।
 लागे डसण कोप करि ताही । ए करतूत 'कहन की'^३ नाही ॥२१३॥
 'चलि'^१ चरण लु 'चरमै'^२ ढंके । समे सनाह तास पर बंके ।
 नख 'सिख'^३ लु कहुं नहीं उघारे । अलि अपनो सगरो 'अम'^४ हारे ॥२१४॥
 तोहु सुरति भई 'मधु कारन'^१ । उठ्यो समाह बेग 'उहि बारन'^२ ।
 करि 'गिलोल अस'^३ कंकर 'खेटै'^४ । 'पहली'^५ 'आनि गजन सुं फेटै'^६ ॥२१५॥
 इन देख्यो कुंजर वन डारत । बारी तोरि मरोरि गहि डारत ।
 'दह'^२ दिसि बाग होत 'दस बाटन'^३ । मातुं किसान लागे 'षड काटन'^४ ॥२१६॥
 निरखत कुंजर बाँह बल तोलै । मुख तै'^१ बचन कछु नही बोले ।
 गहि गिलोल 'सु'^२ ककर जोरै । प्रथम 'प्रहार दंत उर'^३ फोरै ॥२१७॥

[५५५] १. प्र० १ टेरो । २. प्र० ३ बनिया ने च्यारे दस । ३. प्र० १ बेरो
 ४. प्र० १ सध्यान ।

[५५६] १. प्र० ३ सारो । २. प्र० १ लागो ।

[५५७] १. तु० १ उड़े । २. प्र० ३ राय । ३. प्र० ३ छले कछु ।

[५५८] १. प्र० ३ चहु । २. प्र० ३ मर । ३. प्र० ३ चष । ४. प्र० ३
 चरम ।

[५५९] १. प्र० १ मो करनी । २. प्र० १ उही वारीनी, प्र० ३ हकारन ।
 ३. प्र० ३ हालोल अरु । ४. प्र० १ षटै (फेटै ?) । ५. तु० १
 गोला । ६. प्र० ३ अन गंजन कु षेटे ।

[६०] १. तु० १ में चरण है : मानी ज्यू मूली-गहि डारत । २. प्र० १
 चहू । ३. तु० १ षयकारा । ४. प्र० ३ थल काटन, तु० १ षले
 कुभारा ।

[५६१] १. प्र० ३ नै । २. प्र० १ अरु । ३. प्र० १, प्रहार दंत उर, प्र० ३
 प्रहार दंत सन, तु० १ मधू गज दसनहि ।

छिन छिन छिद्र 'छिद्र'^१ करि डारे । 'कूहै काठ मानु' परै कुहारे'^२ ।
 कंकर कोटि कोटि विस्तारे । 'कुंजर खड विहंड करि डारे' ॥^३५६२॥
 'भरू'^१ पख जैसे बुगलन की । 'कटी'^२ बांह 'जैसी है'^३ 'दगलन'^४ की ।
 दसन किरच 'फैली रिण राजै'^५ । 'टूटे सुंड'^६ भसुंड बिराजै ॥५६३॥
 त्रप जानै परचक्री आयो । भूभ निसाण 'गहगहै नायो' ।^१
 मार मार कहि बोलन लागे । एह सुनि कुंवरि मालती जागै ॥५६४॥

(दूहा)

सुनत शैल रिण भूभकी 'उठी'^१ उनीदी बाम ।
 'एक एक धीरज नहि धरै'^२ दिगहु न देख्यो स्याम ॥५६५॥

(चोपई)

दिग देखो मधु कुंवर नाही । मालती मलिन बदन भई 'ताही'^१ ।
 जैत माल गहि उर सुं लीनी । 'सीख'^२ समझाए के धीरज दीनी ॥^३५६६॥
 तूं जिन जीव मैं अवर विचारै । मधु कुंवर कुं कोइ न मारै ।
 काम 'अंस'^१ पूरन अवतारी । 'अन की अकल कथा है न्यारी'^२ ॥५६७॥
 तीन लोक 'सगरो'^१ इन जीते । औसै प्याल 'बहुत होए'^२ बीते ।
 सुर नर असुर नाग नर 'जोई'^३ । व्यापै सकल रह्यो नही कोई ॥५६८॥

[५६२] १. प्र० १ विछिद्र । २. प्र० १ कूहै काठ मांडु परै कूहारे, तृ० १
 कहू मानस कहू परे कुहारे । ३. प्र० १ में यह अर्द्धाली नहीं है ।

[५६३] १. प्र० १ भर । २. प्र० ३ काटी । ३. प्र० ३ सही । ४. प्र० १ दंगन ।
 ५. प्र० १. फैल रचि राजै, तृ० १ गज राजै । ६. प्र० १ टूटी सुंडी ।

[५६४] १. तृ० १ दमामा दिवायौ ।

[५६५] १. प्र० १ उठ । २. तृ० १ धगधगाय कायर भई ।

[५६६] १. प्र० १ तीहा । २. प्र० ३ सषी । ३. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ
 है : जैत उठी मालति उर लाई : मन कुंवरी मन मों दुष पाई । तृ०
 १ में है : जैत माल गरि उर सुं लीनी : छाती लाय दिलासा दीनी ।

[५६७] १. प्र० ३ एह । २. तृ० १ मे चरण है : वाकी बात सबन सौं
 न्यारी ।

[५६८] १. प्र० सिधरे । २. प्र० १ होये अब । ३. प्र० ३ जेहे ।

म० वार्ता ६ (११००-६३)

जोगी होय जिनहु मन माख्यो । इन उनहुं 'केरो'^१ तप टाख्यो ।^२ ।
 ससि सराप इनके गुन पाए । इंद्र सहस भग अंग लगाए ॥५६६॥
 गोतम नारि सिला 'इन'^१ कीनी । जालंधर 'छलि'^२ वृंदा^३ लीनी ।
 करि उपाइ कीचक 'मराए'^४ । इन सगरे जुग खेल खिलाए ॥५७०॥
 इनके गुन भीलनी भई गोरी । चूको ध्यान 'भये हर'^१ सोरी ।
 इनही कांम बान उर मारै । पारबती नै भरत उबारै ॥५७१॥
 जो वन रूप 'जिहां'^१ लु जोई । सो प्रतिबिंब 'काम कुं होई'^२ ।
 इन कंदप्प 'दलन'^३ सुर नाही । तेरो 'पिता किनै'^४ लेखा माही ॥५७२॥

(काव्य)

मत्तेभ कुंभ दलने भुवि 'सति'^१ शूराः
 केचित् प्रचड मृगराज 'वधेऽपि दत्ताः'^२ ॥
 'अनेक वीर सुभटा रण क्षत्र शूराः'^३
 कदर्प दर्प दलने विरला मनुष्याः ॥५७३॥

(चोपई)

मात गयंद गहन कुं सुरे । 'कुनि'^१ केहरी हतन कुं पूरे ।
 औसै सुभट पराक्रम 'जोरे'^२ । पै कंदप्प दलन कुं थोरे ॥५७४॥

[५६६] १. प्र० १ केख्यो । २. द्वि० १ में चरण है : और के सहि दुख बिदारे ।
 [५७०] १. प्र० मन । २. प्र० १ वाली, प्र० ३ छल । ३. प्र० १, २
 चद्रा । ४. प्र० ३ रमवाए । ५. तृ. १ मे यह छंद नहीं है ।

[५७१] १. प्र० लगे हरी ।

[५७२] १. प्र० १ जौही । २. प्र० ३ सो प्रतिबिंब कहाई, द्वि० १ ब्यापो सकल
 रहो नहि कोई । ३. प्र० ३ बलन । ४. प्र० १ पीतानै । ५. ३
 पिण पति । ५. द्वि० १ मे अर्द्धाली है : सो प्रतीत काम अंश न व
 होई । याको दर्प दले नहि कोई ।

[५७३] १. प्र० साती । २ प्र० ३ जनेपि दीक्षा । ३. प्र० ३ किंतु ब्रवीमि
 मलिन पुरत प्रसव्य । ४. यह छंद प्र० ४, द्वि० १ मे नहीं है ।

[५७४] १. प्र० पून्या । २. प्र० ३ सुरे ।

प्रदुमन देह क्रस्न 'जिह माथै'^१ । सर भी 'कौन ताह के साथै'^२ ।
 जादू बंस अंस अवतारी । तू कित सोच करै 'जिय'^३ बारी ॥५७५॥
 जादू कुल की 'जैत'^१ सुनाई । किती इक 'धीरप जिअ'^२ मैं आई ।
 'सुणो'^३ पूरबलो भव अपनो । मानुं 'जागी'^४ देखत सुपनो ॥५७६॥
 भगव्दो ग्यान अयानप छूट्यो । जैसे रबि उदोत तम ब्रूट्यो ।
 सुमरत नाम एक केसौ को । कटन पाप जनम जनमांतर को ॥५७७॥
 जैतमाल दीनो 'उपदेसो'^१ । मालती 'जपत'^२ नाम श्री केसो ।^३
 भगत बछल नाम बिरुद वहीयै । इन अवसर ए कौन सु कहियै ॥५७८॥
 समरत सुने न संत पुरानै । भूटे बेद किये जुग जानै ।^१
 संतन सुत की वाचा राखी । जुग'ध्यावै ए'^२ सुनी'धु'^३ साखी'^४ ॥५७९॥
 जैन अपराध कोटि एक करही । 'तुम दयाल होइ'^१ चितहु न धरही ।
 गुन अवगुन'जो जीय'^२ बिचारै । तो गनिका'दुज'^३ 'कुं कित'^४ 'तारै'^५ ॥५८०॥
 अगु रिषि आय 'लात उर'^१ मारै । मगन जानि तिहां चरन संचारै ।
 'एते' पर नाही'^२ दुखदाई । तुम पूरन औसै सुखदाई ॥५८१॥

[५७५] १. प्र० १ जि माथै, प्र० ३ जिह थोरे । २. प्र० १ करन चाह की साथै, प्र० ३ करन कौन जिहा सो थे । ३. प्र० १ जीन ।

[५७६] १. प्र० १ जत, प्र० ३ नेत । २ प्र० १ धीरज मन । ३. तू० १ छूट्यो । ४. प्र० १ जाग, प्र० ३ जागी के ।

[५७७] १. द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : भिवरत नाम एक सब करता । करइ सपाप कष्ट दुख हरता ।

[५७८] १. द्वि० १ उपदेसू । २. प्र० ३ रटत । ३. द्वि० १ मे इस चरण का पाठ है : रटत नाम बाइन जिस पसू । ४. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : हे हरि वल्ल भक्त विहारी । यह अवतार सबन मे कारी ।

[५७९] १ द्वि० १ मे अर्द्धाली का पाठ है : भिमरत संत करे प्रभु माने : भूटी मति सो सांची प्रभु जाने । २. प्र० ध्याअनै, प्र० ३ ध्याइए । ३. प्र० ध्यो । ४. तू० १ चरण है : जुग धावै सुन केशव साषी ।

[५८०] १. प्र० ३ तुटे नलन प्रभु । २. प्र० ३ प्रभु बहु की । ३. द्वि० १ भीलनी । ४. प्र० ३ कुकर । ५. प्र० १ टाखो ।

[५८१] १. प्र० १ के के लांत । २. प्र० ३ दूत परणाहि अती ।

दस तैं रूप देव 'हित'^१ कीनै । आनि बेद ब्रंभा कुं दीने ।
 धरणी 'सीस'^२ कंध पर राखी । मानु लगी 'पहारहि'^३ पांखी ॥५८२॥
 दुपति वसत्र दुसासन 'छुड़ाए' । तैं कपाल 'ताके कर'^२ 'तुराए' ।
 'अति पवाह आनंद बढाए । तैं जुग मै पानिप चढाए' ॥५८३॥
 त्रिज रच्छन कारण गिर धारे । ता रच्छन 'पै'^१ हाथ पवारे ।
 'मववा मेघ भार अति भारे । पै जन पै कछु संत पुकारे'^२ ॥५८४॥
 कंवळ नयन करुनामइ केसो । अस्तुति 'करि रसना न परै सो'^१ ।
 'कष्ट'^२ मोचन है विरुद 'तुम्हारो'^३ । एहे जानि कै नेक 'निहारो'^४ ॥५८५॥
 प्रदुमन रूप 'आहिं हम'^१ दोऊ । 'पूरन'^२ मागी संपूरन सोऊ ।
 सेवक 'सुत'^३ जिहां जन विख्याता । 'बोहोत'^४ जानि 'बहो'^५ दोड नाता ॥५८६॥
 बार बार कैसे करि कहियै । अंतरजामी मन की लहियै ।
 बार सुनत कहूँ बिजंब न 'करिये'^१ । मेरी दाद क्यों न मन 'धरिये'^२ ॥५८७॥
 मालती की अस्तुति सुनि लीनी । गरुड काज 'हरि'^१ आग्या दीनी ।
 पंखी दोए भारंड पठाए । बेगही मधु मालती 'छुड़ाए'^२ ॥५८८॥

[५८२] १. प्र० १ ज । २. प्र० ३ सेस । ३. प्र० १ हीर है ।

[५८३] १. प्र० १ वछाए । २. द्वि० १ बहु अवर । ३. प्र० ३ भाइ, द्वि० १ छाए । ४. प्र० ३ मे यह अर्द्धाली नहीं है, किंतु प्रसंग मे आवश्यक और इसलिए छूटी लगती है । तृ० १ अर्द्धाली है : अति प्रवाह अवर ढिग कीनौ । मारे दैत्य सुजस सब लीनो ।

[५८४] १. प्र० १ ते । २. प्र० ३ मे यह अर्द्धाली नहीं है, किंतु प्रसंग मे आवश्यक है और छूटी लगती है । तृ० १ मे अर्द्धाली है : भादव मेह भार अति मारे : व्याधि दोर विसहर षाए : सूर सुजान विचान लगाए ।

[५८५] १. प्र० १ कित कारन केसो । २ प्र० ३ संकट । ३. प्र० १ तूहारा ।
 ४. प्र० १ निहारा । ५. द्वि० १ मे चरण का पाठ है : सत काज को असुर संघारो ।

[५८६] १. प्र० १ आये तूय । २. प्र० ३ फुनि अर । ३. प्र० १ संत ।
 ४. प्र० ३ बहेला । ५. प्र० १ बहू ।

[५८७] १. प्र० ३ करे । २. प्र० ३ घरे ।

[५८८] १. प्र० ३ हरि । २. प्र० ३ बुलाए । ३. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : गरुड बेग भारंड बुलाए । मधुमालती बेग छुड़ाए ।

“गरुड वेग भारंड”^१ बुलाए। आग्या लेन ‘सुनत’^२ उठि धाए।
 अति बड रूप भयानक दीसैं। परबत सिला चरन सुं पीसैं ॥१८६॥
 जरै सुसाल ‘नैन’^१ ‘जीय अंतर’^२। मानुं चंच ‘लोह’^३ की ‘कातर’^४।
 मानुं ग्रहै सुवन नासासुर। उपमा कहूँ कहा उर (ओर) पर ॥१९०॥
 औसे पंछी दोए पठाए। जैसे भरथ बान गिर ढाए’^१।
 भवन वेग पलक मैं आए। ‘देखे कटक प्रसन कुं धाए’^२ ॥१९१॥
 चुंगल ‘इक लीला से जैहैं’^१। ‘अंधक’^२ से दल ‘आसि गए’^३ हैं।^४
 ‘आए कै’^५ ऊपरि केहर’^६ धाए। लंकर ‘निरषि बोहोत सुख पाए’^७ ॥१९२॥
 गज तुरंग ‘त्रास’^१ सहि न सकै। भारंड ‘सीह देखि दल कपै’^२।
 भागे जाय करत फुनि ‘लीदी’^३। ‘गिर गिर पडे पटा जसुं पीडी’^४ ॥१९३॥
 एक दिसा मधु कंकर मारै। दुजी दिशा भारंड सहारै।
 सीजी दिसा सीह ‘गल गरजै’^१। कुंजर ‘मुंड दादुर’^२ ज्युं भज्जै ॥१९४॥

[५८६] द्वि० १ भारंड दो एक और। २. प्र० ३ सुनिके।

[५९०] १. प्र० १ तन। २. द्वि० १ दोइ आगै। ३. प्र० १ केन। ४. द्वि० १ मागै।

[५९१] १. प्र० २ मे इस चरण के स्थान पर भी तृतीय है और द्वि० १ मे है :
 जैसे प्रान लेन जम आए। ३. प्र० २ मे चरण है : सकर सिव
 तिसूल तर्त (तुर्त) पठाए।

[५९२] १. प्र० १ हीअ लीलहीई तमचर ज्यू, प्र० २ हीअ लललि से जे हैं,
 प्र० ३ इक लीला से जे है। २. प्र० १ अरधक। ३. प्र० ३ आसीजे।
 ४. तृ० १ मे अर्द्धाली है : चुगल लगे दल हाथी घोड़ा। उन समान
 दलबल कोउ थोड़ा। ५. प्र० ३ अध। ६. प्र० १ केसर। ७. प्र०
 ३ सिव तस बाहर पठाए। ८. तृ० १ में दूसरी अर्द्धाली नहीं है।

[५९३] १. प्र० ३ सक। २. प्र० ३ पवी जीअ सके। ३. प्र० ३ लंडी। ४. प्र०
 १ गोरी सी गीरे परी ज्यू पीड। ५. द्वि० १ अर्द्धाली है : भागे सकल
 देखि के अडी। गिरि गिरि परै मान पग पैडी। तृ० १ में अर्द्धाली
 है : भागे जाय धीर न घरहीं। होय भय भीत गिर गिर पस्ही।

[५९४] १. तृ० १ ललकारै। २. प्र० ३ भड्डारे। ३. तृ० १ मे चरण है :
 होय बिगत सकल दल हारै।

अपनो कटक रोंदवे लागै^१ । जित भागै तितही डर आगै ।
 'फिरि फिरि फिक्क होत अनरागै'^२ । राजा निरखि खेत तजि भागै ॥५१५॥
 चंद्रसेन नृप ठाहर छडी । कोस च्यार तिहां 'उंजल' ('ऊमल')^१ मंडी ।
 भूले गति कुछु एक न सूझै । बिपरीत बात कौन कुं बूझै ॥५१६॥
 ढिग देबै दल परि गयो थोरो । एक सहस 'पाएक लु'^१ 'घेरो'^{१२} ।
 बाकी 'अवर'^३ सकल संघारे । देवन आगै छाटा बिचारै ॥५१७॥
 राजा सोच करै अति 'यंत्री'^१ । लिए बुलाए 'सियाने'^२ मंत्री ।
 रे भइया कछु मंत्र प्रकासो । मोकुं भयो जीव को सांसो ॥५१८॥
 हम तो अवर बात कुं दौरे । यह तो भई ओर की ओरे ।
 तुम सुं मतो न बूझ्यो आगै । तो भइया ताके फल लागै ॥५१९॥
 जो नृप खरो 'सयानो'^१ होई । तो मंत्री की गति लखै न कोई ।
 घटरस जे कोई करै रसोई । 'सामुद्रक'^२ बिना सुवाद न होई ॥६००॥
 मंत्री बिना राजनीति नाही । जैसै बिरछ बबूल की छाही ।
 बीछु 'मत्र साप नही'^१ मानै । नृप अयान^२ इतनी नहि जानै ॥६०१॥

(अलोक)

नदी तीरेषु ये वृक्षा यस्य नारी निरकुशा ।

मंत्रहीनो भवेत् राजा तस्य राज्य विनश्यति ॥६०२॥

[५१५] १ द्वि० १ : सगरो कटक जाव जिन भागै, तृन नृप को कटक रोधके लागे । २. प्र० ३ पवन होत रित आगे, द्वि० १ फिर फिर मजत न घोरन आगे, तृ० १ फुनि फुनि पवन होय नर आगे ।

[५१६] १. प्र० ३ जाइ ।

[५१७] १. प्र० ३ कुंजर अस । २. प्र० १ थोर्यो । ३. प्र० ३ ओर । ४. तृ० १ मे यह अर्द्धाली नहीं है ।

[५१८] १. प्र० १ मंत्री, प्र० ३ मंत्री (< मंत्री : देखिए परवर्ती चरण का तुक) । २. प्र० ३ अवर सहु ।

[६००] १. प्र० ३ सयानप । २. प्र० १ सामोद्रक ।

[६०१] १. प्र० ३ साप धरम कोइ । २. प्र० १ मे यहाँ 'होइ' और है । ३. द्वि० १ में अर्द्धाली का पाठ है : तो कोउ वृश्चिक मत्र न जाने = कैसे सर्प काज गहि माने ।

(८७)

(चोपई)

नदी तीर हुम निहचै 'बहै'^१ । पर घर भमत नारि पति दहै ।
मंत्री 'बिना राज'^२ नही रहै । चाणायक 'साखी'^३ युं कहै ॥६०३॥
पहली 'सौ पाएक जब डारे'^१ । दूजे 'तुरी'^२ सहस 'संहारे'^३ ।
तीजे पंच 'सहस'^४ अलि खाए । तादिन हम कुं 'तुम न बुलाए'^५ ॥६०४॥
फुनि 'ऊपर एते अति'^१ भूले । 'चढे बजाइ आप बल'^२ फूले ।
कटक झुकाए 'कै आपन'^३ भागै । तब 'तौ'^४ हम कुं बूझन लागै ॥६०५॥

(दूहा)

दूहा-जीय तैं लोभ छाडै नही सब दिन करत सयान ।
सर अवसर 'बूझै'^१ नही सो नृप खरो अयान ॥६०६॥

(चोपई)

हानि लाभ कछु समझ न परै'^१ । डिग ते जुगल न न्यारे 'टरै'^२ ।
झूठे बचन राय चित 'धरै'^३ । तो मंत्री भला कवण गति 'करै'^४ ॥६०७॥

(श्रलोक)

सन्निपातेषु ये वैद्याः अष्ट राज्येषु मंत्रिणः ।
रण भगे च ये शूराः पृथिव्या तिलक त्रय^१ ॥६०८॥

[६०३] १. प्र० १ वही । २. प्र० ३ हीन नृप । ३. द्वि० १ साची । ४. तृ० १ मे छुद है : नदी तीर हुम निहचै बहिवे : मन्त्रिहीन नृप राजा न रहिये । चचल नार अत दुषदाई : मंत्र साख राय सो गाई ।

[६०४] १. प्र० ३ राय पायक मधु मारे । २. प्र० १ अस्व । ३. प्र० १ तीहारै । ४. प्र० १ हजार । ५. प्र० १ पूछु न आए ।

[६०५] १. प्र० ३ एते पर ओर । २. प्र० १ चा० वेजा जाये आप दल । ३. तृ० १ पेत तजि । ४. प्र० ३ तुम ।

[६०६] १. प्र० १ समझै ।

[६०७] १. १ प्र० परीहै । २. प्र० १ टरीहै । ३. प्र० १ घरीहै । ४. प्र० १ करीहै ।

[६०८] १. प्र० ३ मे यह छुद नहीं है, किंतु भाषान्तर का छुद है, इसलिए यह मूल का ज्ञात होता है ।

(८८)

(चोपई)

‘वैद्य संनिपाते सोइ अंत्री’^१ । ‘अष्ट’^२ राज राखै सोइ मंत्री ।
 हारे कटक लरे ‘जो’^३ सूरौ । पुहवी ‘तीन’^४ तिलक ‘ए’^५ पूरौ ॥६०१॥
 सुनि हो राए मंत्री ‘सच’^१ ठानै । ‘हम तो’^२ बुद्धि न कोऊ जानै ।
 जब ‘ही’^३ मत्र साप को आवै । ‘सो तो’^४ बीछु कुं ‘कर’^५ ‘लावै’^६ ॥६१०॥
 तेरे मंत्री तारण साह । सो तुम दुचित कियो क्यु ‘नाह’^१ ।
 हम सब ताके आग्याकारी । अति प्रवीण ‘तारण’^२ अधिकारी ॥६११॥
 एह ‘विग्रह’^१ ‘लरकन’^२ तैं बाढ्यो । ता रिस तैं ‘तुम’^३ तारण काढ्यो ।
 पूत कपूत होए बिसतरै । ताको पिता कवण गति करै ॥६१२॥
 सब मंत्री मिलि नूप समझायो । तब ही तारण तुरत बुलायो’^१ ।
 ‘सनमुख जाए’^२ अंक उर लायो । ‘आधै आसण ले’^३ बैठायो ॥६१३॥

(राजा वाक्य)

सुनि तारण यह विग्रह बाढ्यो । मै तोसु कछु वचन नहीं काढ्यो ।
 ‘तू जिय मै कछु दुख न’^१ पावै । राजा मंत्री कुं समझावै ॥६१४॥
 तो लुं एक पाहरू देख्यो । भारंड सीह आय दल घेख्यो ।
 भयो सोर कछु समझ न परै । गज तुरंग सब छूटे फिरै ॥६१५॥

[६०६] १. द्वि० १ मिथ्या दोसन को जो मंत्री, तृ० १ भरत सन छद्म सोही
 अत्री । २. प्र० १ भीसट । ३. प्र० ३ सो । ४. प्र० ३ नीत ।
 ५. प्र० ३ कर ।

[६१०] १. प्र० ३ अब । २. प्र० ३ इनमे । ३. प्र० १ तो । ४. प्र० ३
 तबही । ५. प्र० १ करी । ६. प्र० ३ नावै ।

[६११] १. प्र० ३ राय । २. प्र० ३ अति ।

[६१२] १. प्र० १ वीग्रहो । २. प्र० ३ सूरन । ३. द्वि० १ कित ।

[६१३] १. प्र० १ मे अर्द्धाली है : मंत्री वचन बुलायो तारण । आदर मान
 कीयो बहु कारन । २. प्र० ३ आवत देखि । ३. प्र० ३ पकरि बाह
 दिग ही ।

[६१४] १. प्र० १ तजिय तै कछु दुख मत, द्वि० १ तू अजहूँ मत निज दुष ।

सारण दुरगा को बरदाई । 'दल हलबल उठ्यो'^१ सिर नाई ।
हरकै सीह हांक दै गाढी । रषी मरजाद 'भारंडहि काढी'^२ ॥६१६॥
रे भारंड बचन चित 'धरो'^१ । 'हरि की आन जो'^२ बिग्रह 'करो'^३ ।
दीनी गरुड पंख (पंखि?) 'दुहाई'^४ । आग्या मानि रहे 'थिरताई'^५ ॥६१७॥

(दूहा)

आग्या सुनत 'हरी'^१ की 'बचन'^२ मान भारंड ।

केहर खेत न छांडही 'ठाढ़ी प्रबल'^३ प्रचंड ॥६१८॥

'ठाढी'^१ सीह महा गल 'गज्जै'^२ । सबद सुनत सगलो दल भज्जै ।
बिलबिलाए जैसे मधुमाखी । 'कोऊ सुभट न सत्या'^३ राखी ॥६१९॥
तारन तारन कहि नृप टेरै । एह अवसर नाही कोई मेरै ।
तूं राखै कै करता राखै । राजा चंद्रसेन 'युं'^१ भाखै ॥६२०॥

(दूहा)

'बचन'^१ सुनत भई लाज तब तारन कैसी करै ।

मो 'जीतब'^२ फल आज स्याए धरम चित मैं धरै ॥६२१॥

परै स्याम सुं काम सेवक अतर 'दे रहै'^१ ।

ताकू नरकन 'ठाम'^२ चोरासी लख मैं भमै ॥६२२॥

[६१६] १. प्र० ३ दहल दलह उठ्यो, द्वि० १ उठ्यो भजन कौन्हीं । २. प्र० १ भारंड नै रापी ।

[६१७] १. प्र० ३ धरिहो । २. प्र० ३ हरि की आन । ३. प्र० ३ करहो ।
४. प्र० १ दीनी गरुड पंख की धूवाई, तृ० १ ताको दीनी गरुड दोहाई । ५. प्र० ३ उह ठाई ।

[६१८] १. प्र० ३ हरी । २. प्र० १ जव । ३. प्र० ३ ठाडे पवन ।

[६१९] १. प्र० ३ चाढे । २. प्र० १ गरजै । ३. प्र० ३ कोऊ सुभट दल सेना, द्वि० १ हिम्मत सगरे जोधन नहि ।

[६२०] १. प्र० १ मधु ।

[६२१] १. प्र० १, २ मे यह दोहा नहीं है, किंतु प्रसंग मे आवश्यक है, इसलिये छूटा लगता है । २. द्वि० १ चिता ।

[६२२] १. प्र० १ दे रही (<रहै), प्र० ३ देह मे । २. प्र० १ ठोरै । ३. द्वि० १ में चरण का पाठ है : धृग जीवन कुल लं ब स्यामि दुख चित ना लहै ।

(६०)

(श्रलोक)

एकतः लक्ष सुरभी एकतः पृथ्वी द्विजं ।

एकतः सर्व धर्माणि स्वामि धर्मं च एकतः ॥६२३॥

(दूहा)

बिधना अपने हाथ सुं तोले सगले करम ।

सब धरम एक पालडे एक पल सामी धरम ॥^१६२४॥

(चोपई)

तारण 'सामि धरम तन हेरै । मंत्र प्रवाह सीह मुख फेरै ।

मारै हाथ सूठ ककर की । 'आन'^१ देत गोरी संकर की ॥६२५॥

^१तारन बचन सुने जब गोरी । संकर अंक छाडि के दोरी ।

अतरिछ ही बोलै बानी । पूरन सकर रुद्र की रानी ॥^२६२६॥

(दुरगा वाक्य)

अहो राह ए नीकी 'बूझी'^१ । पहली ऐसी कोइ न 'सूझी'^२ ।

बनिया जानि 'आप'^३ चढि आए । 'तब'^४ चेते जब 'सिर मैं खाए' ॥६२७॥

देव चरित को अंत न पावै । तू तौ नृप कछु ओर ही गावै ।

मधु मालती नही नर देही । एक प्राण प्रगटै तन बे ही ॥६२८॥

[६२४] १. प्र० १, २ मे यह दोहा नहीं है किंतु यह श्लोक के भाषांतर का है इसलिए अनिवार्य है और भूल से छूटा लगता है । ३. द्वि० जीवन ।

[६२५] १. प्र० १ आग्या ।

[६२६] १. प्र० २ मे इसके पूर्व ६२५ का प्रथम चरण पुनः आया है ।

२. प्र० १, २ मे इसके स्थान पर है :—

छंद—सुंदर पुत्र प्रापती करै । आनंद भूधर पाधरग्रही । मापदमा पदमा करी । चरचुं भूयतास्या वस्य भवतू गज्य सू संकर संकरी । यह छंद प्रसंग समत नहीं है, और न इसके संस्कृत अंश का भाषांतर ही है, इसलिए यह छंद पता नहीं किस प्रकार आ गया है ।

[६२७] १. प्र० ३ बूझै । २. प्र० ३ सूझै । ३. प्र० ३ तुही । ४. प्र० ३ जब । ५. द्वि० १ काल जगाए ।

(दूहा)

जैतमाल मधु मालती तीहुं तन एक सरीर ।
 एह पटंतर पेखिए 'तक्र'^१ खीर 'अरु'^२ नीर ॥६२६॥
 पारबती के बचन सुनि चेत भयो नृप चंद ।
 सरन राख 'बागेसुरी'^१ मेटि सकल दुख दंद ॥^२६३०॥
 मैं इतनी जानी नहीं देवन 'केरा भाब'^१ ।
 लोक लाज तैं एह भई संसारी 'को दाउ'^२ ॥^३६३१॥

(मंत्री वाक्य : चोपई)

मंत्री कहै राय अवधारी । देवचरित को मेटै पारी ।
 तुम तो राए आप बल फूले । होणहार होते [अ] म भूले ॥६३२॥

(राजा वाक्य : श्लोक)

भवतव्यं भवत्येव नारिकेल फलाम्बुवत् ।
 गमवेच्छगमत्येव गजमुक्त कपित्थवत् ॥६३३॥

(दूहा)

नालकेल 'फल नीर जह'^१ गज कवीथ फल खाइ ।
 वह 'फल कित होय जल भरे'^२ वह फल दल कित जाइ ॥^३६३४॥
 'हम हारे'^१ अपने 'भरम'^२ कछु न 'रही'^३ करतूत ।
 राजपाठ उन कुं दियो वह कन्या वह पूत^४ ॥६३५॥

१. प्र० ३ जैसे । २. प्र० ३ ने ।

[६३०] १. प्र० ३ बाघेसुरी । २. द्वि० १ मे दोहे का पाठ है : तारन के नृप
 बचन सुनि कोप भयो मुख दुद । मंत्री को उत्तर द्यौ औसो कहि नृपचंद

[६३१] १. प्र० ३ केरे भाइ । २. प्र० ३ के दाइ । ३. द्वि० १ मे चरण का
 पाठ है : ससारिक सबको कहै जान ते करइ सेव ।

[६३२-३३] ६३२-६३३ केवल प्र० १, २ में हैं, शेष प्रयुक्त प्रतियों में नहीं हैं ।
 पुनः समस्त प्रतियों में ६३३ तथा ६३४ के बीच ११४ छंद आए हैं ।
 ६३४ स्पष्ट ही ६३३ का भाषांतर है, अतः दोनों के बीच में आए हुए
 उक्त समस्त छंद निश्चिन रूप से प्रक्षिप्त हैं ।

[६३४] १. प्र० १ फर नीर जह, प्र० ३ तरनीर ज्युं । २. प्र० ३ जल के फल
 किहा चढ़े । ३. तृ० १ में यह छंद नहीं है ।

[६३५] १ प्र० ३ मे हार्यो । २. प्र० ३ भव । ३. प्र० १ रह्यो । ४. तृ० १ में
 यह छंद नहीं है ।

(चोपई)

मेरो राज ओर को 'खाई'^१ । वे पूत अ बेह^२ जमाई ।
 'कन्या व्याह दोउ'^३ करि देउ । 'जग में सुजस संपूरन लेहु'^४ ॥६३६॥
 तब ही बेग बुलाए नेगी । नोते पाते पठाए बेगी ।
 'देस'^१ देस के नूपत बुलाए । उर (ओर) सभाई बेग मंगाए ॥६३७॥
 जो कछु समिध व्याह 'की'^१ होई । आन कोठार भरो सब कोई ।
 'द्रव्या सरब भडार तै'^२ काढो । 'मेरे जस के'^३ 'कलसा चाढो'^४ ॥६३८॥
 आछे मडफ 'सुअ'^१ बनाए । जबू पत्र बांस पर छाप ।
 बर कन्या 'दोउ द्वारे'^२ राजैं । 'बडे निसाण मेघ ज्युं गाजैं'^३ ॥६३९॥
 ढोल दमामा अरु 'सरनाई'^१ । बंकी भेरि बजै घरनाई ।
 भंरु मृदंग ताल 'डफ'^२ सभे । 'जंत्र रबाब नादसुर बजे'^३ ॥६४०॥

(दूहा)

'इतहि जैत उत'^१ मालती 'बिचे'^२ 'मधु आनंदकंद'^३ ।
 एक ठोर 'मानुं मिले'^४ 'भृगु गुरु सारद चंद'^५ ॥६४१॥
 नृपत चद कर जोरि कै अधिक दीनता होय ।
 मधु सुं बचन कहा कहै चितदे सुनियो सोय ॥६४२॥

[६३६] १. १. प्र० १ खाय, प्र० ३ खाही । २. प्र० १, २ मे यह शब्द नहीं है । ३. प्र० ३ मालती कुं व्याह । ४. द्वि० १ अपजस मिटै तो जस सिर लेहु ।

[६३७] १. प्र० १ चारुं ।

[६३८] १. प्र० १ को । २. प्र० ३ और भडारन तै द्रव्य । ३. प्र० १, २ मेरे जिय को, प्र० ३ मे इह राज कु । ४. प्र० १ कलस चढावो ।

[६३९] १. तृ० १ सुभग । २. प्र० ३ इक घोरो । ३. प्र० ३ जंत्र रबानाद रस नाजे ।

[६४०] १. प्र० १ सघनाई । २. प्र० १ सत्र । ३. प्र० ३ बडे निसान मगल ज्युं गजैं ।

[६४१] १. प्र० १, २ इतहि जैत मधु, प्र० ३ इह जैतमाल इह । २. प्र० १ बीचू, तृ० १ बीच मा । ३. तृ० १ मधू अनंग । ४. प्र० १ बैठे मनुं । ५. प्र० ३ गुरु भृगु सुत अरु चद, द्वि० १ ब्यौ नल्लत्र महि चंद ।

पूत न भाई बंध कोउ कुटुंब सगो नहीं ओर ।
 'किसहै संपूँ भार एह राखे मेरी ठोर'^१ ॥६४३॥
 मनसा बाचा कर्मना यामै 'नही'^१ बिबेक ।^२
 जाके कुल मैं को नहीं 'पूत जमाई एक'^३ ॥६४४॥
 राजपाट तेरो सबै ए दोउ 'कन्या'^१ दास (दासि) ।
 मोकुं आज्ञा होये 'अब'^२ 'करू श्री गोकुल वास ॥६४५॥

(चोपई)

राजपाट मधु [कुं ?] सब दीनो । चंद्रसेन राजा तब लीनो ।
 राज रिद्धि त्रिय बोहोत होई । उनकी कथा लष) नही कोई ॥६४६॥
 काम प्रबंध प्रकास फुनि मधुमालती बिलास ।
 प्रदुमन की लीला इह कहत चन्नभुजदास^१ ॥६४७॥
 राजा पढै सो राज 'गति'^१ 'मंत्री'^२ पढै ताहि बुद्धि ।
 कामी काम बिलास रस 'ग्यानी ग्यान संसुद्ध'^३ ॥६४८॥

॥ इति मधुमालती कथा संपूर्णम् ॥

—००—

-
- [६४३] १. प्र० ३ किस सिर अप्पू राज इह ठोर राखे सुत सोय, द्वि० १ मनसा बाचा कर्मना राजपाट शिर मौर ।
- [६४४] १. प्र० १, २ कोन । २. द्वि० १ में चरण का पाठ है : तीन देव की साषि लै कही वेद विधि आन । ३. द्वि० १ कन्या पति सुत जान ।
- [६४५] १. प्र० १ कना । २. प्र० ३ तो । ३. प्र० ३ करू सो गोकुलवास, द्वि० १ तीरथ करौ निवास, तृ० १ गोकुल करौ निवास ।
- [६४६] १. यह छंद प्र० २ में नहीं है, किंतु इसके बिना कथा अपूर्ण छोड़ी हुई लगती है इसलिए प्रसंग में आवश्यक और प्र० ३ में भूल से छूटा लगता है । इसका पूर्ववर्ती छंद 'राजपाट' से प्रारंभ होता था, और यह भी, कदाचित् इसी वर्ण साम्य के कारण प्र० ३ में यह भूल हुई ।
- [६४८] १. प्र० १ नीत । २. प्र० १ मीत्र । ३. १ योगी पढ़े तो सीध ।

[०]

प्र० ३, द्वि० १, च० १ :

अलख निरंजन चित धरूं समरूं सारद माय ।
कथा कहू मधुमालती निज गुरु तयै पसाय ॥

[१ अ]

तृ० १ :

सकल बुद्धि मे सरस्वती बाहुंगरू के पाय ।
मधुमालती विलाश को कहेश चतुर्भुज [राय] ॥

[२१ अ]

पनिहारी राम सरोवर तरसी । मधु कुंवर रूप पखेरू तरसी ।

[२२ अ]

द्वि० १ तृ० १, २, च० १ :

किं कुलेन विशालेन विद्याहीने तु देहिना ।
कुलहीनोऽपि विद्वांसो सदेशो यत्र जीवते ॥

[२२ आ]

द्वि० १ :

लघुकुल विद्यासहित दीरघकुल अनुमान ।
कुल दीरघ अतिहीन गुन लघू कुल नहीं जान ॥

[२२ इ]

द्वि० १, तृ० १, २, च० १ :

बिद्या बिन सोभा नहीं पावै । बिद्या बिना ज्ञानहि आवै ॥
बिद्या बिन अति मूढ़ कहावै । अपढ़ अकारथ जन्म गँवावै ॥

[३८ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, २ :

अंबर ससिहर जल कुसुद दूर थकी बिहसंत ।
जन्मांतर मेलौ नहीं नेहा नवि चूकंत ॥

म० वार्ता ७ (११००-६३)

च० १ (तृ० १ खंडित है) :

गिर पर मोर रहे अति गाढे । तिनसूं प्रीत मेघ अति बाढ़े ॥
दोय लक्ष जो चद्र मेहमता । कमोद प्रीत वसत बेहि चित्ता ॥
येही विष घरनी महिआवे । तिनसूं निकट दूर गति चाहे ॥

द्वि० १ :

कुमोदिनी जलहर बसे चदा बसे अकास ।
जो जाहू के मन बने सो ताहू के पास ॥
सूरज अकास कमल जन प्रीत नहीं भरपूर ।
जो तो मन मे हेत है कहा बसे भये दूर ॥

लाख कोस पर सूरज चदा । कमल फूले सरोवर फंदा ॥
मेघ अकास मोर गिरिंदा । हित मिले अंत परम समीपा ॥

[४१ अ]

तृ० १ :

मधुमालति कूँ ब्राह्मण भण्णावे । एक बी

[४२ अ]

तृ० १, २ : (५३. १. तथा के बीच में) :

मालति मधु को बदन निहारी ॥
देखत बदन काम तन छायो । मालति के मन मधुकर आयो ॥
मालति मन मे सोच बिचारी ।

[४६ अ]

तृ० १, २ :

लगे प्रीत के बान मालति तन ग्याकुल भयो ।
बिरह सतावे गरत मधुकर सू सनसुष हयो ॥

[६८ अ]

पं० १ :

दूजे बनि इक सिंघनी रहई । बिरह बिथा बौरतै तन सहई ।
येक द्यौस सिंघति मृग देख्यौ । अति मैमंत जु पर भी देख्यौ ॥

(६६)

[७१ अ]

अ० १, द्वि० २, च० १ :

धरणी अगन जल पवन अकासा । तो मो बिच परमेसर आसा ॥
कपटी मित्र द्रोह जो करहीं । कुंभीपाक नरक मंह पडहीं ॥

[७४ अ]

द्वि० १, तृ० १, २ :

मेरी प्रीत परेखो लीजै । कंदप कोटि काम रस पीजै ।
मेरी सुरत लेहो हितकारी । मृगनी भली कि सिंघनि नारी ॥

तृ० १, २ मे दूसरी अर्द्धाली नहीं है ।

[७४ आ]

तृ० १, २ :

सुनि सिंघनि मृग हम कहै तो सूं को पतियाय ।
साधु रूप धरि सिंघनी सो बनचर पकर्यो जाय ॥
मृग कूं पूछे सिंघनी कहो बनचर की बात ।
क्यूँ कर सिंघ साधू भयो करो बनचर को घात ॥

[७४ इ]

तृ० १, २, च० १ :

(मृगो वाच)

येक दिना सुन सिंघनी सिंघकूं लागी भूख ।
सब दिन हूंदत वे फिर्यो सो बनचर पायो रूख ॥
आसन सबही थाकियो कियो जो साधु सुभाव ।
औसी बिधना देहि मति सो बनचर आवे हाथ ॥
कूद फांद कर थाकियो कियो जो साध उपाव ।
चिंटी हूं कूं देख के सो फूंक फूंक दे पाव ॥

(वनचरो वाच)

बनचर बूझे सिंघकूं यह तेरो कोन सुभाव ।
नहिं काठो नहिं बोबरो सो फूंक फूंक दे पाव ॥

(१००)

(सिंघो वाच)

सुनि कपि आतमा परमातमा बसै दूध मा घीव ।
फूँक फूँक पग देतहुँ सो जनि कोइ मरही जीव ॥

(वनचरो वाच)

ठाढे रहे कहूँ जावो जनि मोहो दरसन की आस ।
बनफल दो एक तोर के सो ले आउ तुमारे पास ॥

(कवीश्वरो वाच)

मूरष भयो रे बनचरा सिंघ कहूँ फल खाय ।
भोले भाव जु संचर्यो सो ले चुबको मुषु भाव ॥

(सिंघो वाच)

मुख परियो बनचर हूँसे सिंघ जो पूछे येम ।
तू पड्यो काल के गाल मो तोहि हाँसी आवे केम ॥

(वनचरो वाच)

एक बेर को तू हूँसे पन परसिन्न होवे मुक्त ।
दुरित बात मनमो रही सो परगासूँ तुक्त ॥

(कवीश्वरो वाच)

सिंघने जाण्यो बेरो ते मुख दियो पसार ।
जि हाथि आयो बनचरो तिहाँ जो बेठो जाय ॥
ढाले बैठो बनचरो हियो नैना ढाले नीर ।
सिंघ जो पूछे बनचरा तू क्यो रोवे बीर ॥

(वनचरो वाच)

ने परहरंति मृत्यु अष्टोत्तर राजपडिता ।
धनं कचन समर बिना वाहे विनो नृप ।
तपसि पेम जुगतां सुष दुष समरनां ।
बनं गतां येह बेनि सब सुक्रितां वारनां ॥
सुनु सिंघ जीवन अरु मरन किसुष दुष मेटे नाहि ।
ये तोसे साधकी संगत करे सो मे रोवत हूँ ताहि ॥

(१०१)

(सिंघनी वाच)

मृग मूरष जाने नहीं बहुत कयो समुझाह ।
तृणचरे भागो फिरे ताकी गति है ताहि ॥

[८३ अ]

द्वि १, तृ० १, २, च० १ :

सब पंछी मिलके सुध लहई । पहली कथा कहो कैसी भई ।
साएर तीर ठीठोरा रहई । मेघ बरन पंछी सो कहाई ॥
उत्तानपाद नाम तिसु कही । त्रिया गर्भ सपूरन भई ।
कत बिनंति सुनो हो बोरे । अंडन काज करो कहुँ ठोरे ॥
येहि ठोर अंग धरन कि नाहि । आवे बेला बहि जो जाहि ।
अनत कहुँ अंडन को करो । तिहां जाय एक आस्रम करो ॥
तब पंछी बोलो धरहडी । तेरी बुद्धि बिधाता हरी ।
मेरे अंड जो सायर लेहै । तौ उनि ठौर उड़ाऊ पेहै ॥
तुम निसंक होए अंडन कूं धरो । मनमो चिंता अवर जनि करौ ।
येतनो कहि ठीठोरा गथौ । सरवर तीर ठीकानो लह्यो ॥
येह सुनि ठोठोरा के बैना । साएर क्रोध भए दोइ नैना ।
हुँतो पराक्रम देखूं एह । पाछे याके अंडा देह ॥
मेलि ते अंड लिए तेहि वारि । उडी ठीठोरी गई पुकारि ।
सुन हो कंथ बात उत्पात । मो सुत उदधि लिये परभात ॥
सो स्वामी तेरो बल लियो । तो मो सुत विहूना कियो ।
हुव धरती गंगा के तीर । जिव तावछा होता बलवीर ॥

त्रिया हरण बंधू मरण पुत्रहि तयो वियोग ।

येता दुष जनि सपजे जो संपति होय न होय ॥

त्रिया हरन रघुपति कूं भयो । बंधव मरन गुधिष्ठिर सह्यो ।*
पुत्र हरण रुकमिणि कूं भयो । जनमत पेव प्रदुमन हरि लियो ॥
सो दुष आजु उदधि मोकूं दियो । देषत बाल बिछोहा भयो ।
हुँ बालक बिन कैसे रहूं । निहचै प्राण अगिन में देहूं ॥
अबहुँ तुम पर तजिहुँ प्राण । की मोहि बालक मिलाबो आणि ।
कंथ ने सुणी त्रिया की बात । तू त्रिया जनि करे अपघात ।

जिहां जिहां पंछी होय जे आवो सब सार मेरी करो ।

चंचु भरिके सूकाय साएर कंक सूं भरो ॥

मैं सेवक बैठो रहूँ सब पंछी करो सार ।

सोष नीर साएर भरो सबसे करूँ पुकार ॥

सब पंछी ठीठोरा घर आए । इतते नीर भरि के नावे ।

उतते कंकर सिंधु पुरावे । अैसे करि सब पछि हरावे ॥

पड़े धंध पंछी सब मुये । भीखे उपकंठ त्रिया पुरुष कहे ।

छिन एक प्राण रहे तन सोहे । मेरे काम किहूँ से न होये ॥

(नारदो वाच)

पंछी या नाग बल बुद्धि सागरो किम सोषते ।

उपायो कुरुतां पुरुषा सबला निबल पेषिता ॥

कागली केन मात्रेण कृष्ण सर्प निपातितं ।

कथा ज्ञानमयी श्रुत्वा बुद्धिमंतो विचारयेत ॥

कृष्ण सर्प रहे तो सो रेखा । ऐसी बात कहूँ तुम देखा ।

गरुड तुम्हारो मोटो राजा । सब बिधि करै तुम्हारे काजा ॥

बायस अंडा वृच्छ पर धरे । नित उठि आनि भुअंगम चरै ।

वायस मन मों बुद्धि उपाई । गयो राय के मंदिर ठाई ॥

सुभग धाम पर बैठो जाई । इत उत दृष्टि चलावै ताई ।

रानी कनक हार जिहां धर्यो । चपलाई करि ताकू हर्यो ॥

खेड़ हार जब बायस भागो । राजा सेन सब पाछे लागो ।

कृष्ण सर्प जो मार्यो जिहां । लीतो हार निकाबि तिहां ॥

डारत हार असवार तिहां धाए । मारी सर्प हार तिहां लाए ।

राणी देख हार सुष गयो । बुधि बल काग सर्प मरायो ॥

अब तुम ऐसो करो उपाय । छल बल लेके करो अपनो दाव ।

सुनत ठोठोरो गयो अकास । पहुँचो बेग गरुड के पास ॥

दोय का जोड़ो ऊभो रहो । सब बिस्तत पाछलो कहो ।

सुनतहि बचन गरुड उठि चल्यो । पंख प्रवाह साएर षलभल्यो ॥

ब्रह्मरूप होइ आयो पास । हम तो आये तुमरो दास ।

दीन्हो भेंट रतन को हार । दए अड पुनि कीन्हो जुहार ॥

अैसो आय गरुड बलि बड । जाके डर कपै नव खंड ॥

घूहर अघो दिवस नहिं सूके । ताकूँ राज काज कहा बूके ॥

(१०३)

[८४ आ]

द्वि० १ :

टिहिहरी केन मंत्रेण सागरो जल सोषयेत ।
साध को जीव को धृत्यो धृग जीवान पथ्य को ॥

[८५ अ]

तृ० १, २ च० १ :

बडा भए तो कहा भा बुधि बल उपजे नाहिं ।
ससा सिरं कूं डारियो देखत कुवां के मांहि ॥
(च० १ मे इस दोहे के स्थान पर है :
जेसे रे बुद्धि बल तसे नर बुद्धि संकतो ।
बल वेह निसीह मंदो विम्रता ससा सिंह निपातिते ॥)

बन मो एक सिंघ जोरावर आई । ताम पटंतर और न कोई ।
ससा सूं उन प्रीत जो कीन्ही । कपट करि पान तेहि लीन्ही ॥
मास अहार सिंघ जो करही । मेरे बन मों कोउ न रही ।
ससा कहे एक सिंघ जो आयो । सो सिंघ कहे त्रिया ले जाऊँ ॥
कोपि सिंघ ससा सूं कहे । मोरि बतावउ कहा रहै ।
ससा चल के फुनि आगे जाये । पाछे थे वे सिंह बुलावे ॥
कुवा किनारे उभा रहाई । देत हांक कूप गिर जाई ।
देषे वा मो दरस जो करही । सबद सुनत कूप परि मरही ॥
करता सेवी क्यों कहिं करिही । तो बडो कपूत होइ निसतरही ।
चातुर होय तो बुद्धि बिचारै । तो कहा ससा सिंघ कूं मारै ॥

[८६ अ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

मेघ बरण एही चित दीजे । अपनो बैर दाँव के लीजै ।
कांचो मनो कबहु ना कीजै । जिव दिढ होय तो घूहर छीजै ।

[८७ अ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

मेघ बरन मन्त्री यूं कही । द्रुम वेली कथा मोसूँ उच्चरही ।
कैसी विधि वेली द्रुम चढ़ी । आगे कथा कटो क्यों बढ़ी ॥

(१०४)

[१४ अ]

द्वि० १ तृ० १, २ च० १ :

सागर निकट ब्रच्छ इक आही । तिहां हस बसै ब्रच्छ माहीं ।
 बधिक निकट तेहि चलि कै आयौ । रैण समै पै फद दुरायो ॥
 ज्या दिन द्रुम बेली निकट ही ठाढ़ी । वृद्ध हंस मत दिन्ही गाढ़ी ।
 यहै वेलि तुम डारो तोरि । दुख न पावो फेरि बहोरि ॥
 तरुवर हंस नहिं माने बात । आगे सू कहूं सुनो विष्यात ।
 रोकि वृच्छ पावे नहिं ठाण । तब पूछो श्रेष्ठ आगे बाणि ।
 जठर बुद्धि हम मानी नहिं । अब जिव बिचारी उभार करारहिं ।
 जो तो प्राण तुम राखो आज । बुद्ध प्रसिद्ध सू सारो काज ।
 जिहां जो कहे हंस को राखे । एक मतो उपजो मन मांह ।
 मृतक रूप धरो तुम सबही । बधिक मृतक जाणै तुम अबही ॥
 जब पृथिमी मडल नापे तबही । फुनि उडि चलो प्रवारहि सबही ।
 असै रे मित्र करिउवरो आजे । नहचल करो सरोवर राजे ॥
 जैवे कही सोहि सब कीन्हो । मृतक रूप सबही धरि लीन्हो ।
 चढ़यो ब्रच्छ पर बधिक पचारी । चहु दिसि पास देइ कर डारि ॥
 चढ़ि करि हंस गही करि नावे । देखि मृतक बहुत दुख पावै ।
 कौन बसि भई अब इनकू क्याजे । गयो प्रान मोहि भयो अकाजे ॥
 गहि ले जातो नग्र मभारै । पावतो द्रव्य बहोत अपारै ।
 सोचि द्विष्टि तब दीन्हो डारि । उत्तरने लागो ब्रच्छ मभारि ॥
 उडि चले हस भए एक ठौरै । दुष्ट पाछे फिरि कहां तक दौरै ।
 कहे मित्र याहि बिद सोहि । समझि बात चलो सब कोइ ॥
 असि विधि तुमहू करो उपाव । छल बन लैहो आपण दाव ।
 मंत्रि कहे सोही बिधि कीन्हो । तेको बचन तुम हित करि लीन्हो ॥

[१०३ अ]

द्वि० १ :

जौ दुर्जन प्रण अति करै तौ न पतीजै गंभीर ।
 ज्यों ज्यों नीचे ठिगंली त्यों त्यों सोषै नीर ॥

[१०६ अ]

द्वि० १ :

पाहन रेख जु उच्चरै हृदय रहै कछु फेर ।
साध बचन कबहू न टरै ध्रुव टरै की मेर ॥

[१३६ अ]

तृ० १, च० १ :

कर्म लिखे येहि लेख यह अरु लिखे कर्म के लेख ।
त्रिया भुवन बिसेखिये सो जावे नहि कर्म की रेख ॥

[१३६ आ]

प्र० ३, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

जारू जीतब काज जो प्रीतम अंतर धरू ।
सिंघणि कै कुल लाज जो मृग पहले वा मरू ॥

[१३६ अ]

द्वि० १ :

समयो रबि पश्चिम उगे जल में तरै पषान ।
समयो स्थल छुंडियो कर्म देख दृढ जान ॥

[१४७ अ]

तृ० १, २ च० १ :

नेह निभाए ही बणै अर सोच सोच मन आण ।
मन देह और सीस देहे मन नेह न दीजे जाण ॥
सिंहनि सोच हिये कियो मृग माख्यो मोहि काज ।
बिधि के अंक न चूकही आय बनी येह आज ॥
तन रोवै मन ढगमगै लियो न मेरे मान ।
प्रीत बचन के कारन सिंघ न दीन्हो प्रान ॥

[१५० अ]

द्वि० १ :

बारि बुंद या दिन सजित ता दिन लीख्यो सुभाव ।
हानि मृत्यु दुख सुख निपट मिटन कौन पै जाइ ॥

(१०६)

[१२५ अ]

तु० १, २, च० १

अहमद तजै अगार ज्यूँ ओछे के संग साथ ।
सियरो कर कारो करै सो तातो दाकै हाथ ॥
नैना केरि प्रित्तड़ी जो कर जानै सोय ।
जो रस नैना उपजै सो रस सहज न होय ॥

[१२६ अ]

द्वि० १ (सद्धित रूप मे), तु० १, २ च० १ :

मालति कहै सोइ सुन लीजे । कृष्ण किन्ही सोई अब कीजे ।
उन ने नार चंद्रावलि लाई । उनके कहा कमी थी काई ॥
मात पिता सगरे मिलि बरजे । उनके मन ते केहि न भजै ।
सुन मधु एह टेक परि हरिये । कृष्ण कियो सोई चित धरिण ।
चंद्रावलि कहाँ की सुदर । वाक् स्याम सु आनी मंदिर ॥
सगरे बरजे ते कहा कीन्हो । कसननाथ चंद्रावलि लीन्हो ।

सुनो मधुमालति कहै सोही करिये आज ।

कृष्णमुखी चंद्रावली सोही करो महाराज ॥

(मधु वाक्य)

सुन मालती उन खेल न परिये । उनकी बात सु चित में धरिण ।
वे जगदीस त्रिलोक के नाथ । जोति सरूप काछे सग न साथ ॥
उनकी बात मोतें सुन लीजै । उपाय होय तो चित में दीजै ।
जो तुम सुनो तो तुम्हे सुनाऊँ । महापुरुष को भेद बताऊँ ॥
कहै मालती मधु सुरग्यानी । मोहि सुनावो कृष्ण की बानी ।
सुनो मालती मधुकर कहै । तपसी एक बन खडै रहै ।

लोभ मोह जाके नहीं नहीं काम को धाम ।

भूष प्यास जानै नहीं निसि दिन हरि को ध्यान ॥

दुरबासा रुषि जाको नाम । कृष्ण को गुरु रहै उद्यान ।

सब ईद्री मिलि मतो उपायो । आनि रुषी करं कहे सुनायो ॥ॐ

नयन नासिका करन मुख हाथ औ पाव सरीर ।

सब मिलि करि यूँ उच्चरै हम न रहै तुम तीर ॥ॐ

नयन रूप देखै नहीं खवन सुनै ना राग ।
 ना सुगंध ले नासिका रसवा रस ना लाग ॥ॐ
 सबको परबोधन कियो कृष्ण लिए गुहकारि ।
 जेती तुम ग्रह गोपिका सो आयो सब झारि ॥ॐ
 अज्ञा ले गुरनाथ पै कृष्ण चले सुषधाय ।
 मंदिर मार्हीं आय करि कीन्हो सब बिश्राम ॥ॐ

कृष्ण अनंत देही विस्तारी । सबसो क्रीडा करी मुरारी ।
 काहू को मुख सो मुख लावै । कहि गोपी वे प्रेम हित लावै ॥ॐ
 केहि सो हेत करै अति भारी । ऐसी हरि माया बिस्तारी ।
 सब सेती फिर बात सुनावै । सुनत बैन गोपी सुख पावै ॥ॐ
 बहु पकवान करो तुम नारी । दुर्बासा रुषि तुम्है हंकारी ।
 भोर भए तुम सब मिलि जावो । गुरुराज को जाय जिमावो ॥ॐ
 भार भयो गोपी सब जागी । आभूषण सब पहिर सभागी ।
 घर घर ते मिलि के सब आई । प्रभु वाक्य ते सभी सिधवाई ॥ॐ
 बहु पकवान औ पान मिठाई । ले ले सब जमुना तट आई ।
 जमुना देखि भई सब ठाढी । करे कहा अब जमुना चाढी ॥ॐ
 गोपी सकल स्याम पै आई । जमुना अधिक दूर प्रभु छाई ।
 कहै यदुनाथ सुनो ब्रजनारी । जमुना तें यूँ कहो पुकारी ॥
 कृष्ण बाल ब्रह्मचारी होई । तो जमुना मारग दे मोई ।
 गोपी सब हरि अज्ञा मांगी । लाज मो हस हस मुसकानी ॥
 केल करत जमुना पै आई । बोली सब मुख सोर मचाई ।
 जमुना कृष्ण बाल सुनि पाई । भई पगार बार ना लाई ॥
 सब उतरी जमुना के पारा । अचरज बहु मन माहि बिचारा ।
 हर्षित हो तपसी पहं आई । चरण भेंटि पुनि बिनै सुनाई ।
 तपसी कहै सुनहु ब्रजबाला । तुम कू भेजी नद के लाला ।
 सीस धरे तुम जो कछु लाई । सो मुख सकल देहु पधराई ॥ॐ
 नाना विधि के भोजन जेते । तपसी मुख मे डारे तेते ।
 बायो मुख कूप की नाई । सब पदरथ मुखहि समाई ॥ॐ
 गोपी सब चरणन लपटाई । दे अज्ञा रुषिराज गोसाई ।
 हर्षित हो रुषि अज्ञा दीन्ही । गोपी सभी कृष्ण रस भीनी ॥ॐ

गावत हंसत बजावत तारी । अकार ले निज धाम सिधारी ।
जमुनापूर देष ब्रजनारी । रूषीराज पै आय पुकारी ॥
तपसी कहै मै बुद्धि बताऊँ । जमुना सो 'यह बात सुनाऊ ।
दुर्वासा अल्पाहारी जे होय । तो जमुना मारग दे मोय ॥
गोपी फिरी हरष बहु बाढ़ी । मगल कर जमुना जल ठाढ़ी ।
हतनौ भोजन हम लै आई । भोजन मै रुषि बार न लाई ॥
धन यह गुरु धन यह चेला । बिधि ने भलो मिलायो मेला ।
गुरु भोजन कर अल्पाहारी । रास लिप्त बाल ब्रह्मचारी ॥
गोपी सब हंसि हस सुसकाई । जमुना सो यह बात सुनाई ।
जमुना सुनि सो मारग दीनो । गोपी सब कोतूहल कीनो ॥
उतरि गई जमुना ते पारा । नाचत गावत मंगलाचारा ।
सब ही निज निज मंदिर धाई । धाई प्रभु चरण न लपटाई ॥

तुम गल अगम अगोचरा कछु बरणी ना जाय ।
तुम व्यापक जगदीस हो जग तुम माहिं समाय ॥
हर्ता कर्ता जगत के कियो सकल संसार ।
सुनहु मालती मधु कहै उन गत अगम अपार ॥

सोलह सहस एक सौ नारी । व्याही सकल तौहु ब्रह्मचारी ।
दस दस पुत्र सयन कूं दीने । छपन कोट जादव सब कीने ॥
प्रभु चरित्र कहा कोऊ जाने । मलिन चित्ततो कहा बखानै ।
सुनि मम बचन ग्यान मन धरिण । यह अज्ञान सकल परिहरिये ॥

उनकी तो उनते गई सुन मधुकर तूं बैन ।
मो मन माहीं तू बसै का बासर का रैन ॥
लगे काम के बान नाहि निकारे निकसिहै ।
चित मे नाहीं धीर बचन मालती यूँ कहै ॥

द्वि० १ मे यह पूरा प्रसंग कुछ सक्षिप्त है : उसमे * चिह्नित छंद नहीं हैं,
और शेष छंदों की शब्दावली भी किंचित् भिन्न है ।

[१५७ अ]

च० १ :

सुनत मालति बैण मधू कहा सोही सही ।
धन धन वाही रैण ज्या देषे तुम अवतरे ॥

(१०६)

[१५७ अ]

च० १ :

नैना केरी प्रीतडी जो कर जाणै सोय ।
जो रस नैना ऊपजै सो रस सहज न होय ॥

[१६२ अ]

तृ० १ :

कहो मधू कैसी करुं करनराय गत होय ।
इन व्रत लीनो पदमावती एह सूक्त हे मोहि ॥

[१८२ अ]

द्वि० १ :

कोटि सयानप सहस बुधि किया करो सभ कोइ ।
अनहोनी होवे नहीं होनी होइ सु होइ ॥
मैं जु ठटी कछु और ठाठेरे औरैं ठटी ।
बाको ठट लागि ठौर मेरो ठाट ठर्यो रखौ ॥
अहिरी मटकी संचरे जन तिह रंग नये ।
मानस चेते और कछु दैव और करेय ॥
जो कछु लिख्यो ललाट तामे घट बड़ को करे ।
मिटे न पूरब अक करता कलम जु कर गहै ॥

[१८४ अ]

तृ० १, च० १ :

सपना संपत काच जल बाज जिया प्रभवास ।
कर्म लिख्यो सो पाइए करो भरोसो तास ॥

[१८७. १ अ]

द्वि० १ :

कन्या उदर परो जनि कोई । द्रव्य हानि जग सेसी होई ।

[१९५ अ]

द्वि० १ :

कर छूटी कृप परी काढ़ न सक्कै कोइ ।
ज्यों ज्यों भीगै कामरी त्यों त्यों भारी होइ ॥

(तुलना० छ० १६०)

(११०)

[१११ अ]

तृ० १, च० १ : (पद्मावती वाक्य)

बाबुल बैद बुलाय कै गहि पकराई बांह ।

मूरख बैद न जानही करक करेजे माहिं ॥

(तुलना० मीरां)

कहा अंधे कू आरसी कहा गूगे से बात ।

मूरख क्या समझाइये करना होय सताप ॥

हंसू तो दंत परखिये रोऊँ तो काजर जाय ।

आपने जिये मे यू रहूँ ज्यूँ लकड़ी घुन घाय ॥

कोण सुने कासूँ कहूँ येह जीव उपजे वात ।

मेरे उर अंतर सखी करवत आवत जात ॥

गिरिते परिये धाय जाय समुंदर बूडिये ।

मरिये माहुर खाय मूरख मीत न कीजिये ॥

अण छुत्याछुत देषके जिव मो ल्यावै रोस ।

कारन लिलाटी आपणी दर्ई न दीजै दोस ॥

[१११ अ]

तृ० १ च० १ :

नवसत सजि ठाढ़ी भई अरु दिवलो धर्यो उतार ।

अवर सषी कछू यूँ कहूँ कि आव बैल मोहि मार ॥

सषी काजर केसो चंद लो मैं सबी सजे निगगार ।

अवर सषी मै यूँ कहूँ कि आव बैल मोहि मार ॥

[२०२ अ]

तृ० १ च १ :

क्या खूबीहै नैन की अर तैसे मीहे बोल ।

तीन लोक मो साहिबो सो बजै प्रेम का ढोल ॥

मैं बैठी रंग महेल में अर और नहीं कछु कार ।

मै मूं से क्यूँ कर कहूँ कि आव बैल मोहि मार ॥

करणा होय सो कीजिये येह जोबन देह नेह ।

सदा न सावण पाइये सदा न बरसे मेह ॥

सदा न सावण पाइये सदा न बाली वेस ।

सदा न जोबन थिर रहे सदा न स्यामर केस ॥

(११२)

[२१८ अ]

तृ० १ च० १ :

चित थे उतरी नार तेह चाहे चित चइन कू ।
अब मन समझ गँवार चित उतरी फिर ना चहे ॥

(मालती वाक्य)

तन की तो मटकी कछुं मन की कछुं जो डोर ।
चित उतरी फिर चित चढू ज्यो चकरी की डोर ॥

[२२० अ]

प्र० ४, द्वि० १ तृ० १ च० १ :

रबि गृह गए चद हुइ मंदा । हरि बावन बलि के गृह बंदा ।
सकर जटा सुरसरी आई । अैसे बर लघुता तिण पाई ॥

[२२१ अ]

तृ० १, च० १ :

तजिये फल बिन तरवर ताही । तजिये सरोवर नीर जो नाही ।
तजिये सजन तिरा सुख नाहीं । तजिये ब्रच्छ बबूल की छाही ॥
तजिये गज सिर नावत नाही । तजिये नरपति तारे नाहीं ।
तजिये बालक धनवान को सोई । ताको मित्र करो मति कोई ॥
तजिये ठाकुर बाचा चूके । तजिये देवल बिसरा टूके ।
तजिये नार तिहां दिल फोको । ये ता तजि दूर सु नीको ॥
येता तजि दूर जो रहिये । पिता जो ओछा गारी दहये ।
सूम पड़ोसी निहचै छड़ो । येता तजि और सो मंडो ॥

येता की संगत करे बिन माख्यो मर जाये ।

जे जैसी संगत करै ते तैसो फल पायो ॥

देवल सांप कराळ घर और चल चींती नार ।

ठाकुर वाचा चूकणो येता परा निवार ॥

प्रथम दिवस चद्रः सर्व लोकैक वद्यः ।

सच सकल कलाभिः पूर्ण चंद्रो न वंद्यः ॥

न करोति मतिगवनं मित्र वादे मित्र गृह ।

अति प्रच्छति अति दोषो भावहीन ते नितं ॥

(११३)

[२३१ अ]

तृ० १ च० १ :

बहु भोजन काया दहे चित्ता दहे सरीर ।
अंतरंग के उट्टे कोउ न जाने पीर ॥

[२३१ अ]

द्वि० १ :

कौन सुनै कासों कहो जो जिय उपजत बात ।
मेरे उर अंतर सषी करवत आवत जात ।

[२५३ अ]

द्वि० १ :

कि करो कुत्र गच्छामि रामो नास्ति महीतले ।
दम्पत्यो वियोग दुखं एको जानामि राघवः ॥

[२५३ आ]

प्र० ४, च० १ ;

सुषमै ही दुष उपज्यौ भयो न दुख को कूप ।
दुज मै ही सुख उपज्यौ बिध सुं बिधक अनूप ॥

[२५७ अ]

प्र० १, प्र० २, प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

नव नछत्र वरसाय भरत बूंद भँधै नहीं ।
स्वात सुणत उठि ध्याय सीष सैन कौनै दर्ई ॥

[२६६ अ]

द्वि० १ :

वेव सकल बस व्यास के व्यास विश्व के हेत ।
मंत्र यंत्र सब संयुते याते ब्राह्मण देव ॥

[२८१ अ]

प्र० ४, द्वि० १ :

आरत मीठी आपणी ले घर मादा पूत ।
आवण छाछ न पावती जठे जे पावै दूध ॥

म० वार्ता ८ (११००-६३)

(११४)

[२८२ अ]

तृ० १, च० १ :

आन आपने काज कूं बोहोत बडाई देत ।
काम सरे सुख बीसरे फिर कोउ नाम न लेह ॥

[२८२ आ]

च० १ :

आन आपने काज कूं बोहोत करी मनुहार ।
काम सख्यो दुःख बीसख्यो फिर कोउ न बूझै सार ॥

[२८६ अ]

च० १ :

आपन कूं जो दुष दहे औरन कूं सुष देह ।
ऐसे बिरला कोइ नर सो जुग मों जस लेह ॥

[२८६ आ]

तृ० १, च० १ :

पर उपकारी कोइ येक होई । जीवन फल जाको जस सोही ।
पर उपकार काज के सुरे । पृथमी देव सत सोही पूरे ॥
चाको नाम प्रात उठि लहै । सो भौसागर दूसा रहै ।
औसी बात बेद मों भाषी । और संत जल बोले साषी ॥

तरवर कबहुं फल न भषै नदी न अचवै नीर ।

परमारथ के कारने साधो धन्यो सरीर ॥

दाता तरवर देय फल पर उपकारी जीवंत ।

पंछी चले देसावरां ब्रह्मा सुफल फलंत ॥

(अंतिम छंद 'कबीर ग्रंथावली' की साषी ७३२ है, और गुरु ग्रंथ साहब में भी कबीर के सलोकों में है : दे० 'सत कबीर') ।

[२८६ आ]

च० १ :

तन मन धन सब आरप्यो सब धन दीनो सबाय ।

बाखी था सत बरषियो हंसा दियो चुगाय ॥

अष्टादश पुराणानि व्यासस्य बचन द्वयं ।

परोपकाराय पुण्याय पापाय पर पीडनम् ॥

(११५)

पर उपकार पुरष हे सत राखे करतार ।
जे उपगार बिचारहीं सो कबहुं न आवै हार ॥

[२६६ अ]

द्वि० १, वृ० १ च० १ :

आदौ भंजन चीरं हारं तिलकं नेत्र अंजनं ।
कुंडलं नासा मुक्ताहारं पुष्पं भ्रूणकारत नूपुरं ॥
अंग चंदनं कंचुकि छविमयी छुद्रावली घंटिका ।
तांबूलं कर कंकणं चतुरया शृंगार षोडसां ॥

[३२० अ]

द्वि० १, वृ० १, च० १ :

वैदूर्य मणिमाणिक्यं हेमाश्रयं उपलभ्यते ।
निराधार न शोभन्ति पंडिता वनिता ज्ञता ॥

[३२६ अ]

वृ० १, च० १ :

पाटल ते मालति भई भंवर भयो मधु सैन ।
जैत सेवंत्री निकट हे निरखै देष हो नैन ॥

[३३८ अ]

वृ० १, च० १ :

जरी मालती संग मधुकर कृं भावे नहीं ।
दिन द्वै रह्यो न सोग लोक लाज सो ही तजी ॥
बढ़ नहीं बेली नही नहिं काहू को संग ।
कोन कारन भंवरा रहे सो असम चढ़ावत अंग ॥
जा दिन पाडलि फूलती रहे तो वाही संग ।
प्रीत पुराने कारने अब असम चढ़ावत अंग ॥
प्रीत होत तब क्यों रह्यो जस्यौ न वाही संग ।
प्रीत पुराने कारने अब असम चढ़ावत अंग ॥
ता दिन भंवरा घर नहीं अरबन मों लागी दंग ।
हाइ भयो दूटत फित्यो सोले जा ताहूँ गंग ॥

गयो नः पाछे आवरी अर कोयला बरन सरीर ।
गई मील कहां पाहये सो इंडत फिरे करीर ॥
३३८ का प्रथम दोहा प्रायः शब्दशः छंद ३४० है ।

[३४१ अ]

चु० १, च० १ :

सिंघन बड़ी येह मालती फूलहि, फूल प्रसंग ।
सो क्यों भवरा छाव के भसम चढ़ावन अंग ॥
दौलासी मालति जरी अर भवरा जहो खेहि संग ।
छार उदावन कूं रखो सो ले तारन कूं गंग ॥

[३६२. १ अ]

दि० १ :

याको और, बहान सुनि लेठं । तब यको कछु उत्तर देठं ॥

[३६३. १ अ]

दि० १ :

मेरी प्रीत, मान, निरक्षरी । हित हित हौं तिस बसर सारी ।

[३६३ अ]

चु० १, च० १ :

जो चित राखै एक सौं तोही निरभे जाय ।

दोय, सुख बादल बाजणे, न्याय, थपेड़ा खाय ॥

(तुल० 'कवीर प्रथावली' साखी १६४)

करता जरम न देह जो जनमै तो ने, दहै ।

कै मधुकर, रखेह कै दल दाधी मालती ॥

उत्पति एक समान प्रीत हेत मत्त दोउ धरै ।

पुहुमि न उगो सूर जो अंतर मालति करै ॥

जो कहू जीव में ओर तो साषी संकर देव ने ।

केहन रहै अषोढ कै मधुकर परसै मालती ॥

जिह्वां दर्द के ठर नहीं अरु नहि पंचन की लज ।

ताम्र बोल बिगूषिये सो मौन भली पछिगज ॥

निस दिन आठ पोहेर मां नैक न बिसरूं तोहि ।
 जिहां तिहां नैना फिरै तिहां तिहां देखूं तोहि ।
 बात कहूं तो पीवकी कहूं तो पिव की बात
 और बात सब बात है बात बात में बात ।
 अली सबै तन पीर है बिना पीर कोउ नाहिं
 बिना पीर नारी कही धृग जीवन जग माहिं ।
 प्रीत तो औसी कीजिये जैसी चंद चकोर ।
 साँचि निरखि हारे नहीं धृग जीवन जग माहिं ॥
 * प्रीत जु ऐसी कीजिये जैसे आक औ दूध ।
 औगुण ऊपर गुण करै ते उत्तम कुल शुद्ध ॥
 रेण (राम-च० १) तलाई बड फल कायर हाथ षडंगा ।
 गहिली जोबन कृपण धन कारज किण नहिं लग्ग ॥

* चिह्नित छंद च० १ मे नहीं हैं, उनके स्थान पर निम्नलिखित हैं :

मित्र सबीकू कीजिए जात छांद ए चार ।
 अहीर नाकेदार नृप चौथी जात सुनार ॥
 लेन देन की और है कहन सुनन की और ।
 अब मन की मन जानही सो अपने जिवकी दोर ॥
 तुम मानो हम बीछरे आ हम मिलबे की आस ।
 नैना मे परखो भयो सो जीव तुमारे पास ॥

[३७८ अ]

द्वि० १ :

महि लुंठति पादाग्रे कांचन शिरसियार्यते ।
 क्रय विक्रय बेलायां काचो काच. मणिः मणिः ॥

[३८४ अ]

तृ० १, च० १ :

लुग बेवहार जानिके डरिये । नहीं तो एक सुनि सत रहिये ।
 वेह संख बात रामके हाथे । सरबर कौन करै तिन साथे ॥

(११८)

[३८४ आ]

तृ० १ :

साप सिंह सगाइ कदीर चलावै । दाव परै दोऊ रुख धावै ॥
खिलै लेख सो कबहु न भावै । तीन लोक तजि जाय कहुं आगे ॥

[३८५ अ]

द्वि० १ :

कपिना केन कुर्वन्ति केन कुर्वन्ति योषिताः ।
मद्यपानान् जल्पन्ति किन् भष्यन्ति वायसाः ॥

[३८६ आ]

च० १ :

सत्त सील त्रिया साधक रहई । यह बात तुहू साची कहई ॥
सत्त सील येह प्रीत के जानत येह बिचार ।
प्रीत रीत वह कर सकी सो काम कंदला नार ॥

बहुर जैत बूझै औसी । कुंदला प्रीत केहि बिसे कैसी ।
कैसे प्रीत प्रसंग सुनावो । मेरे मन को संदेह मिटावो ॥
कहां को देस कौन सी नार । कैसे प्रीत भई कौन बिचार ।
कैसे ब्राह्मण तज्यो हो देसा । कौने कारण गयो परदेसा ॥
मधु बूझै हूं किति येक गाऊं । जो बूझै तो कहे सुनाऊं ॥
पोहपावती पुरी अभिराम । नृप गोविंद चंद तिह नाम ।
धरम धवल हे राजा गुनी । देस देस जिहा कीरति सुनी ।
हय गय संपत बडी अपार । जि कैह्येक जुग भुज भार ।
ताकी रानी प्रेम अनूप । निस दिन बदन बिलोकै भूप ॥
रुद्रमती जो मनोहर गात । सुंदरि और एक सो सात ।
मानूं सकल काम की कूटी । सोहे रुचि अंग छुबि छूटी ॥
अबला बाला मुगधा बाल । प्रौढ़ा कह्यक नैन बिसाल ।
रची चित्र बिचित्र सरूप । कैयक पदमिनि बस कीन्हो भूप ॥
मद गरु रह सत्त निउदार । गिनत नहीं मद केतन भार ।
जोबन छुट्यो छुबीली अंग । बाढ़ी नृप सूं प्रीत अभंग ॥
भृगु सावक भूले दग देष । भूले हिम कर ससि बहु लेख ।

बेनी देखत दुरे भुजंग । अलक देखि अलि कूं भयो पंग ॥
 भौहैं मानूं जुगल कि चाप । जिते जगत मनमथ धरे आप ।
 नासा देखत कीर कुठीर । तजि तत छन भए अधीर ॥
 दसन देखि दारिम दुरि गयो । दूर बज्र सो भाव न हेत्यो ।
 बिद्रुम बिंब जो अधिक सुरंग । अधर देखि तिन भयो त्रिभंग ॥
 कनक पात्र से जुगल कपोल । दस कै दरपन सी द्युति लोल ।
 मधु थे मधुर बचन अभिराम । भूले पिक सुनि छवन सुकाम ॥
 चिबुक चाह तिल तेजक मोलसे । कुंज कोस जनु अलिकुल बसे ।
 कंठ कपोत कंबु छबि लही । भुजा मृनाल सम सोभा गही ॥
 कुच कठोर श्रीफल सम द्यूत । कमल कली सूं भयो विरोध ।
 कर पल्लव कामनी उदार । निरजल दल नीके जु कुवार ॥
 त्रिबल त्रिबेनी की ढिग लंक । भागि सिंह दूर धरी संक ।
 कुच नितंब दोड भारज जान । बेनी बीच धरी त्रिया आनि ॥
 मदन सिंघासन से ओ लसे । नृप मनि मानुं कसौटी कसे ।
 आलस युक्त त्रिया की चाल । मद करद भूले तकि आल ॥
 चरन सरोज पंग दल दीप । नख चंद्रिका देवे नग छीप ।
 नेपुर अरु मंजरी सुबंस । बीबा सावक बोले खग हंस ॥

बिन गोहने छबि गोह रहि न कूं छबि देत ।
 गोबिंद चंद नरेस को सो पलपल चित हरि लेत ॥

गोबिंद चंद नरेस कि बाम । गुन सरूप कहे जीत्यो काम ॥
 घेरि रही छबि त्रिपिन कुरंग । बागुर सो कर राख्यो अंग ॥
 बारह अभरन सोलह कला । अरु सिंगार षोडस निर्मला ।
 बांधे चरन से हिण तासु । बत्तिस लच्छन अंग बिलास ॥
 येहि बिधि रुद्रमति पढ़ पाठ । ओरनि तुम बिरूप अचाट ।
 मदसूदन प्रोहित मकरंद । तेहि कुल प्रगटि भयो दुतियो चंद ॥
 माधवनल तन धर्यो मनोज । मानूं हो फूत्यौ चैन सरोज ।
 कोट कला जाके गुन अंग । जाने संगीत सुधा सुखधंग ॥
 जनम होत जननो अरु तात । पाथो षरो कुलच्छन गात ।
 पसु पंखी नर बसे अनुरागे । रूपरासि मोहे षग नाग ॥

माधवनल जल जलमियो सपन कियो तब बाल ।
 सुर समूह सब पसुपति सुनत भये बेहाल ॥
 राग छतीसो आलपे एक रुदन के माहिं ।
 सुनत राम त्रिया छकी विरह उपजो मन माहिं ॥

सुनत रुदन सबही चलि आई । विरह विकल कछु कहि नहिं जाई ।
 उभी कामिनी जूथ मिलानी । काम जरत सब सषी रोकानी ॥
 ऐसे भए बरस दोय चार । सबही मोई नगर निकार ।
 पांच बरस को राग सुनावै । सुर नर मुनि सुनिके सुष पावे ॥
 यंत्र बनावे षरो सुजान । बरस पंचदस रूप निधान ।
 राजा पुत्र जानि पोषियो । रानी अपनो सरबस दियो ॥
 राजा कहे सुनि माधो नला । तो मुख हरीचंद्र की कला ।
 रूप देखि सकुचे नृप बेन । रति पति भूलि दुराये नैन ॥
 बन की रच्छा करो कुवार । जैसे परिवल चढ़े अपार ।
 कस्तूरी केसर अरगजा । सीचहु द्रुमबेली मनरजा ॥
 जासे बास चढ़ै चौगनी । फूलि फूलि बेल बड़े पुनि ।
 नृप आयस तैं गयो अराम । जनु बसंत रित फूल्यो काम ॥
 माली के बालक नव बेस । ते दिन हेदु स संग नरेस ।
 निस दिन जतन करावे सोय । जैसे फूल नवेला होय ॥
 चढ़ै चौगनी बास सुवास । मधुपति न छंडे तिहपास ।
 राजा रीझ देत बहु दान । गिने पुत्र थे अधिक सयान ॥
 बैठी रहे सरोवर तीर । सुंदरि भरन गई तिहां नीर ।
 रूप देखि मोह्यो सुंदरी । सीस लिये जल गागर भरी ॥
 कैयेक मुरझ परी झग लाजे । मानहु हरी काम मृगराजे ।
 मधुमाख ज्यो रहि लिपटाए । दिवस अस्त भये मंदिर जावै ॥
 पति सूं कथा कहे आपनि । नैनन की सुधि भूली तेह तनि ।
 मिलि सब सूं दोही सोए नार । मारी सकल मैन रस भार ॥
 अति बेहाल तन कीन्हो दावे । राख्यो माधवानल पर भावे ।
 सुत पति गृह छाड़ी यह आने । लिखै चित्रणी चित्र समावे ॥
 दिवस चरित्र ये तो सब करे । राति आपने पति पर रहे ॥
 काली सर मोहिनी सनेहे । ताते त्रिया संभार न देहे ॥

माधव बिप्र प्रवीन छरी निस के धरा ।
 पुर प्रमदा भई लीन सुत छाडे पै नैह न तजे ॥ ,
 आकुल व्याकुल सुंदरी रति नहिं छोडै क्लेम ।
 लाज कूं चिक डारके चली जो दुज के प्रेम ॥

चढ़ि सतषड बजाई बीन । तजो नेम सुंदरी कुलीन ।
 पतिबरता परकीया, चली । कुलटा ओरते कपनी बली ॥
 भूषन उलटेउ उलटेउ चीर । उलटे कंचुकि थूल सरीर ।
 कंठहार पावन सू बंधे । नूपुर माल कंठ सू संधे ॥
 येक नयन कूं अंजन दियो । बिरले येक नेन मधु पियो ।
 जे असनान समै सुंदरि । ते चलि नगन रूप गुन भरी ।
 तिनो का करी पति नाज अनूप । पय पावत सूतत जो सरूप ।
 साह गयो थो येक विदेस । आथो ग्रह तिह नाव महेस ॥
 भूये पर भोजन परसन लागी । भूली थार बिप्र गुन आगी ।
 ज्यों मृग मोहि रह्यो सुनि राग । त्यो मोही पिया रूप सोभाग ॥
 डगर चली मृग सालक माल । चे आनसे गुन नैन बिसाल ।
 येक अलंग न दई सो बाम । येक न दुज परसे अभिराम ॥
 येक रही कर संपुट जोरे । येक न मान कियो मुख मोरे ।
 येक जो बैठी चरन पसार । येक दई हित आपन पगार ॥
 अधर पानि येक बनिता दियो । लोचन चषे छपम पियो ।
 च्यार जाम निसि जाग ज मीहाये । कोट कूदमा धायै जाये ॥
 उनरै पैर कारी बिन डोरे । पति सू आनि मिली भये भोरे ।
 खुनमारी सब पूरी जने हे । कबहुं न दुजकी बातें कहै ॥
 काहां लों रहैं आय सब बाजे । नूप सू कहन लगे तजि लाजे ।
 अंतर कथा कही अभिराम । बन क्रीडा कूं चली बर बाम ॥

रुद्रमती बनकेलि कूं चली साजि सुषपाल ।
 संग सहेली पांच दस मृगनैनी जु बिसाल ॥
 दुज माधव भरि गोद फूल दियै चौसर किये ।
 बढ्यो त्रिया कूं मोह मदन बान लागौ हिये ॥

(१२२)

(रानि उवाच)

करि माधव अंगीकृत मोहि । तन मन प्रान समरपूं तोहि ।
देखत तेरो रूप अनूप । मो मन थे भूलै निज भूप ॥

(माधव वाक्य)

माधव कहै माता सुनि बात । वेष पुत्र सम मेरो गात ।
पस्चिम सूर उदै जब करिहै । तउ माता मेरो ब्रत टरिहै ॥
गुर पतनी अरु नृप की नार । मित्र गुनी करो करो विचार ।
सासू जननी पांचो मात । ताते करो धरम की बात ॥
मेरी धरम न अँसो होय । माता मोहि हंसे सब कोय ।

(रानी उवाच)

सुन रे विप्र मूढ़ अकुलीन । पसू पषान ग्यान रस हीन ॥
कूर कृपन कायर मत चोर । नेक न भीजो प्रेम कठोर ।
मुर की नार चंदा ले गयो । ताको कबहुं न अपजस भयो ॥
सुग्रीव की तारा सुंदरी । जो बालि निग्रहनी करी ।
तिन कछु ये नहि जान्यो दोष । राम बाण से पायो मोख ॥
तोक्क कहा लगे अपराध । करै अंगीकृत मेरो साध ।

(माधव वाक्य)

जननी ते पय प्यायौ मोहि । और बात क्यूं देखूं तोहि ॥
मेरो कारज क्यों कर होई । माता मोहि हंसे सब कोई ।
काज अकाज कीन्हे करतार । तेहि न चीन्ही मूढ़ गवार ॥
ते मुक तकि तकि मुगध न लहै । नर्क कठोर यह माधव कहै ।
अंगीकृत माधव नहिं कियो । राणी मनुं हलाहल पियो ॥
रिस करि चली नृपति सुंदरी । मानूं रूई अगन मो परी ।
बेगि चेन रति नीच गवार । तू कहा जाने केलि बिहार ॥
जो कबहुं फिर देखूं नैना । सुलि देवाउं ता दिन अँना ।
माधवनल ब्रत राख्यो स्याम । गई रुद्रमति अपने घाम ॥
नगर लोक सब लिये बुलाय । सकल पुकारो नृप सुं जाय ।
राखी मतो कियो अति गूढ़ । की हम राषो की दुज मूढ़ ॥

जाय पुकाख्यो नृप सुं लोग । बनिता पियासूं रच्यो संजोग ।
 रात दिवस माधव पै रहै । लाज छाड़ि सब पुरजन कहै ॥
 तेरो धरम राज नृप बली । ताथे कीरत बसुधा चखी ।
 माधवनल दुष दीन्हि देव । करत न बने तास को भेव ॥

(राजा उवाच)

राजा कहे सुनु मेरे मीता । अब जनि करो ग्रह की चिंता ।
 देसहि थे दुज देउँ निकाल । क्यों मोही सठ पुरि की नार ॥
 पठये लोक सकल समझाय । माजवनल कूं लियो बुलाय ।
 कुसम भेंट नृप आगे धरी । केह येक फूल निझावर करी ॥
 सनमुख ठाढ़ो भयो कुंवार । भूलि गयो भूपति के बहार ।
 गदगद कंठ सजल भये नैना । ताके कहत बने नहिं वैना ॥

(राजा उवाच)

माधवनल निज औगुन तोही । पुरिजन आनि सुनायो मोही ।
 कैयक दिवस पुरी छाड़ो देस । जावो हो दुज कह्यो नरेस ॥
 विन येक मीत बजावो बीन । ताथे मोहि होय उर चैन ।
 येतना कहि धरी बीन रसाल । सुनत राग मोह्यो महिपाल ॥

नरपति तीय सुनी सबे षग मृग नगहि समान ।

रचे राग मो गुन लिये सो कोउ न पावे जान ॥

सुषि जन कूं सुष बढ्यो अनेक । दुषित बिनोद कियो छिन येक ।
 स्रवन सुनत हिरदै सुष भयो । मनमथ दुजहि रंग अति ठयो ॥
 कामनि कूं अति बल बे राग । अलि कूं बल भयो पंच बे राग ।
 मोहि रह्यो नृप गोविंदचंद । मोहनि राग कह्यो मकरंद ॥

कहे राजा माधव सुनो कौन राग गुन तोहि ।

के से बिध मोहे सबे कहि सुनावो मोहि ॥

करो राय सुर नर मुनि मोहूं । कहो पताल से सेष बुलाऊं ।
 केहो तो काम रस बिरह बुलाऊं । बाल त्रिया कूं काम जगाऊ ॥
 काम बिरह रस कहो मेरे मीता । सुनत राग भागे मेरी चिंता ।
 तेही राग मोही बर बाम । वोहि मोहि सुनावो अभिराम ॥

कमल पत्र मंदिर में बिछाय । बाल त्रिया कूं लिषि बुलस्य ।
कह्यो राग कछु कहत न आवै । विरह रास काम रस गावै ॥

बिरह बिथा तन मो भई कहत न आवे सोय ।

पोड पोड पुकारहि भरत काम रस होय ॥

करे काम कछु कहत न आवे । जब राये मन धोषो पाये ।
गुन अथाह बिप्र बाली बैस । जात्रो हो दुज कह्यो नरेस ॥
नाय सीस माधवनल चल्हो । राये नूपति राग उल सल्यो ।
प्रजा सकल कीन्ही अति द्रोह । ताते दुज सूं भयो बिछोह ॥

विप्र सुनायो राग भयो नूपति के दाग उर ।

तब कहिये बडे भाग जब प्रीतम फिर के मिले ॥

गुनी दरद गुन जानहीं मूढ़ न जाने कौय ।

मिलि बिछरे की चोट येह दरस सजीवन होय ॥

तीरथ सकल किये दुजराज । कीनो सब पुरिषन को काज ।
फिरत फिरत पायो बिसराम । दक्षिण देस त्रिया अभिराम ॥
बिद्या नगर नगर कामिणी । तेहि पुर नार चित्रणी घणी ।
मोहि रहीं दुज माधो देषि । लुब्धावहि जित्रब फल लेष ॥
घेरि रही ललिता मकरंद । ज्यो चकोर चाहे मधुचंद ।
दिवस सात दिन रह्यो बरबीर । बिध्या नगर मांरु धरि धीर ॥
औगुन प्रगट होत तहां जान्यो । चल्हो बिप्र मन संका आन्यो ।
कामापुरी नगर एक नाम । कामसैन नृप मूरति काम ॥
साके पातर काम कुंदला । छबि की सीमा इंदु की कला ।
प्रेम भाव ते नृप की आय । कल न पढ़ै छिन देषे ताहि ॥
द्राक्ष बरस समै सुंदरी । अबला अलोल काम रस भरी ।
पढ़ै छंद सब संगीत कला । पायो नाम काम कुंदला ॥
बाजा सकल बजावै आप । तार्थे गुन न सहे प्रताप ॥
कंस बसि तंत अरु चरम । च्यार सबद ये च्यार सुकरम ॥
आदि निषाद रिषभ गंधार । षडज सूषि संगीत बिचार ।
जीव पांच शुभ लिखे तास । गावे कि फिर उमरो गगत् ॥
आलस नतिन येक मूर्खना । ग्राम च्यार जाना कबि जना ॥
कला बहतर जाने सोय । सो नटनी नट नायक होय ॥

काम कुंदला ये सब पदी । तापें कला अंन अति बड़ी ।
 तिहीं दुआदस मौज मृदंग । आवे छबिन रबाब सुरंग ॥
 बटै न ताल जाइ नहिं मान । उघटै सबद करै बहु ज्ञान ।
 पुष्प अंजलि भरि सुंदरि लई । जामे भाग डार नति कई ॥
 जितहि दृष्टि तितही सत क भाये । जितही रास त चित्त समाये ।
 जितही चित तित ज्ञान प्रकास । जितही ज्ञान तित नृप पे बास ॥
 जितेत बड़े दुरमई अनूप । उरप तिरप रीफे गुन भूप ।
 चौसठ कला अध चक्रावलि । लागे दांत जाने गति भलि ॥

सुंदरि कला निधान मूरख नूपति जान नहिं ।

देवन रीफे के दान ताथे रुचि घटि जाय मनि ॥

कामसेन नृप काम किम जानहिं इंद्र समान ।

काम कुंदला उर बसी रंभा रूप निधान ॥

जीती सभा काम कुंदला । ता समैय गयो माधवनला ।

ठाढ़ो भयो पौर मै जाय । बिप्र बोलिया लियो बुलाय ॥

अरे प्रतिहार कहे दुज देव । नृप सूं जाय कहो यह भेव ।

सकल सभा नृप मूरख आद । सुंदरि तनी कला सब बाद ॥

ये तो सुनत दरबारी गयो । मध्य अषाढा ठाढ़ो भयो ।

सुंदर कुंवर नवल मकरंद । कंदप आहि किधूं आहि चद ॥

सकल सभा सूं मूरख कछो । वाको भेद कौन नृप लियो ।

ठाढ़ो हतो सातई पौर । मोसूं कछो जाय कछि दौर ॥

रे प्रतिहार गंवार सुनि यह कहु दुज से जाम ।

मुगध सभा क्यूं जान भनि यूं पूछत नृपराय ॥

उलटि गयो प्रतिहार जिहां ठाढ़ो थो सुबुध गुनि ।

कहि दुज एह विचार मुगध सभा क्योंकर भनी ॥

कहे विप्र सुनि रे प्रतिहार । मूरख तनो जो बुधि विचार ।

द्वादस बजे मृदंग की धुनि । कहहिं विचित्र आहे सबगुनि ॥

पूरब मुख भृदंग प्रवीन । दक्षिण दिसा कर अंगूठो हीन ।

ताथे कला जाय घटि येक । पंडित बिना कूष करे बिबेक ॥

कहिबे नृपति सूं जाये घीर । देवबहि सूख्यो बड़ो सरीर ।

दाहवासी नृप सूं कछी जाये । बोहि भृदंगी सखलियो बुलाय ॥

देख्यो बिन अंगुठो नृपराज । अब मेरो भयो पूरन काज ॥
 बढो गुनी आयो इह ठोर । देखे कवि पंडित सब ओर ॥
 रीझो नृपती बिसमै भयौ । तुरत बुलाय विप्र कू लियौ ।
 आयौ माधवनल मकरंद । ज्यों नक्षत्र मों दुतियो चंद ॥
 उठि आदर कीन्हो नृप ईस । बेरपंच तिह नायो सीस ।
 आयो आसन दीन्हो डार । पुनि भूपति कीन्हो जुहार ॥
 पंच प्रसद रीझ नृप दियो । माधवनल आदर करि लियो ।
 कामकुंदला हरषित भई । मोहन कला केलि अति ठई ॥
 मेरे गुन को आहक आयो । बैठो दुजमनि राजा पायो ।
 अब सब कला सुफल भई मोहें । देख्यो दुज माधवनल तोहें ॥
 पूरब जे तो नृप मैं कियो । सो तो बृथा भयो रुचि लियो ।
 बिन पंडित को जानै कला । सुने विप्र दुज माधवनला ।
 गुनी देखि गुन खुले कपाट । नृत्त करन कू लागी चाट ।
 अंतरिष मंछर गति लई । उलटी भावरि सुंदरि ठई ॥
 कैयक लगे दात बहु भेद । देखत दुज कू भयो प्रसेद ।
 रोचन मांगि सखी पै लियो । बहुर त्रिया येक कौतिक कियो ॥
 धन्यो नृपति आगे आगे आन । माधव विप्र येह गत जान ।
 तिर खेळत भुइं चरनन लागे । ऊपर फिरे चक्र ज्यों जागे ॥
 चरन अंगुठो रोचन ल्याइ । त्रिया तिलक बहु कियो बनाइ ।
 नेक न कला भई कछु मंद । बढी अति कला दुतियो चंद ॥
 कलस ढँढ पर अदभुत बात । नेक न नारि सकोर्यो गात ।
 गुनी फुलि भई कामकुंदला । मुरछि गयो दुज माधवनला ॥

बाल डस्यो जु प्रान तजे जतन की जीवती ।
 गुन के डसे निदान जीवे तो फिरि नर न मर ॥
 गुनी दोठ गुन थे मिले कोठ अग नहीं हीन ।
 दुज बिन सूके सुंदरी बस करि राख्यो नैन ॥

चंद नखोरम दरस जानि । कुच के आइ अग्र बैख्यो आनि ।
 डसे भमर बिन सुमरे अनंग । बृथा होय तहां बख्यो तुरंग ॥
 सोच कियो सुंदरि मन बीच । बैठो भमर जानु रसकीच ।
 खो कलके अलि देठ उदाय । माधव हसे कला सग जीय ॥

सकल अंग को अचयो पौन । छिन यके रही त्रिया धरि मौन ।
 कुच के छिद्र हो काढ्यो तास । भमर उढ्यो फिरि भयो विलास ॥
 भिन येक नृपति बदन तन चाहि । पंच प्रसाद रीझि दिये ताहि ।
 सीस चढ़ाय लिये सुंदरी । मुख थे कीरति गुन बिस्तरी ॥
 दई न भूप कला पर दान । राषी रुचि ते बिप्र सुजान ।
 राजा कोप कियो मन बीच । बिप्र न आदे होय कोई नीच ॥
 पंच प्रसाद मुख क्यूं लियो । कारन कौन पात्री कूं दियो ।
 ब्रह्मजोनि की चिंता मोहि । नातर सुंदरी देवडं तोहि ॥

(बिप्र उवाच)

अैसे गुन पर बिप्र सुजान । षंड षंडकर डारूं प्रान ।
 तेरी झूठ न दई नरेस । कित्त दुष पाव[क?] करूं प्रवेस ॥
 रीझ पचावे सो नृप मूढ़ । रीझ दैत सो जगत अरूढ़ ।
 मृग सो दाता और न होय । डारे गुन पर प्राण बिगोय ॥
 जम कुसुवास मास नर लेइ । सींगी जोग नाद चित देइ ।
 ब्रह्मचारि कू तुचा अनूप । इह बिधि तन बाढ्यो मृगभूप ॥
 गिर उपमा सुंदरी कूं दई । रंभा कला झीन सब लई ।
 मोहें काइ दियो कला पर दान । मेरी जूठन दई सुजान ॥
 दीन्ही सैन काम कुंदला । चल्यो बिरचि हुज माधवनला ।
 सुंदरि येक संग करि दई । सो हुज कूं ले मंदिर गई ॥
 जिन येक कला देषाई भूप । लइ प्रसाद गृह गई अनूप ।
 माधव के देषत भयो चैन । रोम रोम के उमग्यो मैन ॥
 गंगा तल कर धोये पाय । दई सुंदरि सेज विछाय ।
 केसर मृगमद और सुगंध । पूजे माधवनल मकरंद ॥
 खौंग सुपारी लायची पान । बीरा करि धरी त्रिया सुजान ।
 भोल भात करि आदर कियो । पलक मांरु दुज कूं बस कियो ॥

को जाने गुन षोज ढिग मूरख मेढक बसे ।
 धन अलि धन सरोज निसरी मिल गुन कू गसे ॥
 तो गुन कह जाने नृपति जो न भली मति होय ।
 बोटे नग के पास्खी षरौ न पायो सोय ॥

भूषण सकल उतारे बाम । केसर तन उखट्यो अभिराम ॥
 न्हाय सीस थे ठाढ़ी भई । धन र्थे भानूं बिजुरी लई ॥
 बिन भूषण भूषण सी लसे । दूषण थे भूषण तन कसे ।
 षोडस कीना अंग सिंगार । चली सैन मद जेबन भार ॥
 दरपन से दमके दुजराज । देख्यो अपनो सकल समाज ।
 अम उपज्यो जान्यो सुंदरी । तब त्रिया हंसि बीरी मुषधरी ॥
 छुटे मान रहे मिलि दोय । गुन मिलाय सुभ लहे न कोय ।
 भाड़े आलिंगन चुंबन हास । पीय बस कीन्हो मैन बिलास ॥
 नष ते लागे दोउ कुच सीस । भाल चंद मानूं रबि ईस ।
 पल सम रजनी गई बिहाय । मुरत बिब दोउ उठे जमहाय ॥
 येह बिधि दिवस तीन मुष लियौ । काम कुंदला दुज सँ कब्यौ ।
 मैं तन मन धन दीन्हो तोहि । आपहु बिप्र दया करि मोहि ॥
 रझौ कइक दिन सेऊं पाव । प्राणनाथ करि सुमरुं नाव ।
 बिरह सखल उपजो मोहि अंग । जनि दुज करो प्रीत रुचि भंग ॥

माधव कहे बिरंछि जो फिरि, रचि रचना करे ।

काम, कुंदला, बीच और त्रिया सो उर न धरे ।

जागत सोवत सपन मों, देखूं सूरस येक ।

सो लोचन लोचन नही सो, लोचन बिन देख ॥

माधव कहे काम कुंदला । तो मुष हरिचंद की कला ॥
 ओझा चित्रवन रहे चिकोर । जो इन ये देखे निस मोर ॥
 रझो न जाय नृपति के संक । नृष विरोध बहु सुंदरि बंक ॥

(कामकुंदला वाक)

आवे छाज महल केहि कात्र । तासे रझो मीत दुजराज ॥
 नृप कहा करे हमारो देवे । जो राखु जो लहे न भेवे ॥
 चलयो चित्त थो निधर मीता । त्रिया कूं बाढ़ी बिरहकी चिता ॥
 दीजे उदक हमारे नाम । जनम जनम के छूटे पाव ॥
 चढ़ी सतबंध धरि के भव छोड़ा । मुष माधव माधव को मोहा ॥
 जब लागि दुज देख्यो भरि नैन । तब लागि भयो त्रिया को चैन ॥
 मुरझि परी भू धरही न प्रान । जवन कियो सहचरी सुजान ॥
 सभम काम पूछा रति बाल । उमा समझी सखि तबकाल ॥

अरु चित अम सुरपति कूं भयो । अगिब जुवाले कुं दुंछन गयो ॥
 जंद कहे मरी निजु कला । विद्युत पाव भयो महिपाल ॥
 की कोठ मुस्झी अपछरा । की रबि किरण दूख्यो धरा ॥
 की सुरपति की सुंदरि परी । की उडुगन मुस्झी सहचरी ॥
 काम कुंदला मुस्झी ये तो । अम भयो सकल लोक कूं जेबो ॥
 बिरह कुठाहर हई मानुं बेल । दूट घरी सोभा उत मेल ॥
 माधव नाम सुवा रस पियो । ताथे प्रान बिधाता दियो ॥
 पहर एक लो मुस्झी रही । जगगी पीर सबी सूं कही ।
 गयो नगर से छुटि बाम । कित दुंदुं पाउं अभिराम ॥

ठाढ़े कुंवर नरेस केतैंक सूं हित कर त्रिया ।
 बिप्र दलद्री दीन मुष ब्रत तैं ताको लियो ॥
 लघु दुतिमा को चंद जाकूं नमे नरेस सबे ।
 पूरन ससि गुन मद गुनहि उदित जग पूजरी ॥

तनक अगन बारे सब दंग । तनक सिंग्र जो हते मतंग ।
 तनक चंद कूं नमे नरेस । तनक बुद्धि जीते कई देस ॥
 तनक नगन को होत बहु मोल । धरा दीजिये तिनके तोल ॥
 तनक बिप्र सोही माधवनल । गुन द्विग लघु मति निर्मल ॥
 हम उपमा दुज कूं त्रिया दई । सुनत सखी सब चितअम भई ॥
 माधव निकरि गयी बन मांह । बैठो येक तरवर की छांह ॥
 धरी कंध पर बीन सुरंग । सुनत राग घग स्रग भये पग ॥
 घेरि रहे गज सिंग्र अनेक । ठौर बैठि मिल रहे जु येक ॥
 हस येक अगो दुह चलयो । ताहि देश माधो दुख सलयो ॥
 ते हरी कामकुंदला की चाल । अरे चोर पग राज मराल ॥
 पर दुष काटण विक्रमसेन । सुन्यो दूर से पुरी उजैख ॥
 तामूं माधव करन पुकार । चलयो अंग बाढ्यो दुषभार ॥
 जेजन सात पुरी परमान । चहुं हिसि ताल अनूप निमान ।
 सिम्रा नदी ता संग में बहिये । न्हाये चार पदारथ लहिये ॥
 महल सात खंड छजे विसाल । ताको पति विक्रम महिपाल ॥
 चहुंदिस बने बगीच बाग । ते मधि पत्नीसु बंधपन्नासाजान ॥

जानि मन थक्यो रिपु ईस । महाकाल कूं नमायो सीस ।
 तेही सरन राखि सूखपानि । तुम हो सिद्ध दया अतिदानि ॥
 आधी रात कामकुंदला । सुमिरि विप्र सोई माधवनला ।
 लिषा सिखा पर दूहा दोय । ताथे दुष जाने सब कोय ॥
 लिष दूहा माधवनल गयो । तेहि ठायं प्रगट महीपति भयो ।
 लिष दूहा दोय माधवानले । काम कुंदला डर मों सले ॥

नाहिंन रघुपति नृपति नल जे दुष जाण्यो येह ।
 काम कुंदला तो बिना कियो काम तन पेह ॥
 बिरला नर गुन जानही बिरला निरधन नेह ।
 बिरला रन मों झूझही बिरला तन दुष देह ॥
 बिरलाः जानति गुणान् बिरलाः कुर्वन्ति निर्धने स्नेहं ।
 बिरलाः रणेषु धीराः परदुःखेनापि दुःखिताः बिरलाः ॥

दूहा लिष माधवनल गयो । तेहि ठाम प्रगट महीपति भयो ।
 नित प्रति विक्रमसेन नरेस । पूजे विधि सूं आनि महेस ॥
 देषे दूहा जुगल अनूप । अति दुष जानी बिसूर भूप ।
 अनं निरत बत जो निरीद । सो यो रात न आई नीद ॥
 जब लग दुष ताको नहिं कटे । तब लग उर मेरो अति फटे ।
 पठ्यो दूंदन दूत अनेक । दूंदन्यो माधव बचो नहिं धेक ॥
 गली कूचा चौहटा बजार । दूंदन थाके दूत हजार ।
 पायो विप्र न बाढी चिंता । आई बिस्वा बाहन चढ़ी तुरता ॥
 'क्यों' चिंता करो नृपराज । तो कूं दुषी 'देवाड' आज ।
 'बन' मों सोवत पायो सोय । लिथो उठाय सुदरी दोय ॥
 'मनि' मानिक हरि लीन्हा मोरे । नृप लै सूली देवाड तोरे ।
 'मुख' मो कामकुंदला जाप । दमकत उर में काम प्रताप ॥
 'आनि' नृपति पै ठाढो कियो । तिनकूं रात्र उदे बहु दियो ।
 'पूछे' राव बात कहि तोहे । कत दुष दुषी सुनावो मोहि ॥

जहां लगि महि अरु चंद रबि पवन बहे जल गंग ।
 तहां लगि जीवो भूपमलि । बिक्रमदेव अनंग ॥

(१३१)

पर दुष काटण भूप छावे तोहि किरत मझि ।

जीवन तोहि अनूप असो जीवन जे जीवे ॥

राजा कहे बिप्र सुनि बैन । तेरे अति दुष दायक नैण ।

कौन दिसा थे आयो देव । रहो तो करुं तुहारी सेव ॥

कहा की बिरह उदासी भयो । दुष में मगन भयो सुष गयो ।

मोसूं बिप्र सुनावो वैण । ताथे तो उर उपजे चैन ॥

(माधव उवाच)

कामापुरी नगरी येक नाम । कामसेन नृप मूरत काम ।

ताके पातर काम कुंदला । तिन मोहो दुज माधवनला ॥

जो वह त्रिया मिले नृप बीर । तो जिव माधव धारे धीर ।

मो जीवन नृप तबही होय । काम कुंदला मिलावे सोय ॥

(राजा उवाच)

दुज कन्या मेरे पुर मांझ । करुं ब्याह दस होय न सांझ ।

रूप नहेली षरी नवोडा । बड़ी चातुरी चातुर प्रौढा ॥

(माधव उवाच)

जेहि के हरि पायो मृग मांस । सो अब सिंह चरे क्यों घास ।

जेहि अस्त्रि सेयो पंच बेराग । सो क्यों बसे आक बन बाग ॥

जेहि चकोर अचयो रस चंद । सो क्यों अन रस-पिबे जो मंद ।

जेहि चात्रिक स्वात बल पियो । सो चात्रिक नहिं अन रस जियो ॥

जेहि चाण्यो अमृत मधुराये । ताहि ओर रस मन न सुहाये ।

काम कुंदला मिले नरेस । नहिं तो येह सीस चढ़े महेस ॥

उहिम किये सकल सिध होय । उहिम बिना न जीवे कोय ।

उहिम थे पाई येति ध्यान । उहिम सो गुर ओर मगान ॥

तेज बिना न बिराजे भूप । बुद्धि बिना दीजे दीन बिरूप ।

रूप बिना सुंदरी बिराट । बानी बिना कबेसर भाट ॥

दुज हठ देषि सजो दल भूप । राना राव जो सुभट अनूप ।

चहुँदिस फिरी देस महं आन । करु बीर सब पेजे प्रमान ॥

जेहि केहरी गजराज के हने कुंभ निज माथ ।

ते परकाज सुरमा टेक बज्र की माथ ॥

अपेनो सुभ दग देषई अपजस लुनै न कान ।
 माथे धन बिलसई सो नर देव समान ॥
 साजी बिक्रम सैन समूहे । फूले सुभट बदन पर रूहे ।
 कछह देत नर रहे न भौत । बिक्रम हुकम मेंट सौ कौन ॥

(साटक)

गुजत भौर कमल रुचिर मति भडाणे मेहा रूप अनूप ।
 भूपति धन धुकार धूरी रह सोहे केजम पीठ ॥
 विषम ढाल झूले घंटा धुधर माल मंडी तवर ।
 हाथी सब सज लाये जडित नरा सब सिस पर ॥

(घोड़ा बरनन)

काले काल कुरंगा रंग रुचिर धाये तुरंगातुरा ।
 छति छत लगाये ते चपल लुवे घूरा भूधरा ॥
 सजे धाधर जिनके जमावर गौड पूछा आछे बरा ।
 कंडानगसूर पेसल पगनि देषि मोडेपठा सजी सेन अनूप ।
 गज हय सुभटबर भूतल बिक्रम भूप असौ कोह न भूमपर ॥

(दोहरा)

बरनूं रजा रखपूत की रस लिये अंग अंग ।
 दुरजन दल देवल गिरे दीपक माहे फलंग ॥

चहुवान बैस गोतन पंवार । गोहलौत खींची संघार जूमार ।
 कछुवहे धीर तुवर प्रचंड । आब गढे गौड़ गोयल अषंड ॥
 रण रीकत रीत राठोड महा । पती सूपवैया लड़े छत्र कि छाँहे ।
 परियार भार सेंगर सपूत । करचुलि हन हाड़ा अभूत ॥
 मरदाने भौरी मोहल सुजान । सूने राठोड आडेल अमान ।
 लहुबंस अस जादव अभग । गिरनारै कैईल सूर किसू घंट ॥
 जे धारे जोधा दीसे अक्रोध । जल बढे जुद्ध बंछ बिरोध ।
 बलिचंत संत दोले बगेल । सीसोदिया सूर बिकट चंदेल ॥
 नरनाह भीत नरभो निकुंभ । बढ गूजर ढीग रहन सूम ।
 सुरि जंझ राधन बैरि अस । बहुराने छिन्नारी पयान ॥
 किये जुंज दागी अमान । घेरे जुंहेले धर गहरवार ॥

तजि बंक संक अरु सीकरवार । येती जात और को गनै बीर ॥
भई भीर आनि दरबार भूप । अस्व चढ्यो बल विक्रम अनूप ।

तिनके सिर तनु काजरे सेह न उतरे आन ।

मर जात रज लाज के बलत न रहे निसान ॥

सजे सहस दस बीर जे बिजई बहुजंग कै ।

बंधे सीलहे सरीर जातक पंच घुरी अंग कै ॥

सुदिन देषि नृप कियो पयान । उड़ी हेज रज छाियो आन ।
धरा धसि गई आडे सेन । जै जै अमर उच्चरे वैन ॥
चंचल भए [सकल ?] दिकपाल । दो गाज कि गति भई बेहाल ।
भूपति मिले और करि साज । कापर कोर कियो नृपराज ॥
जोगनि भूत भयो मन छोह । जंबुक प्रद असासे लोह ।
माधवनल कूं लीन्हो संग । चल्यो कूंच करि नृपति अभग ॥
दीरघ घन से मधुर निसान । सुभट हाक को सुन नहिं कान ।
नदी नद मांझि उड़ी धूर । सायर लीयो चरन सुपूर ॥
दिन दस बीस मांझ वेही देसा । गयो कोप करि बिकट नरेसा ।
जोजन आघ कामापुरी रही । विक्रम तबे बसीठ सूं कही ॥
जावो सुमति कहियो यह बात । जो बल होय तुमारे गात ।
कै सजि सैन अंजि करि लेहु । कै त्रिया काम कुंदला देहु ॥
गयो बसीठ काम नृप सभा । तेज पुंज दिनकर सम प्रभा ।
उठि कै राव कियो सनमान । आदर कियो दिये कर पान ॥

(बसिष्ठ उवाच)

जो अपनो भलपन जानौ । कामसेन [तो ?] मो मत मानो ।
आयो कामकुंदला हेत । विक्रम भूपति सेन समेत ॥
दोजे काम कुंदला नार । विक्रम सूं करिके मनुहार ।
करि मनुहार कुंदला देहु । जैसै तुम सूं जुरे सनेहु ॥

(राजा उवाच)

अरे बसीठ कुरस मति चले । देत न बने काम कुंदला ।
हम तुम मिले जडग की अनी । लै आवो सेना आपनी ॥
बस्यो बसीठ सत वेही ठौर । विक्रम मतो प्रकास्यो और ।
आंट भेष करि आपन रूप । आपुन छलि करि गयो तहां भूप ॥

मैला बसतर पेहर लिया अंगा । सेवक कोउ न ताके संग ।
 प्रीत परिष्या लेन नरेस । कामापुरी मों कियो प्रवेस ॥
 देखि फियो चहुं दिस पुरी । देखे गज भूम बहु तुरी ।
 आयो काम कुंदला प्रेह । बैठी दुज को लिये सनेह ॥
 विक्रम बोलि लियो दरबान । तासूं कह्यो सो भेद सुजान ।
 दाता जानि काम कुंदला । हूँ आयो वाही मति बला ॥
 जाये कह्यो त्रिया सूं ततकाल । उचित देवो धन मौज विसाल ।
 सब दरबारी त्रिया सूं कह्यो । श्रवण सुनत कषु सुध न रह्यो ॥
 देख्यो पर दुष काटण भूप । चल न चातुरी चाल अनूप ।
 ऊंचो कर करि दई असीस । तू नर नाथ अवंती ईस ॥
 नाहिंन भांट के लछन येह । दुषिजन सो नित नयो सनेह ।
 मो कारन आयो नृपराज । तुमकूं आपने बिरद कि लाज ॥
 ढोंगा हाथ और झारी कसी । भांट भेष की सोभा लसी ।
 बिहसि भूप तब ठाढ़ो भयो । कामकुंदला तेहि लषि लयो ॥

दिव्य दृष्टि वहि वाम की लग्यो भूप बिन काज ।

छिपे न जतन अनेक सूं धनि ठाके उदराज ॥

(राजा उवाच)

मोहि तोहि कितकी पहिचान । हूं जाचक दै सुंदरि दान ।

(कामकुंदला उवाच)

जाचक कैइक किते धनपाल । तू बिक्रम नृप दीनदयाल ॥

(राजा उवाच)

नैन सजल सुष माधव जाप । को सुंदरी तिह सहे प्रताप ।
 दीननि तुच्छ तु अबला बाल । बिधु बदनी मृगनैनी रसाल ॥
 माधव कौन कहा वे वाम । जाको जपे निरंतर नाम ।
 रही मलिन होय सोभा डार । येहि समय सुष कीजे नार ॥

(कामकुंदला उवाच)

आयो दुज अभिराम माधवचल निजु नाम तिह ।

ताबिन व्यापै काम जुग सम जा मनि नाम बस ॥

दुष थो निसूं धरि गयो सुख लीन्हो हरि मोहि ।

फिरि मिलाप बिघन रच्यो ताथे पठायो तोहि ॥

(राजा उवाच)

माधवनल येक बिप्र सुजान । रहतो महाकाल के थान ।
 रूप अनूप गुन सील समेत । मख्यो बिप्र सोइ त्रिय के हेत ॥
 येह सुनि मरी काम कुदला । सुमख्यो बिप्र सोइ माधवनला ।
 उठि भागो भूपति ततकाल । आयो जिह ठाय बिप्र रसाल ॥
 सुत माधव हूँ जिय पे गयो । तेरो नाम लेत सुष भयो ।
 लई परिध्या लघु मति करी । मरयो तोहि सुनि त्रिया सो मरी ॥
 बार तीन सुमख्यो थूं बाम । मख्यो बिप्र पल मों अभिराम ।
 राजा षडग कठ पर धार्यो । सुंदरी मरी बिप्र मोहि मार्यो ॥
 संकट जानि बिप्र बेताल । नृप को हाथ ग्रहो ततकाल ।
 काहे मरै महीपति मूढ़ । कर संकट अपनो सब गूढ़ ॥

(राजा उवाच)

जो जीवे दुज माधवनला । अर त्रिया जीवे काम कुंदला ।
 तब मेरो जीवन फल मीता । तो बिन कौन निवारय चिंता ॥
 गयो पताल बीर फुनि धाम । लायो अमृत दुज के काम ।
 माधव के मुख दीन्हो सोय । जैजै कार बिस्व में होय ॥
 उचख्यो नाम काम कुंदला । जियो बिप्र सोइ माधवनला ।
 दोई गये त्रिया के पास । मुष मों अमृत मेल्यो तास ॥
 माधवनल करि उठी सचेत । भुये न छाड्यो दुज सूं हेत ।
 प्रात भई बसीठ तहां आन । कही भूप सूं कथा बिध्यान ॥
 समझे बुद्धि बिना नहिं सोय । भय बिना प्रीत न कबहूँ होय ।
 सुनि बसीठ के बचन उदास । जनु घन गाज्यो सावण मास ॥

कोप कियो महिपाल बिक्रम बिक्रम पंथ समे ।

मूछ मरोरत बाल डसत काल होय तास तन ॥

उत थे काम सेन दल मारा । इत थे भीड्यो नरेस उदारा ।
 खेत जुरे दोउ बाजी लागे । दोउ दिस बाजे मारु रागे ॥
 जेठे बरिक् छुटे लोहे । मार मार बढ्यो अति छोहे ।
 कूं तादाद कित्ति तरवारे । तीर तुक्क छुटे घन सारे ॥
 छूटी जबड जंग हथ नाल । पल मो भयो काम नृप चाल ।
 पूरी बिग्रहि बिक्रम भूप । लीन्हो सब दल लूटि अनूप ॥

मंत्री कहे सुनो नृषराज । सुंदरि दिये रहे पतलाज ।
 कठिन परे नृप सरबस देई । सबल भये फिर ताकूं लेई ॥
 नटनी लग बिग्रह कीजिये । कौन मतो जो दल छीजिये ।
 मंत्री बचन सुनत महिपाल । बुलाय लिनी सुंदरि ततकाल ॥
 गज अनेक भर मोतिन लाल । स्यानी बिधसूं भूप रसाल ।
 मिले आनि बिक्रम सूं घेत । काम सेहेत दल मार समेत ॥
 मिले परसपर बाढ्यो प्रेम । दोऊ नृपति न छाढ्यो नेम ।
 काम कुंदला सौंपी आनि । माधव रसिक बिग्र के प्रान ॥
 दोऊ सुरछ परे धरा माहिं । उढ्यो बिग्र गहि सुंदरि बांह ।
 काम कुंदला कहे सुबस । तेरे गुन कित भूलूं हंस ॥
 अैसी प्रीत निबाहे ओर । तू दुजराज गुनी सिर मोर ।
 माधव कहे प्रीत कि येता । जो जाने कर जाने प्रीता ॥
 मुकी प्रीत बरी सुंदरी । पीछे सोच जिव सुरत न धरी ।
 अैसी प्रीत निबाहे सोय । ते कुल मो नर बिरला होय ॥
 बिक्रम प्रीत दोऊ की देषि । अपनी करनी सुफल करि लेषि ।
 काम सेन नृष कीन्हो सेवा । मोहि सनाथ कियो नर देवा ॥
 मेरे गृह चलो नर नाथ । नृपति दीन होय जोड़े हाथ ।
 काम सेन कहि बिक्रम सेन । दुज हित छाड़ी पुरी उजेण ॥
 मिल्लाई तास काम कुंदला । तो समान नृप कोइ न वला ।
 माधव काम कुंदला नार । मोहि देवो मांगूं मनुहार ॥
 उगि रह्यो जस तेरो चंद । भेढ्यो दुज सुंदरि को दद ।
 सोंयो काम सेन के हाथ । गज चढ़ाय बिक्रम नरनाथ ॥
 तीन दिवस रहि बिक्रम भूष । जल्यो आपन गृह आय अनूप ।
 जाके हेत येतो श्रम कियो । सो दुज मांग यक मे लियो ॥
 चल्यो कूच करि अति उदार । जाके जस को अंत न पार ।
 अैसी प्रीत करे नर कोइ । ताको सुजस चहूं जुग होइ ॥
 प्रीत रीत जो कीजिये तन मन अरपे देह ।
 प्रान गए भूले नहीं अतर वोही सनेह ॥

च० १ :

[३८ अ]

राजा योगी मित्र न मीता । नारि वेश्या धन की चिंता ।
 संप सिंघ कीआ बारी । जेब माल तुम समकि गमारी ॥

(१३५)

मधु कहे सुनो जेत बिप्र सर्प जैसी भई ।

सत्य बचन सुणीजै यह बचन सुन जाणो सही ॥

जेवै जेत मधुकर सुणीजै । सर्प बिप्र की मोहि कहीजे ।

यह कथा तुम मोहि सुनावो । वाहूँ चरण वैर जन लावौ ॥

(मधु वाक्य)

सुनो तेत मोहि सुनाऊं । जो बूझे तो तनक लषाऊं ।

बिप्र एक तीरथ कूँ चाल्यौ । दया धर्म नित चितमो पाल्यौ ॥

चल्यो जाय सु बन षंड माहिं । अति उद्यान कमारि बहू छांदि ।

बनचर बाघ रोज अति तिहांइ । बिप्र जात मन चिंता आइ ॥

बिप्र सोच मन मां करै आरन विषम उकार ।

सब पछी भागे फिरे याकौ कौन बिचार ॥

बिप्र सोच मन माहिं बिचारी । चिहूँ दिसा बन षंड निहारी ।

बिप्र देष आगे दौ लागी । या पंछी कारन बन पंछी भागी ॥

दौ लागी पंछी झुले बहुतक जीव अपार ।

ब्राह्मण जीव चिंता करे जीवहि दया बिचारि ॥

चिहूँ तरफ जब लागी आग । बिप्रचलै बन षंड सौं भाग ।

आगे सर्प बलतो बिललावै । बिप्र देषि कै बिनती लावै ॥

(सर्प वाक्य)

मोहि बिनति सुन बिप्र सुजान । जरत अगन में मोरा प्रान ।

जीव दया अब मोरी लीजै । जात प्रान अब ढीलना कीजै ॥

(बिप्र वाक्य)

बोलै सर्प अब द्विज सुन तो मो किसो सनेह ।

काल रूप नैना निरष कै तजै अपनि देह ॥

सुण ब्राह्मण पनग कहै चंद सूर देऊं साष ।

बचन बोल पाछै टरै दग जनम तोह राष ॥

अब तुम मेरो जीव उधारो । एह अवसर दुष मेट हमारो ।

मरत जीवन [जो ?] राषो कोइ । तास समान पुछ नहिं होइ ॥

मो गति भई सो तोहि सुनाऊं । सुबले बिनती मे तुझ गाऊं ।
 ब्राह्मण एक हुतो कगाल । ब्राह्मण बहु चित्त थै हाल ॥
 कर्म लाग में कुग्रह आए । ब्राह्मण एक हुतो तिण लछमी पाइ ।
 मे वाकूँ जाय सदा नितवारी । सब मे जनीया आपु हारी ॥
 दूध दही बिप्र बहु षायौ । अब तो मोहि ब्रधपन आयो ।
 अब मे सबे धर कोइ मारै । जो घर जाऊँ तो बाहिर निकारै ॥

मेरे तन की संपदा बछरी गऊ अपार ।

ब्राह्मण के धन बहु भयो सो मोहि दीन्ही निकार ॥

अब मोहि घर सुं बाहर निकारी । केहां जाय मै कलूँ पुकारी ।
 दूध दही सब दूज षवायो । मोहि मरि आरन विषायो ॥
 सर्प कहेते सत्य मे मानी । करो बिप्र तुम आपनि जानी ।
 धर्म कर्म की में ना जानूँ । में बीती सो तोहि बषानूँ ॥
 में तुम सेती सर्प सुनार्यो । जो तुम कहो सोइ मन भायो ॥
 एहि बिधि पूँछी देषि सब लोह । भलपन करत बुरी हम हीई ॥

(सर्प वाक्य)

सर्प कहे पाँडे सुखो गऊ बचन धर धीर ।

डिगा टकरि छाँडदे मे डसिहूँ तोहि सरीर ॥

(बिप्र वाक्य)

बिप्र मन मां सोच बिचारी । सर्प दुष्ट मोहि निहचै मारी ।
 एह बुध मोकुं कहा आई । बाल बृद्ध में मुंड कमाई ॥

ब्रह्म गऊ दो जन भए एक कहे कोउ ओर ।

ता पीछे मोकु डसियो हूँ कहूँ दीय कर जोर ॥

पाँडे सुखो ब्रह्म हम भावै । तु अपने जिव में जिव रावै ।
 जासू वे तेरो पति पावै । पूछै बेग ढील जिन लावै ॥
 बनचर एक रहै बन माहि । पन्नग पाँडे तापै जाहि ।
 सुनो जजमान बात एक मेरी । मो शिर बिपत बिघाटा घेरी ॥

(बनचर वाक्य)

कोन बिप्र कौन सर्प है मे चीनी नहि तोहि ।

नैना खुनि रण्यां नहीं बात न मोपै होय ॥

(१४१)

मैं बनचर थोरी बुद्ध मोरी । बात न मानौ एको तेरी ।
मैं तो तोकुं झूठो जान्यौ । सर्प देव कूं सांचौ मान्यौ ॥

(ब्राह्मण वाक्य)

रोवै पांड़े शिर धुने मेरो आयो काल ।

धर्म करे जो जगत मैं ताको एह हवाल ॥

ब्राह्मण चितै निहछै मरणा । भागो जाय कौन के चरणा ।

बनचर पंथी मेरी आसा । सो तो सब भइ पासमा फासा ॥

काल रूप तै सब कोउ डरहै । मो गरीब कूं झूठौ करिहै ॥

बनचर सुनी ब्राह्मण की बानी । संच झूठ मनमाहि बिछानी ॥

(बनचर वाक्य)

बिन देषो कोउ ब्रह्मना करे कौन बिधि नाय ।

जैसी बिध तुम मे भई सो मोहि नैन दिषाय ॥

(विप्र वाक्य)

आज घातही जीव की मरन्यो बन्धो निधान ।

बनचर कहै सौ कीजिये सर्प सुनो दे कान ॥

(सर्प वाक्य)

जैयै सर्प सुनो द्विज बानी । बनचर कहे सोही मन जानी ।

करो प्याल बार जनि लावौ । बनचर कौ लख दिष्ट देषावौ ॥

काठ लाय बन षंड कूं चिहूं दिस दियो ललास ।

लामें मेल्यौ सर्प कूं बनचर देख्यौ आय ॥

(बनचर वाक्य)

सुन ब्राह्मन बनचर कहे देख्यौ नैन न भाय ।

जे जेह बोवे ब्रह्म कूं सो तेसो फल माय ॥

सर्प जस्यौ दुरमत भस्यौ विप्र के उगरे प्राण ।

अंत काल जिय धर्म की सुनो सबद दे कान ॥

(मधु वाक्य)

मधु जंघे सुनो द्विज बारी । राज काज की गत है न्यारी ।

इन सों प्रीत नहीं थिर होइ । बूझ्यौ जाय कहे जो कोइ ॥

राजा जोगी अग्नि जल वेश्या संग भुवंग ।
इन सौं प्रीत न कीजिये डरता रहिये अंग ॥
इसके अनंतर सपादित छंद ३८७ की पुनरावृत्ति है ।

[३८७ आ]

चं० १ :

सुन जेत मधुकर यूँ कहई । सो गत तेरी निहचै होई ।
अब तेलन जो भई मुगलानी । तो कहा अलसीके भाइ भुलानी ।
सुन मधुकर यूँ जेत कहई । तेलन मुगलानी कैसी भई ।
येह भेद मोहि के कहि सुनावो । मेरे मन को संदेह मिटावो ॥

(मधु वाक्य)

आप त्रिया संतान न कोई । तेलन दूति देश के आई ।
मिरजा कूँ सुध जाय सुनाई । मिरजा बात तुरत मन भाई ॥

(दूती वाक्य)

तेलन की बषान बहुत का करही । बहुर येक इहां सुंदरि रहई ।
तुमारे घर महि जोरु नाहीं । तुम मुगलानि करो यही ठाई ॥

(मुगल वाक्य)

तेलन कूँ घर मेरे ल्याउ । बहुत रूपैया तुमही पाउ ।
येहि बात तुम दिलमें धरो । अब तेलन की मुगलानी करो ॥
दूती बात येह सुन पाई । तेलन मुगलानी करन कूँ आई ।
तेलन कूँ बहुत समझाई । मुगल के घर तुम वेग ली जाई ॥

(तेलन वाक्य)

सुन सखी औसी बात जनि करे । पुरुष सुम लो जीव थे मरे ।
पुरुष सँ जो प्रीत घनेरी । मुगल मरो तो येही बेरी ॥
अब के औसी बात सुनूंगी । हूँ तो जाये पुरुष सँ कहूंगी ।
पुरुष सुने लो तोहि मोहि मारे । मुगल कूँ बिपता बहुत कपारे ॥

(दूती वाक्य)

सखी चली मुगल पे आई । तेलन की सब बात सुनाई ।
मुगल के लोली बोली बानी । तुमारी सुरत देश लोभानी ॥

(मुगल वाक्य)

सुनत मुगल जो बात कहाई । चलि कुटनी वाके घर जाई ।
चल मुगल तेलन घर आए । तेलन आदर भाव बैठाये ॥

(तेलन वाक्य)

सुनो मुगल हूं कहों सो चित दीजे । मोकूं घर सो निहचै लीजै ।
येह बात को बिलम न कीजै । तेली मारता पाप न गनीजै ॥
धनी धन्यारी दोऊ राजी । कहा करैगो मुल्ला काजी ।
तेरे मन मो जो असि धरे । तेली कूटण मारत मरे ॥
मुगल सुनत बेगि घर आयो । मुगलन येक उपाव उठायो ।
मुगलन सब चाकर बुलवायो । सीष दई चहुं ओर पठायो ॥
सुन वे चाकर तूफान उठावो । बहुत रुपैया दंड भरावो ।
चाकरन सब मौन जो लीन्हा । तेली सिर तूफान जो दीन्हा ॥
बैनिया के घर अलसि लेन कूं गयो । चाकरन तूफान जो दियो ।
अब तेली बनिया जो घर नाई । साह कुं तम चाकरी जाई ॥
साह नन दस वीसेक दीन्हा । तेली कूं बांध कर लीन्हा ।
तेली कूं बांध मुगल घर लाये । मुगलन कोरडा फुमाये ॥
द्वादस कोरडा तबही पड़ही । पड़त कोरडा तबही मरही ।
मूये की सुध तेलन पाई । कर सजि रोम मुगल घर आई ॥
तेलन तो, तब भई मुगलानि । तेली कियो भूत की ठानि ।
अति रसभोग मुगल सू कियो । करत की गत को उनू लियो ॥

तेलन मुगल बागमो चले बाट मो बोयो खेत ।

मुगल तेलन वोहि मारग आये देषो जग की देत ॥

मुगल मुगलानी चलि करि जाय । अलसी खेत बा बाट मो आई ।
देषि तेलन मुगल सूं कह्यो । देषो मिरजा पेत काये को बोयो ॥

(मुगल वाक्य)

मैं क्या जानू खेति न जेति । तुम जानो तुमारे करम को पेती ।
तुम जानो तुमारी बात । हम कहा जाने साह की जात ॥

(प्रेमचंद भूत वाक्य)

अब तू तेलन भई मुगलानी । तूतो अलसी के साह मुलानी ।
जिन साहने के हाइ निर्माये । तिनकूं कहत हो साह काये के भये ॥

तेलन सुनत चित मों चौंकि रही । बेत मोको बोल्हो रे दर्ई ।
 सुनत बात मनयो डरपानी । भूली देह होय गइ पानी ॥
 मुगलन देहि ता ऊपर देई । हो साहब - कौन गत भई ।
 मुगल मुगलानी मुए दोई । गाढन कूं कोउ उहां जो होई ॥
 देबि भूत ले गयो उठाई । कडब के ओगा माहिं धराई ।
 घर ओगा माहे जो कीना । लेकर पावक फूक जो दीना ॥
 जे पुरुष त्रिया भेद न जाने । ते नर मूरष वृषभ समाने ।
 त्रिया बिसवास करे संसारे । ते नर मूरष निहचै हारे ॥

दंपति बिस्वासेन कर्त्तव्यं जे हार से पुरुषा ।

ते करनं ब्राचा ते जीव जुगे जुगे ॥

जे नर त्रिया बिसवास जो करही । ते नर निहचै हास कर मरही ।
 येह बचन सत्त करि जानो । त्रिया बचन कोउ मत्त मानो ॥
 सुनो जेत मधु कहे सो सांची । तेलन मुगल की झैसी बान्धि ।
 सो गल तेरी निहचै जाबे । येह बचन सत्त करि माने ॥
 राजा मित्र सुन्यो नहिं कोई । जेतमाल सषी मधु जोई ।
 जैसी लता करेली करही । तौर तूं बहुल बकाइन चरही ॥

[४०३ अ]

च० १ :

कवित्त- गर्यंद हंस चढ़ि चलेउ गर्यंद पर सिंघ बिराजे ।
 ता सिंघन पर उदधि उदधि पर गिरवर छाजे ।
 गिरवर पर इक कमल कमल पर कोमल कोले ।
 कोयल पर इक कीर कीर पर मृग येक कोले ।
 जिन सृजन सखी में रङ्गो सो सेख नाम सिंघ प्रहरे ।
 कवि येन कहे अचरज अस्यो हंस भर इतनी छरे ॥

[४०४ अ]

दि० १ :

जानै परै न रोस रस चष सूखे सुष मौन ।

निस दिन ग्रैठे ही रहै थौहैं थौहैं कौन ॥

जोरी जुरै है चंदमुखी स्याम रेष मनो अहि सुत सुधा मन अब जोरी हैं ।
 किन्हीं कोसलद्वार मधुर मधुर बानी प्रीति किन्हीं कमल तन कुटिल कोरी हैं ।

(१४५)

चषयो चाप तरुनी के बान मैन संग संग्राम को मन ठये मारन को मोरी हैं ।
रसिक बिलोको दग मायल हूँ रह्यो मन घायल भयो है चित्त चोरी है ॥

भौंह भांत की पांत रचि जोरी जात जमात ।

नैन कमल मधु मन रुकै मोह मान [इ ?] क रात ॥

[४०७ अ]

तृ० १ :

अब कसों अवन वन्यो छबि औंसे । मानु लघु सीप स्वात को तेसो ।
तामे करन फूल छबि पायै । कुंजर करन रबिकर पाये ॥

[४०८ अ]

द्वि० १ :

ठोढी चिबुक की दुति कहौं धर धरि धनुष सरोष ।
बूझी गयो सर भीतरे रही बाहरी फोक ॥

[४१० अ]

द्वि० १ :

कंचुकि लाल सुढार अति रही कुचन लपटाय ।
बैर सभार्यो संभु सो दई काम दलाय ॥

[४१८ अ]

द्वि० १ :

पग जावक बिछुआ अति सोहे । अंगुरी चुटकी मन मोहे ।
नखन नेक सोभा कहूँ कैसी । तन सुढार कीन्ही छबि तैसी ॥

[४१६ अ]

च० १ :

सुंदर रूप सारि सब केतनिक कहूँ बषान ।
उपमा दीजे कौन की बिधना करी न आन ॥
सुर नर नाग न अपछरा गंधर्व तिया न कोय ।
जसि बिद्याधर कुंवरी औंसी रूप न होय ॥

करि सिंगार सधि साथे लई । मधु सनमुष होय बंधी खरी ।
कोउ कर जोरि कहत कुंवरी । मन क्रम बचन तासु चित धरी ॥

म० वार्ता १० (११००-६३)

(१४६)

[४१८ अ]

प्र० १ :

गहणो ओर सरूप सब सुंदरि सुंदर लगै ।
वह रमणी कौ रूप गहणै कौ गहणो भयो ॥
त्रिया भूषन सजै तन सो मन कूं । सो गति उलटि भई लोभन कुं ।
अंग उपाइ सोलह भिणगारा । पुनि सरसे नव अभरण बारा ॥

[४२० अ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

मधु भूले छबि निरधि के उत्तर येक न होय ।
जैत बचन हम उच्चरे चित दे सुनियो सोय ॥

[४२२ अ]

प्र० ४, तृ० १, च० १ :

धूप चंदन भांगे ही मिलै अरु चोली को पान ।
अँ दोड भांगा ना मिलै इक मोती इक मान ॥
मोती झूठो पोवबा मन भांगा इक बोल ।
अँ दोड बाँध्या यूँ रहैं बहुर न चढ़ियो मौल ॥

[४२२ अ]

तृ० १, च० १ :

भांगा पाणप जोडिण कर कंकन नेउर नाउ ।
मुगताहल गोह दंत को न लहै देखो प्रेमें ॥

[४२४ अ]

तृ० १, च० १ :

प्रेम पलट न नेह जनि कोई जाने करे ।
हिरदै बिसरै तेह जे मिले मोती षंड जनु ॥

[४२७ अ]

तृ० १, च० १ :

जीवत सत्त न छड़िये नारि बिरानी पेषि ।
दूत बचन दूती कह्यो पण सत मेना को देषि ॥

(१४७)

(मालती वाक्य)

मालति मनहिं विचार मधु कारन बानी कही ।
सांची बात सुनाये सो मैना सत कैसी भई ॥

(मधु वाक्य)

सुनो मालती मधु कहै असी करे न कोय ।
इन जुग सत न छुडियो सो सत मैना को जोय ॥

(मालती वाक्य)

बहुर मालती बूझे असी । मेना सत कि बात कहो कैसी ।
दूष बचन दूती के कह्यो । मेना को सत कैसे रह्यो ॥

(मधु वाक्य)

सुन मालती मेना की बात । अपणो सत आपणो हाथ ।
सत मेना की तोहे सुनाऊं । थोरी सी बात बोहोत गुन गाऊं ॥

नगर बसे बरनापुरी लोरक महाजन जात ।

कहे मधु सुनो मालती सत मेना की बात ॥

नगर बसे एक बरना पुरी । लोक महाजन जात अनसुरी ।
नगर लोक बरनूं कित लइहूं । थोरी सी मेना की कहिहूं ॥
महाजन जात भला तिहां बसे । मोटा मंदिर चित यूं लखै ।
साहा लोरक महाजन नाम । मान जेसा राजा उनमान ॥
उनके ग्रह में कहूं त्रिया सोही । तास रूप बरनूं नहिं कोही ।
पृथी देषी कोड असी नाहीं । देवपुरी बोहोत असी नहीं कोई ॥
त्रिया रूप अनोपम रंभा नारी । जोबन रूप काम उनहारी ।
येक समे सब महाजन मिले । सायर रतन भरन कूं चले ॥
लोरक साह त्रिया सो कही । सब महाजन परदेस कूं चलहीं ।
हम पन कहो तो चला साथे । द्रव्व घनेरो लावां हाथे ॥
सायर से हीरा भलकंता । वे मोंती जाचे भलकंता ।
सबहि महाजन चले जाजे । हम पन करा मलानो आजे ॥

पर दीपा महाजन चले हम पन चलनहार ।

तुम हम कूं सिष देवो इनको कोन बिचार ॥

लोरक आये महल में आप सिंघासन ताम ।

तिहां बैठी सिनगार कर सो मेना वाको नाम ॥

साह जी येह मंदिर मालियाहे । छाही बबंघ काच ढोलिये ।
भल्यो भंडार अनंत अपार । घर बैठा दूढो मुरार ॥
करो बिलास महाराज कि चिंता । इन मंदिर कूं रह्यो न चिंता ।
बाली बेस आपनहिं दोई । छोटो मोटो ओर न कोई ॥
तासूं घडी येक बिलम न कीजे । मेरे बचन येह सुनि लीजे ।
बैठो मंदिर करो बिलास । परदेस गया केसी घर आस ॥
हम तुम प्रान येक है दोड । तामें अंतर करत न होइ ।
तुम सूं प्रीत हमारी देहा । औसो नेह न बंधो केहा ॥

प्रीत पुरानि न होय अरओ तन लोरक साह ।

जिहां लग तुम घर आवसो तिहां लग मोहे उदास ॥

(लोरक वाक्य)

मेना यह मंदिर करो बिलास । तिहां तुम बैठी करो दिलांस ।
मास दिवस हम आगे आवे । येह बात मन औसी आवे ॥

सुन मेना हम आवहीं मास येक ये बास ।

मंदिर मे मौजा करो सो बांधो मोटी आस ॥

मन में चिंता और मति करो । हर को नाम दिये उच्चरो ।
येह बचन करि साह जब चल्यो । येक सहस्र महाजन मिल्यो ॥
लोरक साह जो परदेस कूं गयो । मेना मन उदास ते भयो ।
काजर रो राता जो सरीर । नैना धार न षंडे नीर ॥
गीत नाद सब ही बिसाख्यो । दिन दिन जोबन देह तन जाख्यो ।
पर पुरुष कोउ नैन नहिं चीन्ही । मेरो तना लोरक कूं दीन्ही ॥
मन मों अरुग उन येतनी कीन्ही । येह देह लोरक कूं दीन्ही ।
मेरा है लोरक भरतारे । दूजो देखुं नहीं संसारे ॥

येह तन जारूं इमि करूं रूप रेष सब कार ।

पुरुष न देखूं नैन सूं लोरक बिन संसार ॥

नैना न देखूं नाथ लोरक बिन दूजो कोई ।

हियरा भीतर धाय झूर झूर पंजर करूं ॥

यह तन राधूँ येम साधन सत्त न छूँडहूँ ।

नैना न देखूँ कोये प्रीत पुरुष सो बांधिहूँ ॥

अैसे सत सूँ मेना रहाई । पर पुरुष कोउ दृष्टि न देषाई ।

इन नैना ना दीजूँ कोय । येह बिध सत्त हूँ राधूँ सोय ॥

बैठी मंदिर माहं अकेलि । साथ नहीं कोउ सखी सहेलि ।

मेना कोउ सूँ बात न कही । येह बिधि सत सूँ बैठी रही ॥

सजि साथे षेने नहीं कर नहिं माया मोह ।

येह बिधि से बैठी रहे नैना न देखे कोय ॥

नगर को राजा बड़ो नरेश । गंगा पार पुरब के देस ।

दल पायक कित लहूँ बिचार । वाको जाने सब संसार ॥

उनके पांच कुवर बलवीर । करे राज गंगा के तीर ।

धरम राज ते करे सधीर । पाप कपट कबहूँ न सरीर ॥

चार कुमर राजनीति चाले । येक कुमर पाप पग धाले ।

कान मरजादा कहूँ की नाहिं । चढे अहेडेन आज्ञा देई ॥

मेना मंदिर बैठी रही । कुमर नजर तिहां देखी सही ।

रूप सरूप देखि उजियारी । काम चरित्र देखी संसारी ॥

कुमर के मन मेना जो बसी । अवर न देखूँ त्रिया अैसी ।

अैसो मीत न देखूँ कोई । इन त्रिया सूँ मेलो होई ॥

कोई साथी ने अैसी कही । या त्रिया कोउ दृष्टि न देखी ।

याको कंथ चढ्यो परदेस । सत हीये हइ धरयो नरेश ॥

जो कुमर अैसी चित होइ । दूती आनि बुलावो सोइ ।

दूती येह काम चित धरही । जैसे जल मों पावक जरही ॥

तब कूमर साथी सूँ कही । दूती कोण नगर मों रही ।

अैसी दूती बोहोत अपारे । रतना मालन सो नहिं संसारे ॥

सुनत कुमर नगर को दूत । कपट रूप नारद को पूत ।

रतना मालन लई हंकारि । सत से मेना देहु डोलाइ ॥

दूति बचन जो तेरो पाऊं । तोहि मालन सिरोपाव पेहराऊं ।

मालन पान दूती को लीन्हो । कपट रूप सब आभूषन कीन्हो ॥

जोहन महेहन लीन्हो संभारी । कामन दुमन परो सिनगारी ।

आसे मोहे बेग संभारी । मेना सत इरावने, धारी ॥

(१५०)

कपट रूप चली मालिनी गइ मेना के बार ।
 जेहि सत राषे साहयां ताकूं कौन डोलावनहार ॥
 कपट रूप कुटनी चली गइ मेना के बार ।
 जेहि बिधि राषे सत्तकूं सो कौन डोलावन हार ॥
 जेहि राषे करतार तेहि सिर बाल न बंकही ।
 जो सिर जाये तो जाये साहधन सत्त न छंडही ॥

मालन जाय मंदिर मो पैठी । मेना सती सिंघासन बैठी ।
 चंपक फूल चवसर हारे । दीन्ही भेट अर कीनि जुहारे ॥

(मेना वाक्य)

हंस कर पूछे मेना नारी । ते कहा गवन कियो पिया प्यारी ।
 हूं तोहे पूंछू मालन रतना । अनर्चिती कित बोलै बैना ॥

(दूती वाक्य)

तेरे पिता मोहि धाय जो दीन्ही । मैं बालपणे तोहि चूची दीन्ही ।
 हूं धाय अब तेरी मैं । पोहाप हार आइ तोहि देना ॥

मेना जिय मो गहभरी भाग जरे तन मांह ।
 स्याम रस मो तन ऊपजै सो मेटन आवै ताहि ॥
 मालन बचन सुनाये मेना सांची कर गही ।
 सत्त छुडावन तेहे दूती कुटणी मालनी ॥

मेना बात सांच कर मानी । मालन के बोले मेना पतियानी ॥
 तंबही नायन बेग बुलाई । कुंकम केसर उगटणो नाई ॥
 अति रस कूटणी अंग न माई । अब मो पै मेना कही न जाई ।
 मैलो चीर तेरो दुष मेना । सीस सिंदुर काजर नहिं नैना ॥

बदन जोत तेरी धौहरी क्यों डरपत हो आप ।
 कुंकम मांग तेरी सीहरी सिरो हे छत्र तेरो बाप ॥

(मेना वाक्य)

हैडंडा काटो साठ मुख रोहे नैन असेस ।
 अब बैनि तीहे कहा कहूं दूति लछन तेरो मैस ॥

(१५२)

यह रति जोबन लाइलो अहेला गमाये काह ।
मालन मेना सूँ कहे रसियो मौजा मांड ॥

दूत बचन मालन कहाई । मेना धाये रही मुष च्याई ।
तीषे नैन सरूपे बैना । बोले सत्त महासति मेना ॥

(मेना वाक्य)

लाज काज तोहि मेरी आवे । अैसे बोल कैसे पति पावे ।
फाटे तास नार को हियो । यक कूं छोड़ दूजे कूं कियो ॥
येक येक कर जिये जे दोड । जुग दूसरे कित माने वेहु ।
अैसी वोकूं कहा सुनावे । यह मेरे मन येक न भावे ॥

मेरो भवर रस मालनि रूप बूझे सब कोय ।
अतिसम पुरष कड सो भवर कि सरभर न होय ॥

(दूति वाक्य)

नार अकेली सेज रहे सावन बरसे मेह ।
फनी होय करजो रहूं साधन चमके बीजरी ॥
सावन चमके बीज सधि हरषे लेहि हिंडोलना ।
सब कोई षेले तीज साधन सूती पिड बिना ॥

सावन मेना आन तुलानो । घर घर सषी हिंडोरा तानो ।
कंथ सुहागन भूले बारा । गावे गीत उठे झनकारा ॥
हरी भोम कुसुंभ रितनारी । नाह सरीसी कहे शुमारी ।
येह रित तोहे रैण दुहेली । काहे कुर कुर मरत अकेली ॥

जोबन जातो जानिये गये बार पछ्ताय ।
आन भवर तोकूं मिले लहे न जुग को लाभ ॥
ज्यासूं कीजे नेह तासूं दोइ जुग थिर रहे ।
तासूं किस्थो सनेह दूटे काचा सूत ज्यूं ॥

(मेना वाक्य)

सुन मालन सावन तेहि भावै । जिनको पीड परदेस है आवे ।
भोग भुगत संगीत उतारे । मो लेखै संसार उजारे ॥

(१५३)

रित मानूं लोरक घर आवे । नहिं तो मेना प्रान गमावे ।
 सुन मालन सब आगमै हारूं । यह तन लेइ अगन में जारूं ॥
 तू पापनी पाप सुनावे । इन बातन केसे पति पावे ।
 ये तो बात तास कूं कीजे । ज्याके जिव मों मान के लीजे ॥

मधुर मौज घन गरजहीं झीनी परे फुहार ।
 प्रेम हिंडोरा झूलहीं सो गावे मंगलचार ॥

(दूती वाक्य)

सरस कसूमल पेहरना सषी कियो सिनगार ।
 सुष सूं गावत नीसरीं सो तीज बढो तेवहार ॥

येह रित मेना जान न दीजे । मान न किये सरस रस पीजे ।
 इन रित नारी सेज सिधारे । पिया सूं प्रीत करत नहीं हारे ॥

(मेना वाक्य)

सुन हो रतना मालन धाई । तेरे बात मेरे मन नहिं भाई ।
 सावन को रस जब ही आवे । लोरक साह परदेस थे आवे ।

(दूती वाक्य)

भादव गहिर गंभीर नैना मे बोरत रहे ।
 क्यों करि पावस तीर साधन साही बाहरी ॥
 बरसे मेघ घन घोर मेना इण रित येकली ।
 बोले चात्रिक मोर रैण पीउ बिन दोहली ॥
 सुख सहेज जिनकी कहें ताको कंथ घर होय ।
 बाहरी हूवो बालहो सो बयेबी मूरष सोय ॥
 भादव गहिरो धम धम रैण अंधेरी होय ।
 सेहेज अकेली सुंदरी येह दुख लागे मोहि ॥
 भादव रित सुहावणी किन सूं कीजे आल ।
 कठ कोकिल बिलंबी रहे ज्यूं गल मोती माल ॥

भादो मेना मेह झंकोरे । मोर कौयल करे चिकोरे ।
 दादुर पपैया कहुकत मोरा । सूनी सेहेज हिया फूटो तोरा ॥

(१५४)

रेश अंधेरी बीज चमके है ये समरिये पीउ ।

रस चाखे न जुग रीत को क्यूं तरसावे जीउ ॥

सरदा सुता भावे बादर भागो । येह फूटे हिया पुरष अभागो ।
सषी सहुं मन असी आवे । आनी ओर परायो लावे ॥
अंध कूप निस रैण दुहेली । क्यूं मुर मरत सेहेज अकेली ।
यह जोबन अकाज के गमावै । गये बाहर पाछे पछतावै ॥

येह जोबन अहेला गयो सरम न उपजे तोहिं ।
अब भुरम तोहि मिलावहु सो बोल बचन दे मोहिं ॥
जरके जोबन जायसे सो पिउ बिना ये मन होय ।
येह जोबन यू जायसे फिरि बात न बूझे कोय ॥
येह ब्रत अकाज तास बिसासे ना रहिय ।
फूल फूल और स्वाद प्रीत रीत किन देशही ॥

सुन भादौ सब उठे सहाई । अब हू ओर बे सुध पाऊ ।
तो काहा कुवा मारे त षाई । अर तिन सुं बोल सुनावो जाई ॥
जो मरिये तो हाथ न आवे । तहां लग कोऊ अपद कहावे ।
डेहेकी जाय फुनि बिध थाथी । तिन जोबन पर कोन परतीति ॥
सुष तो वहे जनम को आपु । ताकू कोन कहे के पापु ।
तेरो जोबन दिरग जुवानी । कुच उचके काचू थिरकानी ॥

(मेना वाक्य)

काजर केसी कोठरी धाय पाप जस लेह ।
दरसन लोरक साह को उत्तर आवही देह ॥
सरद ससी निवान सरहे धन विरहे कामनी ।
न्यूं दुरजन को बान मदन सीर चूके नहीं ॥

(दूती वाक्य)

सुन मेना यो चख्यो कुंवारा । सरद जल असी संसारा ।
बाजें सैं किनि गत होई । पीउ भोग दिन रहे कहि कोई ॥

(१५५)

नैना दोय भरी तोहे देखू । दुष तेरो अति चिंता पेखुं ।
सब कोई बोले प्रेम समारे । तेरो पीउ न देखुं बारा ॥
सारा धन जोबन होत न पायो । गये बार पाछे पड़तायो ।
इन रित तुरनि नार अकेलि । सुन हो बात मैं कहूं सहैलि ॥

सुरत कही तोहि ऊपरे ते मोहि करी निदान ।
जह लागि जोबन बिहरसि सो कह्यो हमारो मान ॥

(मेना वाक्य)

प्रेम पियारा सोय जिन चोहोरी मो कर गह्यो ।
अवर न दूजो कोय मालन सूं मेना कह्यो ॥

सुन हो पाय सरद रित आई । तेरी बात मोहि नहिं भाई ।
कुआर मास कैसे अनुसारे । मो लेषे ससार उजारे ॥
भोग भुगत तो तास रित मानूं । जेह मालन अपनो करि जानूं ।
कलंक फुन जे आप लगावे । लोरक कह मुष कहा दिषावे ॥
करवत चंद्र सीस जो लोरा । तोरी अंग डग नहीं मोरा ।
कै या देह सराक भर डारू । कै या देह अगन में जारूं ॥

जोबन लोरक साह बिन ज्यार करूं तन छार ।
प्रीत जाये इन बात सूं होय सरग मुषकार ॥
कह्यो हमारो कंथ मालन बोले पावनी ।
कोई कहो निश्चित मनछा राषो आपणी ॥
जार्यूं किस्थो सनेह पीउ बिना प्रेम न लहै ।
येह पर जारूं देह मालन सूं मेना कह्यो ॥

(दूती वाक्य)

दीजे हाथ उठाय ध्याजे पीजे बिलसिये ।
गई जे मूढ चढ़ाय साहधन कृपण संग चमुरई ॥

जोबन भोगत सब संसारू । प्रीतम पेल बहुत बिचारू ।
कासे कर लज्जा मोहि रहिये । प्रेम प्रीत मेना यूं कहिये ॥

यह जोबन तन धूर पिय बिन प्रेमख कसो ।
ज्यूं नदी अस्पूर प्रीतम मेरे मन बसे ॥

(१५८)

(दूती वाक्य)

येह कीये को पाप पिउ कारन सिर दीजिये ।
साहाधन केसो पाप सो वेह री नीत माख्यो भलो ॥
अैसी प्रीत लगाय कर जेसो सूष सरीर ।
जल थे बिछुरे माछली सो छिन मो तजे सरीर ॥
बिरह बान लागे सो जाने । मूरष नार कहा पहचाने ।
येह रित अली जान नहि दीजे । सूर सुगंध मेला कीजे ॥

जोबन आयो भीर साध [न ?] सार न जानहि ।
उतर गई थी पीर सिर दीजे बाहर नहीं ॥
नित षेले नित षेलसूं येह बिरह अंग न माये ।
सेहेज अकेली सूधही अहे लाज मर जाये ॥

सुन मेना येह फागुण आयो । घर घर तरुणी षेल रिझायो ।
प्रीतम सूं षेले सब कोई । आज अकेली कोय न होई ॥
फागुण मदन न माने कोई । चोगणो सीत तिहां उकर सदाई ।
सकल पवन सीतकी कहिये । बनसपति सब बिरह की भई है ॥
बिरहे अंग लागत है मोरा । भोग भुगत बिन येह दिन केहा ।
येह दिन तरुनी सेहेज सिधारे । पिउ सूं प्रीत करत नहि हारे ॥
षेलत हे बहुमान प्रेम अगन सरजे बहे ।
ते देषि मन समझाये मालन मेना सूं कहे ॥

(मेना वाक्य)

येह झूठो संसार अर झूठो नेह न कीजिये ।
मालन दूति बिचार सत आपने से रीझिये ॥
बिन सोहाता केसा कुंकम अमा । सींदुर झटने बेनी मंगा ।
गीत नाद अर सबहि बेवहारा । जे रुचिरहि सो कंथ पियारा ॥
सुझ पीउ बिन जुग अंधियारो । हूं कित षेलूं प्रेम धूमारो ।
मेरो कंथ चलयो परदेसु । पिय बिन प्रीत न हाय (हाय ?) किनसु ॥
मेला कंथ न आनहि ओर न देखूं भाव ।
त्यक्तनि प्रगुन लेखूं जोरक लाह अर आव ॥

(१५६)

साहाधन चढ्यो बसंत बिरहन बिरह्यो गन्यो ।
पर नारि बिखंभी कंथ सूं तो जीवना सूं मरनो भलो ॥

(दूती वाक्य)

चैत रित जो आन तुलायो । फूल सुगंध सबही आयो ।
मेना मूरष क्यूं समझाई । कामनी फूल सेहेज रस आई ॥
इन समै जो सेहेज सिधारे । पिउ सूं प्रीत करत नहिं हारे ।
चली जात हे बसत तुसारे । तुम सूं बचन सुनावत हारे ॥
कबहुं बात तुम सुनो हमारी । आन देहुं तोहि छैल पियारी ।
कहो सुनो यह बात जो माने । आन देहुं तोहि पुरुष सयान ॥

चैत बसंत प्रेम रस मेना मान यह भोग ।

प्रथी जाति जान के सो कह्यो करत हे लोक ॥

(मेना वाक्य)

मेना मालन धर अरगाई । बहुत बार पत राषी तोहि ।
दूती दूत बचन सब तेरो । जो नेक पाऊं प्रीतम मेरो ॥
जनम न चित्त डोलायो काहु । पर पिजरे सिर जाय पराउ ।
आपते उत्तर अजित न नारी । नित कितो तोहि देत हूं गारी ॥
लोक कुटम की काणि न होति । मालन धाय नहीं तू दूती ।
चैत मास जे कंथ सनेहा । झुरझुर मरे पीउ बिन देहा ॥

रित अनरित रस अनरस सो मुक्त बचन सुनाय ।

रित सब रस जब माहि तब लोरक घर आय ॥

(दूती वाक्य)

आवा दीजे धाम साहाधन जोवन पाउण्यो ।
मान बिहूण्यो जाय पाछे करे पछतावण्यो ॥
बैसाध बन गहरो भयो लग लग कूपल जाय ।
येह रित तरुणी थेकली मूरष क्यूं समझाय ॥
कूपल लहरा जाय नार अकेली पिउ बिना ।
इण रित क्यूं सुहावे जेती पियु बिना सुदरी ॥
मन म्मीनो तन दूबखो अलप बैस सुष खेह ।
बोल सुणो येह बचन दोहो काहे कूं होत गंवार ॥

मेना मास चढ्यो बेसाख । मदन चवन भंजन करि राष ।
सू वर बिरह यह कायो जाये । येह दिन पिउ बिन काहेन गमावे ॥
मदन भाव यहो होत सुख पावे । जोबन दूत विरह होय आयो ।
सरस रस मास अबे आई । मेना कहे तो देउं मिलाई ॥

येह जोबन इम जाये मेना सूं मालन कहे ।

प्रीत करे सब कोय कहौ टेक बंध कैसे रहे ॥

जो मेना पिउ कारन जरियो । येह जोबन ते दीरघ गमायो ।
फेर न जोबन आवे बारा । मूरष बचन तू मान हमारा ॥

(मेना वाक्य)

लोरक दिन को उहां मुसावे । जे करे सो आगे पावे ॥
थोरे कूं कहा आप लजावे । इन बातन कैसे पति पावे ॥
आवे मूढ़ प्रीत की जाई । भोर भये रवि के रण पाई ।
जो कोउ रित पिउ बिन माने । ताकूं मालन पिउ तू पहचाने ॥

(दूती वाक्य)

अगन जोति संसार अर बिरला कोउ था बसे ।

मेना बिरह अपार जेठ मास रित तबे ॥

जेठ मास जुग प्रीत मेना पिउ बिना क्यों रहे ।

रस जाने नहीं रीत जो बतियो सारन बहे ॥

जेठ मास पिउ प्रीत कह मेना मन समझाये ।

इन रित तरुनी येकली रेण दोहली जाये ॥

जेठ मास रवि किरण पसारी । घास पात जर बर भई छारी ।

काया बन लागो बिरह के मारो । तोहि परिहरि गयो परदेस पियारो ॥

तरवर सीतल झाह सू जाण । तिणी रित मेना होय अयाण ।

अदीक मदन जरजर होये छारा । मेना बचन तू मानो हमारा ॥

सर संकट कोकिला को कहिये । गहि बसंत मलार जनाइये ।

कीन्ही वेह चेह संग जनाई । सुरसुर महे तुजे दुष देही ॥

जेठह जाणे गुण पीर पीर पराइ न देखिये ।

कोयला बरन सरीर साधन टेक न छुंड़िये ॥

जोबन मयो जिम हेर जोबन गुण जाययो नहीं ।

मेना बिरह अपार जेठ मयो सीख न सुनी ॥

जेठ गयो जुग रीत सू मेना दियो न बोल ।

इणी रित जोबन लाइलो साजन लहीजे मोल ॥

किन री दूती जेठ सिरायो । जरे फूल धरती धूर उढायो ।

जो दूती तोहि भलो मनाऊं । तबहि जान घर लोरक पाऊं ॥

सिंह अहार जो षेल धाई । जेहि भुलवो सो भोलवि जाई ।

आवहि बारह मास जो मैना । मेना रित घर कासिद अना ॥

देष दुकान नाम वहि पाये । कासिद चल कर मंदिर आये ।

बैठी मंदिर महासती मेना । जोवे बाट आंसू भरे नैना ॥

कहो करता केसे पत रहिये । दूती बचन कुलच्छन कहिये ।

येहि समय वेह कासिद आये । आदर करि उनहू कुं बैठाये ॥

कहां के बासी तुम कहो किनो की पूछो बात ।

किन तुम कूं पोहोचाइया कहो घेम कुसलात ॥

रहे पर दीप षेपिया आयें । लोरक साह हमकूं पोहोचाये ।

लिषे परवाना बचावो आजे । सिख देवो हम जाये महराजे ॥

तेर्ये कहै गुमास्ता आयें । का आये सो सबहि सुनाये ।

बैठे मजलिस बांचन लागे । मेना सती बैठी उन आगे ॥

स्वस्ति श्री सुभथान हे महा उत्तम सुकाम ।

बरनापुरी अबचल बसै सो घर उत्तम ठाम ॥

बांचत भए बधावना मोती चौक पुराये ।

दान दिये रे बिप्र कूं देवहि सबी मनाये ॥

सज सिनगार मन भयो अनंदा । ज्यों ऊगी पूनम को चंदा ।

सषी सहेली बेगि बुलाई । हरषि सु मंगलचार जो गाई ॥

कनक कलस कूं जो भरि आये । उनहू कूं सिरापाव पहिराये ।

होत ओझव कछु कहत न आवे । नार सबी मिल मंगल गावै ॥

घर घर तोरन बदनवारा । गावे गीत उठे झनकारा ।

होत बधाई कछु कहत न आवे । येते महं दूजे कासिद आवे ॥

चले साहुकार कूच करि अबही । छोटे मोटे साथ लिये सबही ।

दिये डेरा तंबू असमाने । उड़ी षेह छायो रबि भाने ॥

लसकर लो गिनती कछु नहीं । बालद पार न पावै कोई ।
 राजा सब मिल आगम आवै । आदर भाव उनहु कू बैठावे ॥
 देवे दाण न करही लेषा । हीरा माथक जवाहर बिसेष ।
 दरब देवे मनमाने अमोले । राजालोक कोऊ येक न बोले ॥
 चले कूच करि मन सुध कीना । सूरत नगरी मो डेरा कीना ।
 मिलि साहुकार चले सब आये । उन जवाहर पर आंष चढ़ाये ॥
 लाल पदारथ मोल अपारा । मूंगा मोती को गिनत न पारा ।
 सज बालद खोरक चढ़ि चल्थो । नदी नीर पावक षलबल्थो ॥
 हालोल कलोल भी पोहोचे आई । गढ़ गुजरात गिरनार कि छाई ।
 समाचार बरनापुर पाये । खोरक साह मालागर आये ॥

मही मौज डेरा कियो उतरे सुष सूं घाट ।

गुजरात छोड़ हृदके चलो बरनापुर की बाट ॥

उतरे घाट नरबदा आये । कामापुरी सुकाम कराये ।
 मजल मजल पर डेरा कीना । बरनापुरी मोकाम जो कीना ॥

डेरा चंपा बाग मों सुष साजन को मिलाप ।

सषी सखी बुलवाय के सजी आरती आप ॥

सजजन मिलावो हे सखी मन उपजै सुष चैन ।

अति सुष मन उमगी फिरै सो सदा रसीले नैन ॥

हरष सजन घर आवणा हरष सजो सिनगार ।

हरष हरष ऊगी फिरै सोम नमों हरष अपार ॥

सषी सजन घर पावणा प्रीतम प्रेम सनेह ।

रस बादल घन उमग्यो सो हृदा बूझो मेह ॥

जब खोरक सार मंदिर सिधारे । अर हीरा जवाहर बोहोत लुटाये ॥
 बिम्र बोलाय जोतष बुलवायो । मोती मूंगा दान देवायो ॥
 कियो पुत्र कछु कहत न आवे । जित चाहे तित द्रव्य लुटावे ।
 कलि कूवासी दरब दियो अपार । घर बैठा तुठा मुरार ॥
 किये सिंगार आप मन भाये । करे भाग री मोहोरतो लाये ।
 आवे सूती घर खोरक आना । सूष सरीर भये सुरनाना ॥
 खोरक साह आये घर मेहमता । मेहना मीठी सरब मन चिता ।
 अब सखि सरस सेहेज सुष लीजें । प्रेम पिया संग अंशुत पीजे ।

तेरो कह्यो जो भेटहूँ सत राख्यो करतार ।
 राखी प्रीत लोरक साह री सो दूती रही मखमार ॥
 पाप पुन्न दुइ बीज जो बोये सो पावजे ।
 साधन जैसा कीजिये तैसा आगे पावजे ॥
 करनी करे सो क्यों डरे करे करि क्यों पछताय ।
 बोवे बीज बबूल के सो अब कहां से पाय ॥

मेना मालन उरी बुलाई । धरि झोटा कूटनी हराई ।
 मूंड सीस ओर दुरा कीना । काला पीला टीका दीना ॥
 गधे पर मालन कूं चढ़ाई । हाटो हाट सब नम्र फेराई ।
 जैसा करे सो तैसा पावे । ईणी बात न भलपने आवे ॥

सत मेना को थिर रख्यो बात रही संसार ।
 दूती मारि निकार दई सत राख्यो करतार ॥

असो मन जो राखे कोई । ताकी बात चहुं जुग मो होई ।
 भली बात भली बुध पावे । बुरी बात सब कुटम लजावे ॥
 असी करे न कोय मधु सुना यह सारी कही ।
 मेना सत राखियो सो जुग जुग मों बातें रही ॥

[४३४ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

प्रीत करी सुष लहन कूं सब सुख गयो हिराइ ।
 जैसे पन्नग छल्लुदरी पकरि पकरि पछताय ॥
 अहि ने ग्रही छल्लुदरी मन में उपजी दाय ।
 आस करौ तो गल फसै तजौ तौ अघक होइ ।

[प्र० ४ कथा तृ० १ का पाठ कुछ भिन्न है]

[४३४ आ]

तृ० १, च० १ :

अहमद तजे अंगारज्यूं बोछे को संग साथ ।
 सीरे ते कारो करे तातो दीजे हाथ ॥

(यही ऊपर तृ० १, च० १ में - [१५५ अ] में है)

(१६४)

मालति तू आपने जीय गावे । एह मेरे मन एक न आवे ।
तू तो योही लोक सुनावे । इन बातन कैसे पति पावे ॥

(मालती वाक्य)

मधु ते कही सोही मन मानी । ज्ञान विचार दोस सब ठानी ।
बडे बडे सब बात विचारे । कुल बिबहार आपणा धारे ॥

नरस्य आभरण रूप रूपस्य आभरणं गुण ।
गुणस्य आभरण ज्ञान ज्ञानस्य आभरण सभा ॥
येहे जीव संसार ग्रहे मधुर किंन भक्षितां ।
मधुरेव बंधति कल्याणं मधुरे माधये धीये ॥

(मधु वाक्य)

के स्त्री बिना कंठ से के रूप गुण पूजंते ।
के भली लजा हीनस्य मान हीनस्य भोजनं ॥
अला सित्य कार्येषु उपजंती सने सने ।
मधु बिंदु प्रसादेन प्रजलेति राजमंदिरं ॥
❖ अलप बात मधु बुधु कि यह जीके काल ।
मुध के स्वान मंजीरहे नृप की छारी झाल ॥

(तृ० १ में * चिह्नित छंद नहीं है)

[४३७ अ]

तृ० १, च० १ :

(मालती वाक्य)

कोटि सयानप सहस्रबुधि कर देशो सब कोइ ।
अणहोणी होणी नहीं होणी होय सो होय ॥
होनी थी सोई भई अनहोनी नहि एक ।
अनहोनी के कारणे पचि पचि मरे अनेक ॥
सुवटो एक सुलष्यणो सोहतो परबत ठाम ।
सब पंछी थे येकलो जेहि पत राखे राम ॥

(१६५)

(मधु वाक्य)

मालति कूं मधु बूझे असी । सुवटो की पत राषी कैसी ।
पंछी सकल जूथ क्यूं छूटो । बनमो रहे कौन थे रूठो ॥

(मालती वाक्य)

कोयल रुठी कथ सू छाड़ चली घर बार ।
सुवटो तेसू सग कियो सो मन मों आणे गार ॥

(मधु वाक्य ,

पंछि कोप कैमे कियो केहि गुण भई पुकार ।
सुवटो कौन गुनो कियो सो मोहि कहो बिचार ॥

(मालती वाक्य)

पंछी उलटे कोप कर सुवटा ऊपर डार ।
सुवटे राम पुकारियो तब पत राषी करतार ॥

कोयल कंथ बिग्रह कियो मन मों क्रोध अनाय ।
तुम मेहरी हम पुरुष नहिं मन भावे तिहां जाय ॥

करी रीस कोयल से भारी । देस छाड़ि तुम जावो निआरी ।
बिग्रह बाढे न काहू सरिये । छूटो काल तब बिग्रह करिये ॥
बिग्रह रंक राव ते छीजे । बिग्रह हाणि ग्रंथि की कीजे ।
बिग्रह जात जीये अपारे । बिग्रह बड़ो बड़ो संसारे ॥

कोयल मन मों सोच करि हिरदे कियो बिचार ।
पिउ तजि के जो पति करूं सो करूं कोन भरतार ॥

नैना झरे औ मेले स्वासा । मन मों क्रोध अनंत उदासा ।
बेर बेर कोयल पछतावे । अब तो मोहे कौन मनावे ॥
अब हूं कौन सरोवर जाऊं । जल देषे मैं अति डरपाऊं ।
बाग में अब मैं कैसे रहिहूं । पुरुष बिना झाड़ में डरिहूं ॥

कोयल ताये निसरी देषे ब्रह्म बनराय ।
सुवटो देष्यो बनपति दौर लगी उन पाय ॥
सुवटो एक जंगल मो रहै ताको हरिहर नाम ।
हूँ अबला तुझ आसरे तू राखे कै राम ॥

(सुवटा वाक्य)

तू आई केहि कारने मोखुं कहो बनाय ।
हूं मंगल को सूवटो राखू कोन सुभाय ॥

(कोयल वाक्य)

मेरे कंथ रिसाई मोही । अब मैं चरन रहूंगी तोही ।
सुवटा मोहि करो घरवासो । मैं जंगल में फिरुं उदासो ॥

(सुवटा वाक्य)

तू काली कुदरसणी हू सुवटो बनराख ।
तुझ सुं प्रीत कैसे मिले अर कैसे प्रेम बढ़ाय ॥

(कोयल वाक्य)

मरण मरण को आसरो आई देषि निदान ।
सीस देहि इण बात पर सो क्यूं दीजे जाण ॥
कंथ क्रोध ऐसे कियो तापर उपजी रीस ।
हूँ अबला तुझ आसरे तू राखै कै जगदीस ॥

सुवटा बात कोयल की मानी । दई बगसीस करी पटराणी ।
केलि करै मन में कछु नार्हीं । अब कोयल बिछरे जिय जाई ॥

(सुवटो वाक्य)

जाकुं तके मारवो सो पर तन राचे अंग ।
तिन सूं ही राचो रहे तिनसे रंग न भंग ॥
कोयल कथ मंदिर गयो जैकृपाल जेहि नाम ।
सुरत करे सोधत फिरै सो ब्रूकत ठामहि ठाम ॥

जै कृपाल फिरे नगर मंझारी । सुध न पावे कोयल नारी ।
पावे नहीं कहूं परबेसा । जाय पाहोचो सुवटा के देसा ॥
सुवटो बैठो नग्रह मंझारी । करै केलि तिहां कोयल नारी ।
गावै गीत औ करै बिलासो । जैकृपाल तिहां देख्यो तमासो ॥
कोयल कंथ तिहां चलि आयो । देखि त्रिया जिय रोस भरि आयो ॥
अबहुं बोखूं तो मोहि मारे । कंथ परपंच तो सुवटो हारे ॥
मन में रैस करे अति सांसो । सुवटा देषहि करत तमासो ।
सब पंछी दल लोहूं हुंकारी । तेरी पंथ उदाऊं चारी ॥

जै कृपाल मन रीस करि उड़ियो पंष पसार ।

अंतर गत में आवरे सो कोउ न बूझे सार ॥

कोयल कंथ उड़्यो ततकाले । सब पंछिन सूं करी पुकार ।

मेरी मेहरी सुवटे घर बाई । अब हूँ कासी करवट लू जाई ॥

सब पंछी मिलि बोले बानी । तुम यह बुधि क्यूं करो अयानी ।

मेहरी तोहि भिलावां आजे । कासी तुम जावो कुन काजे ॥

सुवटे सुमरे राम कूँ पंछी करी पुकार ।

यह पंछी मोहि मारिहै अब तुम राषो करतार ॥

उनही भरि पंछी भई मोपे कोप चढ़ाय ।

अब के राषो सांवरे तुम बिन कोन सहाय ॥

येह कह्या करता सुणी मने मों उपजी लाज ।

अब के सुवटो राषिहूँ असी भई अवाज ॥

(जैकृपाल वाक्य)

सब पंछी सूं मैं कहूँ कौन देहि येह दाद ।

कै मोहि कासी जाण दो कै सुवटा ल्यायो बांध ॥

सब पंछी सु परबत चले मेघ घटा उल्लटाय ।

सुवटो ल्यायो बांध के सो बोलत मारहि मार ॥

बग सारस पंछी मिले कोयल काग अपार ।

हंस मोर चात्रिक सबे सो पंछी पंच हजार ॥

पंछी उल्लटे पुकार सुनि ल्यायो कोयल नारि ।

सुवटो पकरो पेच करि मोहकम दो हो मार ॥

पंछी कोप कहा करे करता करे सो होय ।

आउ कथा आगे भई सो चित दै सुणियो सोइ ॥

हिरदे बुद्धि विचार के मनमों सुमरे राम ।

सुवटे मन सुमरन कियो तब पत राषी राम ॥

पारधि येक नगर मो रहै । ताको कुटंम सब भूषन मरै ।

उदर कारज जिहां जिय कूँ मारे । पाप करता कबहूँ न हारे ॥

परी भूष जब पारधी लीन्हो बन जीव जाल ।

करम लिप्यो सो न मिटे सब पंछी को काल ॥

भरी भाथरी हेर के लीन्हो बाण सुचंग ।

उदर कारज बन फिरे सो चले तिण प्रसंग ॥

येक दिवस फंद जाय के रोप्यो । उन पंछिन पर करता कोप्यो ।

हजार च्यार को जूथ चलि आयो । देषि पारधी अति सुष पायो ॥

करता आज यह मोकूँ दीजे । पूरन कृपा अनुग्रह कीजे ।

हिरदै सोच करि यह बिचारै । पछी चले पंच हजारे ॥

थूँ करता जिव फद मे आवे । कै मूयै कै जीवते सारे ।

के मेरे घर होत बधाई । आवते होती ते नवनिधि पाई ॥

कैई मारे कैई पकरिये कैई मरोडे गात ।

कैई जाल लपेटिये निसंक ह।य बांधी गाठ ॥

ब्याध चलि ग्रेह आइ अर सब पछी साको कियो ।

जिन उन चितयो तेह सुवटो सुष मंदिर रह्यो ॥

समरे मृग कप जीउ आदये बढी जात ।

हिरदा मधे समरिये तब पति राषे करतार ॥

पंडव होता पांच कौरव सुभट घणा ।

क्रसन भिरे जिन साथ बाल न बंका तेहि तणा ॥

सुवटो सुमर थूँ सुष पायो । पछी सकल दाम नहीं आयो ।

अैसे कर सुवटा पत राषी । मालति कथा मधू सूँ भाषी ॥

और सोच अब जनि करो कही जैत सुनि लेह ।

पू।ब नेह निभाइए यहै जानि चित देह ॥

नैना सूँ फुनि गिर बहे असतुत बचन तुप कीच ।

मन कोढ़न कूँ चालियो सो उरभू रह्यो कुच बीच ॥

[४४६ अ]

तृ० १ :

एते कहत नीर भरि आयो । कन्या जनम कौन सुष पायो ॥

नृपतो कनक माल सूँ बोले । रोय रोय पलक ना खोले ।

रन में नहिं कहूँ में हाथ्यो । कन्या को सुष कीनो कारो ॥

अब कहा जग में सुष देखराउ । लाय बिभूति दिसांतर जाउ ।

राय बहुत चिता मन लाइ । ए' मोहि कन्या देइ बड़ाइ ॥

(१६६)

(कनक माल वाक्य)

तुम काहे चिंता करो एसकबांधी राइ ।
जो जाके कर्म में लख्यो सो कबहुं ना मीटाइ ॥

(चंद्रसेन वाक्य)

सुन रानी मैं तोहि सुनाऊं । मधुमालती दोउ मराऊं ।
इन तो मोहि कलंक लगायो । कन्या जनम कौन फल पायो ॥
(तुल० ४४६ अ १)

[४४७ अ]

च० १ :

कनकमाल चिंता करे भूरे मालती आज ।
पुत्री हम ते बीछुरे जग जीवत केहि काज ॥

[४४८ अ]

च० १ :

तजो देस यहि ठोर न रहिये । याहि ठौर रहि नीर नहि पिये ।
जाय बेगि तुम औसी कहिये । बचन सुनत मन धीर न रहिये ॥
(तुल० ४४८)

[४४८ आ]

तु० १, च० १ :

बलि सषि राम सरोवर जाई । मधुमालति कूं बात सुनाई ।
चंद्रसेन नृप रोस भराई । कहियो पायक बेगि चलाई ॥

[४५७ अ]

तु० १, च० १ :

नैन तपत तुव दरस कूं श्रवण तपत तुव बैन ।
करह तपत कुच गहन कूं अधर तपत रस लेण ॥

[४६०. १ अ]

द्वि० १, तु० १ :

अपने कुंज गई ले सषी । मालन कुंवरी आवत लषी ।
उत ते चंद कुंवर ते आयो । बोली मालन सहज सुनाये ॥

[४६० अ]

द्वि० १ :

राय बेगि चलि तापहं आयो । चंद कुंवर की सुदि न पायो ।

[४६१ अ]

तृ० १ :

रानी मंगला सो इन बूझी । मालन के मन ऐसी सूझी ।

द्वि० १ :

कुंवर मालन बातें लगाई । इन चरित्र जाने सभ पाई ॥

[४६२ अ]

तृ० १, च० १ :

नैन पदारथ नैन रस नैने नैन मिलंत ।
अनजाणयो सु प्रीतडी पेहला प्रीत करंत ॥
दियरा राखूं हटक कर सम राखूं समझाय ।
नैन रसीले ना रहे मिलै अगाऊ जाय ॥

[४६५ आ]

तृ० १ :

नैना दोठ मिलाउ दोऊ । अरस परस ना चूके कोउ ।
सोच कियो कछु बात न सरही । अब इहां कौन बसीठ करही ॥

च० १ :

दोउ बैठे मन औसी चाहे । प्रीत प्रान मन माह जनाहे ।
देषो धूं करता की करनी । निरषट बदन गिरे दोउ धरनी ॥

[४६६ इ]

तृ० १, च० १ :

ज्यासूं जाको नेह ज्या बिन पड़े बसीठिया ।
आप आप में राचहीं जैसे रंग मंजीठिया ॥
येतबो काजर मैं दियो पट धूँधट की ओट ।
जित देखूं जित गिर पड़े सो नैन बान की चोट ॥

रूपरेष मन प्रीत जनावे । चंद कुँवर सूँ बोल सुनावे ।
बिरह बान लागत ही मोहि । साँचो नेह जनावत सोही ॥

बिरह बान तन बेधहीं कौन करे बसीठ ।
नेह बध्यो नैना मिल्या आपने आप ही डीठ ॥

(केवल च० १ में)

[ज्यासूँ जाको नेह कू जा बिच पड़े बसीठ ।
आप आप रंग राचही जैसे रंग मजीठ ॥]
नैना बांधी प्रीतडी नैन मिलावे सनेह ।
नैन ही रंग राँचही सो नैन मिलावो देह ॥

(केवल च० १ में)

[नैन पदारथ नैन धन नैना नैन मिलंत ।
अनजान्या सूँ प्रीतडी सोय हेला न करत ॥]
रूप रेष तन येह चंद कुवर तन चित्तयो ।
प्रीत पहेली नेह बंधी प्रीत सररीर चहे ॥

चंद कुवर गहि उर सूँ लीनी । दै बगसीस अलिंगन कीन्ही ।
प्रीतम दोनूँ नेह जनावे । रूपरेषा बोहोत सुष पावे ॥

नैन बार सिर सांधि कै मार चल्थौ मन लाय ।
धावन दे बिरहे सषी छिन सिर माख्यो जाय ॥

सुन हो बात मोरी मृगनैनी । नैन कमल तुम रूप लोभानी ।
अब मैं तुम सूँ अरज मुनाऊँ । चलो सुष सेज बहु भांति रिझाऊँ ॥
गही भुजा अंक मातुं परसी । लज्जा छुटिगा काम जु सरसी ।
तन मन प्रान येक भये दोड । कहिये कौन बात सूँ सोड ॥

(च० १ में इस प्रक्षेप के आरम्भ में भी ४६५ है और अंत में जैसा होना चाहिए है ही, जिसे यह प्रकट है कि यह अश्रु बीच में बाद में रक्खा गया है ।)

मन मिलवे की रीत कंदूप कोट न पाह्ये ।
प्रथम समागम जीत डर भागो तन दोड जन ॥
रंग राख्यो वेह पान काथो सुपारी तन रच्यो ।
ज्यूँ चोखी के पास पंजर मन मिलवाँ करे ॥

(१७२)

मनमथ उपजे अंग ओषद बैद न जानही ।
जिउ जुग मिले अनंत छुटे आपने सहेल मो ॥
कोल बचन परमान के बोले बोल सुभाव ।
यह मरवो यह मोगरो येह सुगधी जाय ॥

[४६६ अ]

तृ० १ 'च० १ :

नैना माती सैन बुलावे । उततें चंद कुंवर तिहां आवे ।
करै केलि तिहां बाग में दोउ । तीजो भेद न जाणै कोउ ॥
जोबन रूप दोह मैमता । अति प्रबीन रंग रूप सुरता ।
हीचें हंसे और रें बिलास । जब बिछरे तब मन उदास ॥

[४६६ अ]

तृ० १, च० १ :

आसन एक दोऊ जु रहे आयो सिंघ समाय ।
चंद कुंवर चित दिष्टि करि मुषते लियो कित जाय ॥
चंद कुंवर मन चेतियो आयुध लियो सभारि ।
करक बान कर बर लियो सिंह स्वान ज्यूं मार ॥

[४७१ अ]

तृ० १, च० १ :

आसन त्रिया जो दृढ़ रही कर लीयो बर बान ।
चंद कुंवर मन में निरषियो ये सिंघ स्वान समान ॥
चित में धरी न और हिमत यह करता दर्ई ।
सिंह मार दियो डर त्रिया आसन सूं रही ॥

(तुल० छंद ४७०-४७१)

[४७३ अ]

द्वि० १ :

उधम ज साहस प्रबल अधिक धीर नर चित्त ।
ताके बल की मत कहो यम की करक संकित्त ॥

[४७३ आ]

च० १ :

बाल बुद्धि हीमत बस जाणे येह बिबेक ।
देव 'डरै' दाण्यौ 'डरे' 'येह' पटंतर देष ॥

(१७३)

[४७३ इ]

तृ० १, च० १ :

सुनै न देखै नैन सुं बिन देखे बिष षाय ।
आये बिन सुष भीर थे सो जैसी बात बनाय ॥

[४७७ अ]

च १ :

पूरब जनम कि प्रीत येह करता बिजोग ही देख ।
कौन बियोग मैं कियो कौन करम के लेष ॥

[४७७ आ]

तृ० १, च० १ :

बिधिके अंक न चूकहीं सुष दुख लिख्यो सरीर ।
मनकी मनही जानहीं सो अपने जिये की पीर ॥
बिप्र मूसि रे बाटमों कछु कोरि सरोवर पार ।
गऊ बिछोहो मैं कियो सो कोन भयो जंजाल ॥
किन सुं पीर सुनाइये किन सुं करूं पुकार ।
अब संकर तुम राखियो अवर नहीं संसार ॥
संकर सेवा मैं कीनी ओर नहीं कछु कार ।
समरथ संकट भाजही बात कहूं सत सार ॥

[४७९ अ]

तृ० १, च० १ :

गौरी संकर सुं कहे इनकी सुनो पुकार ।
अंत रेष रच्छा करो मधू कुंवर की सार ॥

[४८० अ]

तृ० १, च० १ :

आयुध येक न तो पै होइ । बिन आयुध कैसे कै लरिही ।
नृप के दूत बहुत इहा आये । मधु तुम मनमें क्यूं न डराये ॥

आयुध एक न मोहिं गहि गिलोल कर ले धरूं ।
कहा सुनाऊं तोहि सारा को संग्रह करूं ॥
ताको जीव डराय जाके बिन पख्यो नहीं ।
केतियक कहूं बनाय असे गिलोल सुन मालती ॥

[४८२ अ]

द्वि० १ :

जिये न डर तूँ मालती करता करे सु होइ ।
कटक झटक पल एक मो तो मधुकर कहियो मोहि ॥

[४८३ अ]

तृ० १, च० १ :

कीन्हो पराक्रम आप मधु ब्रच्छ तयो दे निसाण ।
येक गिलोल की चोट में सो डारे पान ही पान ॥

[४८३ आ]

च० १ :

मानो तरवर सूको भयो भंवर ब्रच्छ यह होय ।
कहे मधु सुनो मालती येह पराक्रम जोय ॥

[४८४ अ]

तृ० १, च० १ :

वेष तमासो मालती येह कहा अचरज होय ।
पत्र पत्र पर उड़ गई ब्रच्छ जु सूको होय ॥
मन सच पायो मालती नेक निरष यह बाल ।
पायक पठाये नृपति कोइ होत जंजाल ॥

[४८७ अ]

तृ० १ :

लरिका येक कहा करे सो पायक के जोर ।
राजा चित माने नहीं उहां लरे कोउ ओर ॥

[४८७ आ]

तृ० १, च १ :

तुरी सहस्र येक सज करो गैबर पाखर डार ।
बनिया तुमसो कहा लरे सबेगहि डारे मार ॥
गैबर तुरी बनाय के सजा दियो बहु मान ।
चले झत्रि सब साजि के सो प्रथम भूक मंडाय ॥

(१७५)

[४६० अ]

तृ० १, च १ :

जैसे नर अति झूझही अब लो देषि डराय ।
मालति जिय बिसमौ करै हांक सुनत मरि जाय ॥

[४६२ अ]

तृ० १, च० १ :

कहे जैत सुन हो मधु मालति बन बिस्तार ।
अली संभर यहै पूरब जनम कुल कुटब संभार ॥

(तुल० छंद ४६२)

[४६२ आ]

च० १ :

प्रथम मालती बन बिस्तारौ । पाछे आनि संबर टंकारो ।
अैसे बिना कारज नहिं होइ । तेरो दोस न मानै कोई ॥

(तुल० ४६२.३, ४ तथा ४६३. १. २)

[४६२ इ]

तृ० १, च० १ :

अैसे बिन कारज सब होय नही कुल कार ।
सरित समर न कोउ तरे कछु अब सेष हजार ॥

[४६३ अ]

तृ० १, च० १ :

अली अनंत संभारिये तोरी सब दल खाये ।
तेरो दोष कोउ ना कहे बिन मारे मर जाये ॥

[४६७ अ]

तृ० १, च० १ :

बेगि बुलायो आनि कर महस्र येक के दोय ।
सब कू मारै षोज कर सो पटक पड़ारों तोहि ॥
सुनत बचन गुन यहै मधु चला र आगे गयो ।
ज्यू मादों को मेह कर गिल्लोळ ठाढो भयो ॥

(१७६)

[५०३ अ]

तृ० १, च० १ :

कोड मुए कोड मारिए कोड परे बेकरार ।
मधू कुवर हो एकलो सावत एक हजार ॥

[५०३ आ]

तृ० १ :

चंद्रसेन नृप ने सुन पाई । इतने बहुत कुमक पठाई ।
सिगरे सूर सिमट कर आए । मधु को देखत बहुत रिसवाये ॥
उठे मधू बहु तरी सभारी । कर गिलोल लीनी संभारी ।
मारे मधू सकल दल भागे । फूटे अरब घरब तिहां लागे ॥

केहू मारे केहू मरे केहू परे रन बीच ।
गज फूटे घोरा परे मचे रक्त रन कीच ॥

सो भागे सो चले पराई । को इक मारे बिना मृत आई ॥
एक एक बिन सीस धड डोले । को इक नीर नीर बोले ॥

[५०४ अ]

तृ० १ :

घायल नृप सूं करे पुकारा । मधु को वे सबही दल मारे ।
सब ही मुए गिलोल न लागे । हम तो नृपति षेत तजि भागे ॥

[५०४ आ]

द्वि० १ :

कटक कुटक किये थोक छिन सूर बोर के षेत ।
मधु मारे हारे सबै रही नहीं तन चेत ॥

[५०४ इ]

च० १ :

नृपति गये घायल कने कौन लरे नर आए ।
ताको भेद जो पाइये तैसी कुमष पठाये ॥

[५०७ अ]

च० १ :

लरिका थोक कैसे लरे और बनिया की जात ।
परचक्री आयो सबी ओर नहीं कछु बात ॥

(१७७)

[२०७ आ]

तृ० १, च० १ :

सुनतहिं बेग बुलाइये छत्री दल भूपाल ।

सजे सैन सब उलटे राम सरोवर पाल ॥

[२१२. १ अ]

तृ० १ :

अैसे कर कर इनकूं मारे । इस बिध काज आपनो सारे ।

च० १ :

अैसे कर इनकू समझाऊं । मन मेरे मे मते उपाऊं ॥

[२१२ अ]

तृ० १ :

सिव प्रताप मै कर सूँ नहिं हारूं । पति मधुकर पै जब यह कारूं ।

च० १ :

विन जूझे सगरो दल माख्यो । येह बिधि कारज आपनो सारो ॥

[५१३ अ]

तृ० १, च० १ :

जैतमाल मालति कूं बूझे । झार अठारे तोहे कहा सूझे ।

फल औ पत्र भये है केते । याकी बात कहो तुम मोथे ॥

[५१३ आ]

च० १ :

आपो हो पोहोप दोहोपत्ता च्यार चन्नवारो अष्टकुलि ।

पोहोपत्ता । बेला ते षट भार निवासो देव निर्मिता ॥

[२१३ इ]

तृ० १, च० १ :

च्यार झार बन फल की वाड़े । आठ झार फल फूल से ठाढ़े ।

बेली भार षट ते माहीं । येहि निधि झार अठारे ताई ॥

[२१४ अ]

तृ० १, च० १ :

पोहोप सुगंधहि महमहे बोहोत बाग बिस्तार ।

झोर झार गुंजार के आये भंवर अपार ॥

म० वार्ता १२ (११००-६४)

अति सुबार देसे गई जेत पवन विस्तार ।
पवन बेग मधु जूथ के सो बाढ़े झरकार ॥

[५१६ अ]

च० १ :

आई सेन चली बेग के हाक पचारी होय ।
अली चडे अति रीस करि कैसे बरनों सोय ॥

[५१६ आ]

तृ० १, च० १ :

पकर झंझरे झार कूं भमर पहुँचे आन ।
करी कोप तन तोरही सो लेन लागे प्रान ॥

[५२२ अ]

वृ० १, च० १ :

कारे जैसे काग से नर तुरग सब येह ।
भंवर बिरचे सेन पर सो तोरन लागे देह ॥

[५२८ अ]

तृ० १, च० १ :

आयुध डारि सबै गिरे बिन मारे सब सग ।
छत्री सबे अघे भये सो भंवर डसे यह अग ॥

[५३१ अ]

तृ० १ च० १ :

बढ़ी बेर के तुम चडे गोपे आयो क्यों न ।
कहा बनिय सुत बावरे ज्यूँ आटा में लून ॥
दियो दमामा बेग से आनो बखतर टोप ।
चढी सेन नृप चढ़ की घटाटोप मन कोप ॥

[५३६ अ]

तृ० १ :

नृप देषे जो भमरन पाये । तुचा मांस कछु रहै न पाये ।
नृप हृष्टा ये बहुत तब मान्यो । आदि देष सत्य करि मान्यो ॥
कछु सांची झूठी कछु नैन निरधि भरमाय ।
राजा मन चिता करे हम भमरा कहा पाय ॥

कहे नृप सुनौ सकल दल छिन इक इहां बिलमाय ।
दूत पठाउ हेरबा मधु केतेक दल आय ॥
राय बैठ उद्दां बात कही दये दूत मोकलाय ।
मधू दल वेह ठीक कर बेग सुध देयो आय ॥

[५३६ आ]

च० १ :

नृप दल आये ठाढ़ो भयो सुनही सबद पुकार ।
नर जो आये हायल भये परसे पंच हजार ॥

[५३८ अ]

द्वि० १ :

अनेक दूषणं यस्य कदापि ग्राह्यते स्वयं ।
आभूषणं न कुर्याच्च हार पान पृथक् पृथक् ॥

[५३८ आ]

च० १ :

अरे अयान अलप बुधि ओर गुन्यो त्रिया रूप ।
नगर उजेणीं मारु रहि समझि चलो प्रति भूप ॥

[५३८ इ]

तृ० १ :

अरे अयानी अलप बुधि तोहि रान डर नाहिं ।
नृप कन्या संग राष कर बैठे बारी माहिं ॥
तुम तो मधु मुरष भये नृप भय कियो न अंग ।
संक्या ज कछु मन मा धरी लीयं मालती संग ॥

ते कछु संक नहीं मन कीनी । बनिया कुंवर मालती दीनी ।
होय अज्ञान तैं ज्ञान भुलायो । नृप को कटल मूड पर अग्यो ॥

[५३९ अ]

तृ० १, च० १ :

कहा कहुं बुध तोहि कूं बंदी खोर कहाय ।
नृप दल आय घेरो भयो दिग बारी के आय ॥

(१८०)

[५४१ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

कउवा साथ भए ज्यो पुग्वा । सीहा पास चढै गहि दुग्वा ।
चींटी पंख लग्गी सच पाई । तोकु यह बुद्धि कित आई ॥

(द्वि० १ में उद्धृत प्रथम अर्द्धाली के स्थान पर है :

स्वान सदा सवाद जु षावे । माला कठ मजारी नावै ।)

[५४२ अ]

द्वि० १ :

बिष भार सहस्त्रेषु गर्वनायति पन्नगः ।
वृश्चिको विन्दु मात्रेण ऊर्ध्वं बहति कटकः ॥
छोने घूने कुशज ये इनको एक सुभाउ ।
जिहं जिहं माण्ये संचरै कोउ बिनासे ठाउं ॥

[५४५ अ]

तृ० १, च० १ :

नृप कोपे जिय रोस करि कै तुम जाण्ये ओर ।
भूझ किये जीते नहीं बेग छड यह ठौर ॥
मधु समावो येही बेग सूं आज नृप है दूर ।
तो तन पटक पछाडहुं सो पंजर करिहु चूर ॥

[५४७ अ]

द्वि० १, च० १ :

अलप बुद्धि नर होय अयानो । तासों रोस न करै सियानो ॥
कूकुर कोटि गयदम भौंके । इन बातन कछु सरै न सीझै ॥

[५५० अ]

तृ० १, च० १ :

छोटे बड़े न जानिये करे सियानप सोय ।
दीनो दूत बिदा करि होनी होय सो होय ॥

[५५१ अ]

तृ० १, च० १ :

आयो इत ठाढ़ो भयो नृप कुं बात सुनाय ।
जैसी बिघ निरखी सबै सो कही बनाय बनाय ॥

(१८१)

[११२ अ]

तृ० १, च० १ :

राम सरोवर पाल थे बोले गारि अपार ।
सेन सबै चहु ओर से बोलत मारहि मार ॥
सोइ करो सुहावणा बाजत येह रण जीत ।
हांकहि हाक प्रचारहीं मधु सो बहे न चित्त ॥

[१६३ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

जबरजंग गोला बर जैये । मदमाते मतवारे जैये ।
गज गीवाय गरजै धन मानो । सुनत रोल चिहुं दिसि भगानो ॥

[५६५ अ]

तृ० १, च० १ :

सषी हमारे कंथ कूं अचरज बडो बिबेक ।
एक ताकण लाष कूं लाख न कण एक ॥
बिलख बदन भइ मालती मधू न देषै पास ।
जीय धीरज धारे नहीं चितवत भई उदास ॥

[१६६ अ]

तृ० १, च० १ :

पांडव नारी द्रौपदी कीचक हरण के काज ।
भीमसेन देवल सरग से हूं कहूं सुन आन ॥

[१६६ आ]

च० १ :

ध्यान लगाये जो रहे अतोष मन देक ।
जुग अमत सब कूं कियो बच्यो न काऊ एक ॥

[५७० अ]

तृ०, १ च० १ :

गोतम नार सिजा भई इंद्र भये मंफार ।
ससि सराप माये भयो सुन ले बेरा परकार ॥

(तुल० छंद ५७०)

(१८२)

तब गौरी भीलन भई काम बियापे आई ।
राग अलापे आन के संकर ध्यान चुकाय ॥

(तुल० छंद ५७१)

काम अस मधु अवतरे ताको हणै न कोय ।
धीरज धर जिय राष दढ़ अैसे बहुतक होय ॥

[५७४ अ]

च० १ :

प्रदुमन (काम) अस अवतारी । याकी कला सब हूं ते न्यारी ।

[१८४ अ]

च० १ :

मृग कपोत संकट उबाख्यो । उन मुष सूं जब राम पुकाख्यो ।
न्यायहि हारै बिसहर पायो । सरसी जाय सिचानु लगाये ॥

[१८६ अ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १ च० १ :

बड़े उदूखी हसम नहा है । पख प्रवाह सिला सीमता है ।
जाड़े पाव वृच्छ से थर । अगुली मानु ढहे द्रुग कीजर ॥
(द्वि० १ का पाठ किंचित् भिन्न है)

[१९२. १ अ]

द्वि० १ :

नर बाजी कुंजर प्रसत न हारे । गज को कोर करत हक बारे ।
शंकर शक्ति कुमक पठाई । अधिक ऊपर केहरी आई ॥

[१९२ अ]

तृ० १, च० १ :

केसरी एक महाबली गिर समान भारंड ।
दल लरजो नृप चंद्र को भयो सोइ षंड षंड ॥
चीड़ी चुगै ज्यु ईलरी चंच भरी गटकाय ।
जैसे दोय भारंड बहे कुंजर कूं ले जाय ॥
चंद्रसेन चिंता भई कौन आचरज येह ।
भारंड सिंह गिल्लोख यह सो आन तुलाने तेह ॥

(१८३)

[५६५ अ]

तृ० १, च० १ :

देव चरित्र जाणो नहीं सब भागे नर बाम ।

चंदसेन मन सोच कर सो राजा छाडी ठाम ॥

(तुल० छंद ५६५)

[५६६ अ]

तृ० १ :

अब कछु मोक्ष मतो बतायो । प्रान जात हे मोहि छुटायो ।

मे तो राज काज मत चूक्यो । बिन बूझे रन मर्हि दुक्यो ॥

में तो कछु बूझो नहीं में जान्यो रन होइ ।

लरिका को कहा मारिबो सुनो सयाने लोइ ॥

लरिका तो देवत भयो हम ना जान्यो मरम ।

जो ताकी थी ओर पर सो परी हमारे करम ॥

अब तुम कहो सोइ मे करिहूँ । आज्ञा तोरि नाहि परिहरहुँ ।

तुम कछु मोक्ष बुद्धि बतावो । काचो मतो कबहुँ जनि भावो ॥

[५६६ आ]

तृ० १, च० १ :

अब कहा राजा हमकुं बूझौ । सादो कटक तो रन मर्हि भूझौ ।

कुमत करी भीम पछतानो । कौरव ग्रह गयो बिष षानो ॥

तैसी कुमत तुमको आई । तब चेते जब मूंड मां खाई ।

तब कहे राय कैसे बिष षायो । सो समयौ मोहि नाहि बतायो ॥

(मंत्री वाक्य)

सुन राजा मंत्री हम कहे । आदि पांडव हथिनापुर रहे ।

कौरव पांडव बिग्रह लागी । राजा मोह की उपजी आगी ॥

(केवल तृ० १ में)

[पांडव तो पांचे जने कौरव हते अपार ।

वे पांडव को मानै नहीं नित उपजावे रार ॥

उनमां भीमसेन बलकारी । ताके त्रास डरे गंधारी ।

कौरव सबही मत्र विचारे । भीमसेन को कौन बिधि मारे ॥]

देख्यो भीम महा बिख्यात । तापर कौरव रच्यो उतपात ।

सब पांडव मां भीम अति जोधा । कोउ नाम थमै ताको क्रोधा ॥
 कहो मन्त्र अब केसी कीजे । सोई कव्यो भीम अब छीजे ।
 सुकनि कहे सुनो मोहि बात । याकूं कीजे बिष की घात ॥
 बिष को भोजन करो सब साजे । याकूं नेवति जिवावो आजे ।
 बहौत हेत करि पेटा खेवो । ता पाछे तुम नेवता देवो ॥
 कौरव तो येही मन ठानी । भीमसेन सो भेंटे आनि ।

(केवल तृ० १ में)

[दुइ भेट बहु हेत बधाओ । जीय मां कष्ट जान्यो न पायो ।
 कौरव कहे भीम सुन लीजे । हम पे कबहुं दया करीजे ।]
 हम तुम भाई बंधु कुटुंबी । कहा राघो तुम छोटी लंबी ॥
 हम तुम काका बाबा के भाई । तामे तुम राख्यो हू जाइ ।
 एक ठोर मिलिजे मो आनी । कीजे प्रीत अधिक पहिचानि ॥

(भीम वाक्य)

अरे भाई तुम बंधु बिरोधी । हम तो बात जानत हैं सूधी ।
 तुम आगे लाष के महल बनाये । परपंच करी तुम तामो लायो ॥

(केवल तृ० १ में)

[हमको महल मांरु बेठाये । तुम कपटी सब बाहर आये ।]
 दुरवाजे सों दीनी आगि । कही नहीं निकसन को लागि ॥

(केवल तृ० १ में)

[हम तब ही पूछे सहदेव । उन कहियो जो ताको भेव ।]
 सुनो पीर जो पूछो मोहि । मारग में बतराऊ तोहि ॥
 ये जो मोटी सिला मढाई । ताके नीचे मारग आई ।
 एहि सिला ऊपर करि डारो । नीकस्यो बेग जीव उगारो ॥

(केवल तृ० १ में)

[जब तो वे हम षंभ उपारो । अगिन जरत ते जीव उबारो ।]
 अगिन हमारे पीछो कियो । जब हम कोल बचन तिहां दियो ॥

(केवल तृ० १ में)

[एक दिना तोही भल उपाउ । सब कीचक तोहि माहि जराउ ।]
 तब मारग होइ बाहीर आए । टोडा राक्षस हम ते धाये ॥

राक्षस कहे जान ना देहूँ । इतने मां इक मानस लेहूँ ।
 जब मैं सबकी बिदा कराई । सिर अपने सब मृत ठहराई ॥
 टोडे मुष पसाख्यो बडो । ताके मुष मे हूँ कूदि पख्यो ।
 टोड्यो जन सूँ कियो विचारे । यो तो पड्यो पेट मझारे ॥
 अब जल पीए वोड़ येही मारूँ । येह बिध कारज अपनो सारूँ ।
 राक्षस पानी पीवन लागे । ताको पेट फाड़ हम भागे ॥
 निकस तिहां थो बाहर आयो । भाई के कहु घोज न पायो ।
 दूढ़त फिरत परबत लौं आयौ । हिडबा तिहां हिंडोलो लायो ॥
 भूले तिहां दिवस अर रात । इन मोसू एक बोली बात ।
 भूलो एक देहि मोहि जाबो । नहि तो में कछु करु उपाव ॥
 तिहां हिंडोलो ऐसो दियो । मानो प्रवेस सुरग कू कियो ।
 हिडबा कहे थो बहुणी बार । में तुमकूँ करिहु भरतार ॥
 फूला तब में थंभ लीयो । चावो बेठी मतो में कीयो ।
 हमरे बहु घात भुलाये । तुस तो कछु जान न पाये ॥
 भाता तुमरो च्यारूँ बीर । उनकौ लगे पिता कबीर ।
 पूजा करे भवानी मात । तिहां चढावै मेरो तात ॥
 सुनत बात मोहि घोषो होइ । में तो चल्यो नगर मा सोइ ।
 केवल तृ० १ मे)

[उहां ते बात सबै सुन पाई । अति चिंता मेरे मन आई ॥
 तब में ऐसो करियो बिचार । जाय बैठो देवल मंझार ।]
 पूजा को पाथर मैं टारूँ । इउहा जाइ आपो बिसतारूँ ॥
 पूजा पकवान ले आवे कोष । तेतो भूषा भोजन होय ।
 पाछे पूजा राइ कराइ । हमरे बीर मात कूँ लाइ ॥
 जब देवल पै कीने ठाढे । माता कलाप करै अति गाढे ।
 इहां नहीं को भीमडो बीर । तो मारे बांधि दाखव कबीर ॥
 सुनत झूझ मन मों अति लागी । पख्यो कूद देवल के आगी ।
 पड़तो सोर भयो अति भारी । मानूँ गज गिरवर तें डारी ॥
 सारी सेन भागि जब गई । कबीर दानव सूँ भाथी भई ।
 राक्षस मारि छुड़ाए बीरा । तब माता को भयो मन धीरा ॥
 मै तो नारि हिडबा ब्याही । अरे भाई तुम हो दुषदाई ।
 हम तुम बीच हेत ना होई । तुमरी बात न माने कोई ॥

(केवल च० १ मे)

[तुम झूठे महा दागाबाजे । हेत किया सूं बिग्यास काजे ।
हम तुमारो बिसवास न करा । ओर बात नाही चित धरा ॥]

[५१३ इ]

तृ० १ :

सुनो राय दुर्योधना तुम सौ हित ना होइ ।

कपटी फंद बिनास की बात न मानै कोइ ॥

तुमारे डर हम बन षड लीनो । पुनि हम भेष ओर ही लीनो ।
संग द्रोपदी पांचे भाई । दुषी बहुत अपने मन माहीं ॥
बहुतक भूषो प्यासित होइ । बनफल खाइ बहुत दिन षोइ ।
तब हम बैठ एक मतो कीनो । बैराट देस को मारग लीनो ॥
कोउ भयो बिप्र कोउ भयो नाइ । कोइ भयो षवास कोइगहेसुराइ ।
आयुध सबै बिरछ पर धारे । एह बिधि सौ सब नगर सिधारे ॥
बैराट राय तिहां बड़ो नरेसा । उपमा कौन कहूं तिहां देसा ।
बैराट राइ सो भेटे जाइ । संग द्रोपदी पांचे भाइ ॥

सेवक होइ उनके रहे अपनो बरन छिपाइ ।

टेहल फरमाइ रावली सो हम लीनी उठाइ ॥

वाको सालो कीचक आहि । परम दुष्ट पापी अन्याई ।
देधी द्रोपदि सुंदर नारी । उन वासों कीनी ठगचारी ॥
आनि द्रोपदी बस मां कीनो । रुदन करम तब होत मलीनी ।
सबही मिल ताको समझावै । भेद बात उन माहि सुनावै ॥
जब में बात तात सो बोली । फिर के वो जब करे ठठोली ।
तुम वाको धीरज दे आवो । निज के ए असथान बतावो ॥

सुनी बात जब द्रोपदी मनमां लाई धीर ।

जा दिन दूनो रूप कर नौतन पेहरो चीर ॥

राजा निज मंदिर को आए । कर असनान सोइ पाए ।
कीचक ताके पासे आयो । देष द्रोपदी बहुत सुष पायो ॥
आस पास जब जाय निहारी । पकरी जाइ द्रोपदी नारी ।
आनि द्रोपदी पै कर डाल्यो । हम सुसकाइ अरु बदन निहाल्यो ॥

कहे द्रोपदी सुनो महिमता । ताकौ नाहिं लाज अरु चिंता ।
 तो कामी को लाज न आवे । मेरी कहा परतीत घटावे ॥
 जो तोरे मन औसी होइ । मेरो बचन माने नर लोइ ।
 बाहर नगर जो देवल आहि । आज रैन उहि बैठे जाइ ॥
 होइ रैन जब ही मैं आऊं । सब निस प्रीतम तोहि रिझाऊ ।
 बात मान कीचक सो कीनो । देवल माहिं आश्रम लिनो ॥
 तेल फुलेल अरु पान मिठाई । बहुतक फूल की सेज बिछाई ।
 षिन भीतर षिन बाहर आवे । मन चिंता कब नारी पावै ॥
 इहां द्रोपदी भीम सुनायो । भीम सुनत अंगार बनायो ॥

सिर सिसफूल बेंदी दर्ई नीथनी अधर अनूप ।
 कर्नफूल गले माल है चढ्यो चौगुनो रूप ॥
 छुरी चमकि अपार कर ककन पौचरी दर्ई ।
 नेउर को झनकार ले मुष चली सो कामनी ॥
 गज मराल मोहे सकल औसी चलत है चाल ।
 बने भई जब कामनी सबल भीत भइ बाल ॥

इह बिध चली सो देवल आइ । कीचक देश महा सुष पाइ ।
 मगन भयो कर सो कर लायो । भीमसेन जब अंग दिषायौ ॥
 पटक पछार हाड सब तोरे । भीमसेन मैदा कौ मोरै ।
 ज्यौ कुंभार माटी लत लावै । भीमसेन हम त्रास दिषावै ॥

कीचक मार पछारकर दियो भूमि में डार ।
 वाके उर ऊपर चढ़े सू पाछे कियौ बिचार ॥

कीचक पान मिठाई लायो । सो तो भीमसेन सब षायो ।
 येह विपरीत भीम उहां कीनी । फिर के सुध नगर की लीनी ॥
 कहे भीम अब केसी कीजे । माकू कहूं ठिकानो दीजे ।
 सिंध बाघ ले कोइ षावो । मो सिर अगिन भार रहावो ॥

अगिन भार मो सिर रहै कष्ट अकारथ जाय ।

हानि होय हम धर्म की वाचा को पतियाय ॥

इह बिध धर्म हान की होइ । वाचा नहीं पतीजे कोइ ।
 अगि न हम सो भलपन कीनो । लाषाग्रह जारत जिव दीनो ॥

भीमसेन मन समझ के कीनो एह बिचार ।

एक बात ओरे करूं ताते चले दुगार ॥

जब देवल को धंभ उपाख्यो । कीचक की छाती पर धाख्यो ।

कीचक ने मारी सुभ काजा । दोहरा एक लख्यौ दरवाजा ॥

मे माख्यो मैं मारियो कीचक पटक पछार ।

जो दोहरा मुह प्रमौ कहै सो ताको भोरही काल ॥

इतनी लषी मगर मे आयो । अपने मंदिर बैठ सुहायो ।

भोर भये राजा कहा कीनो । पूजन देव काज चित दीनो ॥

राजा देव मंदिर मा आयो । कीचक तहां मृतक सो पायो ।

राजा कहे सुनो रे भाई । यह अचरज किन कीनो आई ॥

राजा मन चिंता करे कीचक सुयो निहार ।

असौ जोध्यो किन हत्यौ मैं नाही पाय पार ॥

असै सोच राजा को होइ । हाहा करै नगर नो लाइ ।

जब राजा इत उत नीहारे । दिष्ट कहूं दोहरा पि पारे ॥

राजा दोहा बांछि मन मंत्री लियो बुलाय ।

मंत्रो सो राजा कहै सो याको अर्थ बताय ॥

मंत्री मन मां सोच बिचारै । जो मै पढ़ूं तो राजा मोहि मारै ।

एतो माकूं अचरज लागै । अब कहा करूं अछु न लागै ॥

मंत्री बात दई जो टारी । ए राजा अब कहा निहारी ।

अब तो याकी माटी छाजै । बेगहि राख दाग इह दीजै ॥

थभे तरे सौ कौन निकारै । ये राजा मन माहि बिचारै ।

बड़े बड़े जोधा पचि हारे । को बलवत सो ताहि निकारे ॥

जब कहे भीम मेरी मत कीजे । ये देवल मां चना भरीजे ।

जाके ऊपर जल छिरकावे । फूले चना निकस एह आवे ॥

भीम कहे सो ही करवायो । राजा अपने मंदिर आयो ।

रात्रि समे भीम कहा कीनो । वा देवल को मारग लीनो ॥

सब ही चना घाय के डारे । पकर टांग कीचक निकारे ।

भोर भयो राजा कूं सुघ पाई । कीचक की तब खबर मंगाई ॥

मानस एक देश के आयो । उन राजा कूं सब सुनायो ।

राजा कहे दाग तेहि दीने । अब छिन भर ढील ना कीजे ॥

बाकौ कौन उठावन हारो । अब याको सब सोच विचारो ॥
 भीमसेन बोले सिर नाई । मोकुं हे आज्ञा दीजै राई ॥
 सुनत राय जब आग्या दीनी । कीचक मोट भीम सिर लीनी ॥
 तब कीचक बाहि संग सिधारे । निकले दूर नगर से न्यारे ॥
 सब ले काठ बहु ले आए । कीचक को वहां दाग दिवाये ।
 अग्नि प्रजाल दाग तिहां दीनो । सब कीचक तीमे ए कीनो ॥
 पंच काठ देके सब चाले । गही गही बाथ भीम सब ढाले ।
 तीन में एक रहन सो दीनो । जीम तान के गूंगो कीनो ॥
 तब हम सबे राय पे आये । राजा कछु मनमां पछताये ।
 बोले राजा ओर कहा याइ । जब मैं उन से बात जनाइ ॥

ऐ मास यो गहे पूछ्यो याको राय ।

जेथी उहां बाढी बिथा यो कहे है समुझाय ॥

जब राजा पूछ्यो उहां लागी । बिन जिम्मा कहा कहै अभागी ॥
 हाथ फिराय मोहि बहरावौ । राजा सुन के अचिरज लावौ ॥

राजा कछु समझै नहीं उनही कहे निज बैन ।

मो तन कर बतराय कै करी नैन की सैन ॥

जब राजा मोकुं पूछ्यो आहि । याकी तो कछु जानी नाहि ।
 ये तो सत कहत है बैना । तुम नासमझे याकी सैना ॥
 जब हम दाग कीचक को दीनो । सब बांधव मिल परहेज कीनो ।
 बारह मोहि इनको मन आयो । कुद परे सब प्रान गमायो ॥

इत थांभु तो इत परे इत थाभूं इत जाय ।

या बिधि सौ सबही सुये राषौ एक समुझाय ॥

सुन कौरव तुम अैसे भाई । तुम प्रताप हमको दुषदाई ।
 अब कह्यौ तुमसो कौन पतियावै । सो तो अपनी जीव गमावै ॥

[१११ ई]

तु० १, च० १ :

(कौरव वाक्य)

अरे भीम बिनती सुन लीजे । मेरी बात चित्त मो दीजे ।
 हमारे मन माहि नही कछु दगो । तुम सूं दूजो नहिं कोइ सगो ॥

(केवल तृ० १ में)

[अगली बात दूर कर डारो । बहू काज्ज अपनो सारो ।
 तुम सो बीर कहाँ मे पाऊँ । तो को तो सिरमौर कराऊँ ॥
 मरी बान सकल परहरिये । येक बार हम घर भोजन करिये ।
 तब मेरो मनवा पतियावै । जो तुम मेरो भोजन पावै ॥]
 तुम हमसे सौगध करावो । ता पीछे हमकूँ पातियावो ।
 कौरव किशन की बाचा पाई । तब भीम मन धीरज आई ॥
 केतेक दिवस बाद मो बीते । कौरव मनमे और ही चीते ।
 अति कपट केरो मन धारी । भीमसेन सो बिनती करी ॥
 एक बात तुम चित मों राषो । हमारे बार उचीष्ट ज नाष्यो ।
 भीम भूष को आकुल पणो । कौरव घर गयो पाहुणो ॥
 उबटण लाये कियो असनाने । जिभवा बिष करिया पकवाने ।
 बिष दै करि घर माहिं सुवायौ । आपस माहैं मतो करायो ॥
 जो जानै है बिष की बातैं । तो मारे अपणो सब साथै ।
 हव सबके गन धोषो आयो । बाहिर निकसि किवार दिवायो ॥
 दे किवार अरु कलम दीवायो । जाय ओर ही महल बसायो ।
 उठ्यो भीम महा बिख्यात । व्यापे बिष तब जाणी बात ॥
 जाय जीव अरु टूटे आंत । कौरव साथ कुमारै हांक ।
 देषे तो उन भीड्या बार । तब करि रीस तोड्या किवाड ॥
 दासै देह केर अति चीस । पड्यो जाय सरिता के बीच ।
 व्यापौ बिष तब दीनौ प्रान । सुनै आगे ताको व्याखान ॥
 भई षबर तब व्यारु बीर । भीमसेन तज्या सरीर ।
 सुनत बात सब सुध बिसराई । एक बात मन धीरज आई ॥
 जुधिष्ठिर पूछौ सहदेवा । उन कहो जो तिसको भेवा ।
 या की बिष ते हूवो काल । औसे करो जो जाय पै जाल ॥
 नदी बहावो जतन जो करी । होय सजीवन वेही फेरी ।
 तब कंचन को पिंजरो कियो । गंगा सोत बहाई दियो ॥
 बहिवो होत नग्न पैयाले । देषो करनी दीन दयाले ।
 दोय कन्या बासुकि की सोई । नदी तीर दातुण को गई ॥
 आवतो देख्यो पिंजरो जदी । आपुस माहे बादी बदी ।
 बड़ी कहै भीतर सो लैहूँ । ऊपर सो मैं तोकूँ देहूँ ॥

नाग सकल सब मारिके अमृत पीयो अघाय ।

अैसी हो सौ भीम थे सो अब कहा कहू बनाय ॥

सकल नाग तिहां भागे जाइ । बैठे तिहां बासुकि राइ ॥
महाबली अैसी कोइ आयो । हमै मारि अमृत सब पायौ ॥
जब बासुकि अैसी सुन पाइ । जाइ गरुड सूं कहे सुनाइ ॥
सुनतही गरुड उठे ततकाल । एही बात अखिरज करपाल ॥
महारुद्र यक मतो उपायो । तिहां गोरी कुं तुरत बुलायौ ॥
गौरी अब कह्यु अैसी कीजै । अहित भीमसेन को लीजे ॥
तुम गाय होय के उठ भागो । मैं सिंघ होय के पाछे लागौं ।
गौरी गऊ भीम पै आई । सिंघ होइ सिव तास पर आई ॥
गऊ देषि भीम रिस पायो । गदा उठाइ सिंघ पै धायो ।
भीम पेट सिव पंजा छीनो । पेट फार सब अमृत लीनो ॥
भीमसेन जब गदा उठाई । सिव कहे भीम छाड़ दे भाई ।
कपट सरूप दूर उन कीनो । सिव गौरी होइ दरसन दीनो ॥
भीमसेन तब दरसन पायो । तब छिन हथिनापुर को धायो ॥
बधु सरब मेरे उर लाई । कुंता भेद बहुत सुष पाई ॥

[५११ उ]

तृ० १ :

मंत्री बिना बात करे न कोइ । तो ताके सिर अैसी होई ।
एतो हमकूं पूछग लागै । राजा मतो चुक गयो आगै ॥
जो तुम करी बात बिन वूझे । तो सब दल तुमारे भूझै ।
तुम अहंकार कटक का आणया । दल झुझाय बहुरो पछताणया ॥

[६०२ अ]

द्वि० १ :

एक रंग पीत कुसुभ रंग नदी तीर डुम डारे ।
हेत मीत सुभ लीषिये को दृढ होए संसार ॥

[६०५ अ]

तृ० १, च० १ :

राजा मन अैसी धरै कैही सुनो नहिं कोय ।
मंत्री मतो न जानहीं सुनो नृप कैसी होय ॥

(१६३)

[६१० अ]

च० १ :

अपने अपने लोभ में सब कोई रह्यो लोभाये ।
चारि पुत्र परदेस में सात समुद्र जाय ॥

(राजा वाक्य]

कैसे सात समुद्र गयो कैसे गरब किवाये ।
वैसे मन अति लोभ कर कैसे समुद्र बुढाय ॥

राजा मंत्री कूं बूझी औसी । लोभी साह भई सो कैसी ।
कंमे कर उन पुत्र बिरोधे । कैसे कर उन सायर सोधे ॥
कोण सें देस कोण अस्थाने । कोण नग्र ओ कोण से गामे ।
कोण सो धरम कोण सनान । कोण जात कोण वाको नाम ॥

(मंत्री वाक्य)

नगरी येक देस गुजरात । चंपावति नगरी बिख्यात ।
तामें सब बनिया को काम । माणक साह बखिया को नाम ॥
दरब अपार कमी कछु नाहिं । लोभ रहे वाके मन माहिं ।
लोभ करंता कबहुं न हार । नाहीं गिण्ये पुत्र परिवार ॥

लोभ करत हारे नहीं लोभ करत है आप ।

लोभे बंस बढ़ नहीं सो लोभे लागे पाप ॥

माणक साह घर पुत्र जो च्यार । त्रिया आप बढ़तो परवार ।
जेन धरम सब ज्ञान बिचारे । लोभ करंता कबहुं न हारे ॥

(तुल० इससे चार ऊपर की पक्ति)

भाइ बंध मिल सब सम्भाये । च्यारि पुत्र का लगन कराये ।
ज्यात सबी मिल व्याह न कूंआरी । संक्या धरे सेठ मन माई ॥
ज्वा दिन से अब व्याह मंडाख्यो । सो सब दाम कागद में लिखाण्यो ।
कौड़ी पैसा और रुपैया । लेषा राष जो मेरे भैया ॥
सगा सजन सब पाहुंछा आये । साहा जो आदर भाव बेठाये ।
वाना बेस ओर मंडप कियो । चीकसा मर्दन दूल्हा कूं दियो ॥

म० वार्ता १३ (११००-६४)

नार भरोसो जानि करो नार नबेलो नेह ।

बिगरे तो कुल षोवही सुधरे सपत लेह ॥

सासू ने च्यारि बहू कूँ बुलाई । सिष दीनी ओर पास बेठाई ॥
 सुनो बहू बात बचन मोहिं पालो । सुसंगत सू धरम मों चालो ॥
 साहा जी सेठाणी कूँ समझाई । मे लोघार मंदिर हू के माहिं ।
 पाये पीये सुष संपत पाले । सत तूँ कतहुं के मारग चाले ॥
 दोय दासी नित रह हो जुजुरे । च्यारि बचन माने भरपूरे ॥
 च्यारि बहू की सेवा कीजो । दासी मेरो बचन सुन लीजो ॥

परपंच करी पेहेली बिच्यारी कूँ समझाये ।

सासू की साथे गई सो मेली मंदिर भाये ॥

दूजो मंदिर रहेण कूँ मज घर अंद बीच ।

चौषडी च्यारूँ दिसा महल च्यांदणी बीच ॥

च्यारि षहू कूँ भीतर मेली । सेठाणी घर रही अकेली ॥
 भरे भंडार कमी कछु नाहीं । भीतर रहे कोउ सुष न देषाही ॥
 भीतर मेलि ताला हो देवाया । माणक साहा हिरदै सुष पाया ॥
 भबो भयो हो मिलो हो संताप । बैठ रहेगी मंदिर हूँ आप ॥
 षाये पीये की कमी कछु नाहीं । बैठ रहेंगी ये मंदिर माणी ॥
 कूप निवाण चौषंडी जो माहीं । बाग बगीचा बणे सब ताही ॥

न बिश्वासे बंस बृद्धि शत्रु मित्र कदाचन ।

भात से मन चिन्तानां पिता लोभं सुषं धनं ॥

बंस बिरोध कोउ हेत न करही । मित्र ऊपर मित्र जाय मरही ॥
 मातय बिना कोउ भूष न जाने । पिता सो लालच लेस कूँ जाने ॥
 सुनो चातुर अप बुद्धि बिचारो । पुत्र बिना सुनो परिवारो ॥
 दीपक बिना मंदिर रहे सुनो । बिना मंत्री सब राज अखूनो ॥
 सूचो नम्र जहां जल नाहीं । झूठी ब्रच्छ बबूल की छाहीं ॥

येते की संगत करे बिन माखो मर जाये ।

जौ जैसी संगत करे ते तैसे फल पाये ॥

बैठी मंदिर मों च्यारि उदास । दोय दासी हे उनके पास ॥
 कहे कयो सोवे दोउ करहीं । हर को नाम हिरदै मों उचरहीं ॥

करे असनान नेम धर्म पाले । सुसंगत सत मारन चाले ।
 ऐसे सत च्यारूं को रहिये । सुध कुल की उनकूं कहा कहिये ।
 ऐसे करत बहु दिन बीते । च्यारूं रहिये येक दे चिते ।
 येक कहे तो वे तीनो मानें । औ दूजाई चित मों नहिं आनैं ॥
 पूजे देव करें सब ध्याने । बंधो नेम सो येक ठिकाने ।
 सोहे सेज जपे हर नाम । रात दिवस भजन सूं काम ॥
 घडी येक मंदिर मों सुष पायो । पति बियोग हिरदै मों आयो ।
 सुनो सषी आपनो बिच्यार । धूम जीबो अपनो हो ससार ॥
 कौन दिवस हो जनम दियो नाथे । लिषे लेष अब कोन कि साबे ।
 च्यारूं जनम दिवस येक पायो । येकी लेषण करम लिषाबो ॥

किन से मुंह भर बोलिये किनसे करिये रोस ।
 करम खिलाड़ी आपणी सो दैव न दीजै दोस ॥
 च्यार सषी सुज सेज मों रोवै नैन असेस ।
 अब करता कैसी कीबि सो आपनि बारी बेस ॥
 बालापण मों नीपजी पिता दीबि परनाथे ।
 सजन बिना सुन हो सषी जोबन अहेला जाये ॥

दुवो दिवस हर सुमरन कीमो । फुनि महल चादणी चित दीनो ।
 च्यारी मिलि बैठी येक ठामे । हर का सुमिरण सूं नित कामे ॥

च्यारी च्योबारां चढ़ी रोवै नैन असेष ।
 संकर तुम किरपा करो सो उमिषा नाथ लमेष ॥
 च्यारी भिल चरन पड़ा सदा तुमारी दास ।
 सुष संपत देख्यो नहीं सो मन मों मोटी आस ॥

सुरे नैन जो मोती रुंर लगी । संकर ध्यान सूं सकती जागी ।
 जागे सिव जब सकति यूं कहिये । चलो स्वामी जुग को सत लहिये ॥
 सिव पारबति उठि के जा ध्याये । कैलास छाड़ करि जग महं आये ।
 जुग महं सत राखे कोइ अपणो । झूठो जग दिन च्यार को सपनो ॥
 च्यारूं रोवे घडी हू न सोहावे । आंसू पडे छाति भरि आवे ।
 ऐसे करत दिवस ब जाये । सिव पारबति तिहां निकसे आये ॥
 सकती रूप सकल हूकी राणी । इन च्यारूं की मनहू की जाणी ।
 रंभा रूप सोहंती नार । जोवन रूप काम उणहार ॥

सती रूप च्यारू सुयो औसी । जोवन रूप वे बाली वैसी ॥
 रोवत आंगू धरनि पर डारे । सकति देष ऊंच्यो नीहारे ॥
 बादल बरवन अमर भरत । बिना वर्षा यो पानी परंत ॥
 देखी सकति त्रिया दग जैसे । रोवति देषी रंभा रूप तेसे ॥
 देखि त्रिया च्यारि करना हो आई । सकती सिव कूं बचन सुनाई ॥
 सुन हो स्वामी बचन चित दीजे । इनहूं को दुष दूर करीजे ॥
 सुन सकती जुग रैण अंधारो । कहूं बचन सत मान हमारो ।
 अपने काम कारण जन रोवै । फेर बात माने ना बोवै ॥
 जुग मों औसी सदा नित होय । पारबती पाछे मति जोय ।
 चलो कबिलास अब विलस न कीजे । मेरे बचन सवन सुनि लीजे ॥
 सुनो इन को दुष दूर जो कीजे । पूरण कृपा अनुग्रह कीजे ।
 येह च्यारी हैं आज्ञाकारी । इनकू दुष बहुत है भारी ॥
 तुम इनको दुष दूर मिटावो । तब स्वामी कबिलास मों जावो ॥
 औसो हठ पारबती ने कीनो । उनहू को दुष दूर करि दीनो ।

से [हे] जे. सुष पायो सही सिव जी मिलिया आये ।

संकर सिर ऊपर भये सो दुष दाखिद जाये ॥

सो बं उंचे सिव बचन सुनायो । पल मात्र मो प्याल दिषायो ॥
 लिखकर सिव सकति नहो दीना । सिवका बचन कंठ करि लीना ॥
 नाव काट किम भव जल तारे । देष तमासा या जुग मंझारे ।
 पै उपदेस गये कबिलास । च्यारूं मन को भयो हुलास ॥
 पड़ी साम तब देषे जाई । अगर चंदन को लकड़ पड़्यो ताही ॥
 ऊपर बैठि सिव सबद सुनायौ । अगर चंदन पर दीप दिषायौ ॥
 रतनाकर सागर भरपूर । बसे नग्न ह्मां चकनाचूर ।
 पड़ी जहाज कछु गिणत न आवे । मोती मूंगा की कौन चलावे ॥
 देवी देव बसे कबिलास । भरयो नग्न जाणे बैकुंठ बास ॥
 देखि त्रिया दुष भागो हो सबहीं । औसो नग्न है देषो न कबही ॥
 देखि नग्न भईं छुसियाल । रंभा रूप अनोपम चाल ॥
 च्यारी गहे नग्नहे मंझारे । देष्यो भाव नग्नह मों सारे ॥
 च्यारि त्रिया कूं देषी सहनारे । की आरती ओर हरष अपारे ॥
 कुमकुम केसर उबठ नहाई । मथै तिलक करी हो बदाई ॥

सारो दिन दरसन कूं लजाये । सहाज समें उनकूं पोहोचावे ।
 अैसे करत दिबस दिन जाये । भोत घुसरे त्रिया मनहि के भाये ॥
 नित लठि सेठ चौषडी मो जाये । करे दुवारी गउ कि हो आय ।
 छोडे गऊ गुवाल ले जाये । माणक साह घुसी मन भाये ॥
 मै निज देखूं चंदन की ठान । चित चौकानो मन कीनो ज्ञान ।
 या चंदन कूं कोन उठावे । याको भेद अब कोन बतावे ॥
 भेद छेद किनसे लहूं किनसे धूंछूं जाये ।

अब मन धीर बिच्यार के रहूं रैख या माये ॥

रह्यो रैख मन माय विचारी । सांभ समे वे आवे नारी ।
 सिव सिव करके बचन उच्यारे । गयो अग्र समुद्र के पारे ॥
 टापू माय उतारे जाई । पडी जहाज कछु गिणती नाई ।
 हीरा जुवाहर पदारथ पाये । भर जीवा सब दरस भराये ॥
 पढ्यो है दरब कमी कछु नाई । भाग लिख्यो सो सबहू कूं पाई ।
 देस देस के महाजन आये । होय लेषा कहा जहाज भराये ॥
 बैठे ग्रहे सहुकार स धीर । पढ्यो है दरब समुद्र के तीर ।
 आपणी आपणी हृद जो बखाई । मरजीवा वाहा धीर धरि जाई ॥

लाल पदारथ रतन बहु मरजीवा धरि जावे ।

अगर चंदन सुं निकति मूरष देखे जाय ॥

च्यारि गई हे नग्र मो कुल अपने अस्थान ।

मूरष रह्यो येकलो वा टापू के माये ॥

च्यारि आपने गही मुकाम । मूरष रह्यो उने मेदान ।
 निकलि करि जब बाहेर आयो । रतन पदारथ भोत वाहा पायो ॥
 लिया पदारथ हीरा औ लाल । बांध्या गांठ हुवो घुसिहाल ।
 मोती मूंगा मोलका लायो । मन झाहती सो सब कछु पायो ॥
 माल लियो अगर मो पैटो । मन हरष वा हूंछ्यो बैठो ।
 अब मन हरष भयो घुसिहाल । जनम जनम लग हूवो निहाल ॥
 येतने सांभ पडी च्यारूं आई । मन आनद हूंछ्या पाई ।
 बैठ अगर पर सिव बचन सुनायो । पल मों बेगि मुकाल पर आयो ॥
 कियो बसेरो मुकाम पर आई । निकल्यो गुवात बेगि घर जाई ।
 मन आनद कछु कहत न आवै । माता भोजन बेगि बनावे ॥

दियो भोजन सुष भयो रस धीरा । फेर जाइ गड छाडे अहीरा ।
येक दिवस गड चारन जाये । दूजे दिवस रह्यो धरहु के माये ॥

जिए घर माया पाउणी जिन सूं सब कुछ होय ।

नैन नजर उठी रहै येह पटंतर जोय ॥

घर में बैठो कमी हो कछु नहीं । करम लिख्यो सो नव निधि पाई ।
बन्धी गऊ सो सठे दुष पावे । दाम न घरचे गऊ भूष मारे ॥
अैसे करत दिवस येक जाये । दूजे दिन सेठ वाके घर आये ।
क्यूं रे मस्त हुवो मद मातो । गऊ चरावन क्यूं नहि जातो ॥
अब मेरे मन माने सो करिहूं । अब मेरो मैं उदिम करिहू ।
तेरो कह्यो अब मैं नहीं करिहू । मन माने सो ही चित धरिहूं ॥
रह्यो अचकाये बोल्यो अब अैसे । जावो सेठ आपने घर बैसो ।
खुसी पडे ताकू देव गुवाली । मैं मेरो दीयो बचन जो पाली ॥
गयो सहकार सेस भरि ताई । मन मो क्रोध कछु कही न जाई ।
अब मैं याका लछन पाऊं । तो याकूँ हूं सीष लगाऊं ॥

कियो पसारो गुवाल ने माणक मनि भरमाये ।

रषे षजीन बीच से मूरष यो ले जाये ॥

साहूकार कमी कछु नहीं । माणक साहा मन भ्रम भुलाई ।
सीतल बैन बोल मन दीजे । सुन मूरख अैसे काम न कीजे ॥
आव दुकान बचन चित दीजे । तेरी मेरी पाथी कीजे ।
लेवो दरब कमी कछु नाई । अब तू मेरी देश कमाई ॥

दगाबाज सब से बुरो कान लाग मत लेह ।

पहिले थाग बताय के सो पीछे गोता देय ॥

अैसे कर कर पेटे लियो । ले पेटे ओर घर माहे लियो ।
या हलको ते देहको पाठो । करइ मरड कर बांध्यो काठो ॥
ले चाबुक और त्रास बताई । कह रे माया काहू से पाई ।
उलटी बोल न त्रास बताई । मेरे घर को ते दरब उदाई ॥
बचन सुनत तब सुष सूं बोल्यो । अरे मैया मोकूँ राय ने दीयो ।
येह चंदन तेरे सुष आये । या मोहे बैठन को लागे ॥

आ मों बैठ पर दीप मो गयो । करता कम लिप्यो सो दिबौ ।
 मोरी ठाम कमी कहु नाई । हीरा माणिक वाही के माहीं ॥
 सुनत बचन त्रिव लालच पाये । थैला लेकर वाको भरायो ।
 अरे भैया भली बात कही ही । सुनत वचन वाको छोड़्यो तबही ॥
 साहा जी आयके बासो कीनो । साज पड़ी त्रिया ने चित दीनो ।
 सिव के बचन ऐसे मन पाये । उडि चदन परी दीप मो जाये ॥

माणक साहा मन लोभ भो गयो समुद्र पार ।
 त्रिया च्यारि सुष मंदिर गई या मन हरष अपार ॥
 लोभ पाप को मूल है बोवे जग ससार ।
 धरम कीज अब पुन है गुरुगम ज्ञान बिचार ॥
 करनी करे सो क्यूं डरे कर कर क्यूं पसताय ।
 बोवे बीज बबूल का सो अंब कहां सूं पाय ।

च्यारि मंदिर गई वे नारे । साहा जी रह्यो टापू संभारे ।
 भर थैला भीतर हो दीना । ता पाछे साहाजी बैठन कीना ॥
 हीरा मोति जवाहर नग सारा । भत्यो दरब आनंद अपारा ।
 चुपको बैठ्यो रह्यो वा माहीं । सांभ पड़ी त्रिया चल कर जाहीं ॥

भत्यो बीज अब पाप को लालच बुरी बलाय ।
 बैठे ऊपर मंत्र कह्यो सो अब उड़यो नहि जाय ॥

उड़े नहीं जब कल्पि वे नारे । सिव को बचन कियो उच्चारै ।
 अब सषी चिता भई मन भारी । आप हासि अरु कुल हू कूं गारी ॥
 भीतर माणक साहा यूं बोले । सुनो बहू मेरो बचन अमोले ।
 बचन सुने मन लज्जा पाई । लाज करी सो आ गुन आई ॥
 सिव सकती तीनि बार संभारी । अहो देवि पत राष हमारी ।
 सुनत बचन घड़ी ढील न कीनी । ततकाल सकती षबर जो लीनी ॥
 उड्यो अगर सकती बचन सुनाये । ततकाल पड्यो समुद्र के मांये ।
 माया सहित डुबे तेही बारी । च्यारु सकतिन लीनि उबारी ॥
 गई मंदिर मों भोत सुष पाई । सकती गई कबिलास के माहीं ।
 दिना दोष में वे च्यारु आये । नारी निरष भोत सुष पाये ॥

पाष पुन्य दोष बीज है बोवो जुग संसार ।
 पापी बूढ़े मध्य में सो धरमी पेले पार ॥

(२०२)

सुन राजा पापी समुद्र बुझायो । औसो लसकर सबते षवायो ॥

[६१२ अ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

जौरे भले बुरो पन होई । तौ पुनि पाप करै सब कोई ।

चतुर होय नृप बूझे जियकी । तू दूजा नर लागे नीकी ॥

(द्वि १ मे प्रथम तथा चतुर्थ चरणों की शब्दावली कुछ भिन्न है)

[६१२ आ]

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

इस मंत्री कूं सब कुछ दीजै । ताको दुचित्यौ कबहु न कीजे ।

जंसे अजवायण घृत भीजे । तैसे मंत्री सब ते गीझै ॥

देखो स्वात कौन बुंद बरसे । देखो अजवायण घृत परसे ।

पिंगल भंत वृषभ ते तरसै । सुणो बात तुम औसी दरसै ॥

बहुत बचन कहाँ लू कहिये । जो जायै तो मन मे गहिये ।

जब बूझी होय झूठी सांची । मंत्री बिना मतलब सब कांची ॥

[६१२ इ]

द्वि० १, च० १ :

बसुदेव नंद गोप ग्रह बासी । प्रगटे राम क्रसन अविनासी ।

माया सकल माहि बिस्तारी । औसे करि भुइ भार उतारी ॥

(प्र० ४ और तृ० १ में यह छंद ६२८ के बाद आता है)

[६१२ ई]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

देव चरित्र कोई अंत न पावै । तू तो नृप कछु और ही गावै ।

मधु मालती नहीं नर देही । एक प्राण प्रगटे तन बेही ॥

(तुल० छंद ६२८)

कोटी मध्ये कव संग्रहै । कहा वाको कछु संत कर ग्रहै ।

देव चरित्र कोउ अंत न पावै । तू जनि जानि जिय मैं अम कछु आनै ॥

(२०३)

[६१२ उ]

द्वि० १, तृ० १, च० १ :

ये देवन को भाव बात बनाय केतिक कहूँ ।
मानस को न सराह देव अंस बिन कोउ नही ॥
ना ऋषी कुरुते काव्यं ना रुद्रो हेम कारिकं ।
ना देवांश भवे शूरा ना विष्णुः पृथ्वीपतिः ॥

ऋषी बिना कोउ काव्य न करही । लक्ष्मी अंस रुद्र तिहां धरही ।
क्रसन अंस सोइ राजा जानू । देव अंस पढ़े नहि सुरा मानू ॥

(द्वि० १, तृ० १ में अंतिम दोनों चरणों की शब्दावली कुछ भिन्न है)

[६१४ अ]

तृ० १, च० १ :

सुन मंत्री में इतनो लहूँ । बिधना की बात कहाँ लूँ कहूँ ।
सकल कर्म दह लिषे प्रणन । तामें कौन मिटावे आन ॥
जो मधु नीक करी कहु आले । तो सब दल को कीयो पैकाले ।
औसे बचन राय समुझावे । तब तारन नृप को शिर नावे ॥

[६१५. १ अ]

तृ० १, च० १ :

उन दल को सुमार बतायो । दूजो पाहरू देख्यो आयो ।

[६१५ अ]

च० १ :

कहा सुमार कछु कहूँ अनेरी । दीसे से सब काली धोरी ॥

[६१८ अ]

तृ० १, च० १ :

सिंह ठाढो गरजे घणो दल घेत्यो सब आज ।
मूसा पाले बिलावडी ज्यूं घरहा घेरे बाज ॥

[६२५ अ]

तृ० १, च० १ :

हुत्रं प्राप्त कगी भवां दुषतरी सुबुध रार्थ पुरीं ।
पापस्तापहरी प्रबोच सचरी चक्रादि मो सुदरी ॥

(२०४)

आनंदाद घरी यं धर्मधाम नगरी या पद्म विद्याधरी ।
चंचल शुभ मति शिवाधरी तेजस्वरी शंकरी ॥

[६२८ अ]

अ० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

कुदन पुर भीमक सुता देवी रुकमिणि बाल ।
हरी हरत हारे असुर सेन सहित शिशुपाल ॥
सुर असुर पन्नग मिले सिंधु सुता के हेत ।
दधि बिलोय हरि लै गए तेरह रत्न समेत ॥

[६२८ आ]

द्वि० १ :

बांभन गयो बलि ठामे दधि बांध्यो भव राम ।
धेन चुराई गोप संग अैसे रूप मधु काम ॥

[६२८ इ]

तृ० १, च० १ :

ऊषा बाणासुर घरे प्रदुमन कृष्ण कुमार ।
सपने मिले संयोग से वाकी यह घर बार ॥
देव अस मानुष मधू ईश्वर के अवतार ।
याके सरभर कौन है भूले मत संसार ॥

[६२८ ई]

अ० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

ऊषा धीय वाणासुर घरे । ले राषी सत खंड धौलहरे ।
जतन किए अति देवन के डर । पै जाकी ताकी ताके घर ॥

[६२८ अ]

अ० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

बग मैं हंस दुख्यो नहिं कबहूँ । जाखैं नहीं पटंतर तबहूँ ।
सुता जाखि हुय बिभ्रम दौरे । देवे दूध छाछ दोड धौरे ॥

हंस श्वेतः बकः श्वेतः को भेदो बक हसयो ।

चीर नीर परीचाया हंसो हंसो बको बकः ॥

हंस स्वेत बक स्वेत है तक्र स्वेत पय स्वेत ।

परै माम लै जाखियै सिंघ स्याल इक वेत ॥

बायस ग्रह पिक अड दुराये । बाढ़े 'तौ लुं भेद न पाए ।
फुनि न्यारे न्यारे उड़ि चरै । अपनी अपनी ज्यात न दुरै ॥

[६३१ अ]

प्र० ३, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

लोकाचार न कीजिह तो लुं कुन पतिआइ ।
लोक लाज ते सब करे कहा रंक कहा राव ॥
मरबे तैं कोउ न ढरे जौ मूये जस होय ।
अपजस जीतब जनम लागि बुरे कहें सब कोष ॥

(तारन वाक्य)

तेरो कछु दूषण नही बिध के खेल अक ।
गाए सो फेरि न गाइए अब त्रप नीर न मत्थ ॥
जल बाधे पंडवन बधे प्रबल गगन मुख दुद्ध ।
जेसो जेसो करम बढे तेसी तेसी बुद्ध ॥
बल पौरिष बोहत निरबहिये । लखे क्रम सोई फल बहिये ।
मये उदधि हरि तषमो लहे । हरेक कंठ हलाहल रहे ॥

(राजा वाक्य)

सुनि तारन तैं भली बताई । जो कछु लखे होत सो पाई ।
जब अब हासी बुरी अब लागे । अनते ज कहुं मुंह आगे ॥

(तारन वाक्य)

तैं मुख ते बनिया कहे अब बनिया क्यु होय ।
अब बनिया ऐसे भइ बनी बनाई दोय ॥
दोय बनरी एक बनरा बन्या । ता में एक ब्राह्मण की कन्या ।
राजपूत द्विज बनिक बिसेषी । त्रिकुट मिले तहां कहां कुल पेसी ॥
देवन कोऊ भेद न पावै । तू तिहां बनिया बार बतावे ।
बल पोरिष आ कारन बुझै । इतनी भई तोर काहा सूझै ॥
कंकर पत्थर परषिए मन मानक नी जात ।
हलत चलत गज परषिए थूं सूरन की बात ॥

[द्वि० १ में अधिक :

दुष की नाटिका कहे देत बिन बैन ।
प्रीत दुराई ना दुरै सुमन कि जारी मैन ॥]

हूब च्योपरी घोरो डसही । नीस्वारथ चार वीच्यारही ॥
काठी खडग धाय के मारुं । कैसी कार बंध काटि कै डारुं ॥

(वेगा साप वाइक)

अघ मूवो वेग्यो भन्यो फूनी सती छोरे सोय ।
सुनि पंथी पंनग कहै चारु (चारो) हते न कोइ ॥

(उरगना वाइक)

अहि नाहर गज सरप को वैन चित्त न धराए ।
जगन पतीजै तास कूं मूए देषि डराइ ॥
पनग तणै पटंतरे जग नाहर मम कंध ।
बेस्वा पदहम नागरी पोहवी पूरष समर्थ ॥
वद (वेद) विहाय मंत्र तस सतगुर के उपदेस ।
अही सरप मरजाद बसि सब श्रवनी सिर सेस ॥

जे सत्य हेत आहि सिर श्रवनी । मथो सीधु ताहि तेता कवनी ॥
नारायण ताकै सोइ आसन । जो कोउ लहै कहै सोई चासन ॥
तैं तो मोसूं इह भलपन कीनो । मूये को अपजस नही लीनो ।
अब हुं मरत मरत जस लेहुं । तो कुं बहुत द्रव्यौ मैं देउं ॥
एह बांबी तेरे मुह आगै । तामै सरप अहो निस जागै ।
कनक रजत तास पर बैठो । क्रिपण काल रूप होय पैठो ॥
पाथर लो घर में धन त्याए । कीहुं दीयो न आपन षाए ।
धीय न पूत बैहन न भाई । मर कर जोनि सर्प की आई ॥

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

माया सगत्रि (जि) मन धरे बिलसी कबहुं न ऊम ।
तासे जिव तन मो रह्यो सरप भयो ते सूम ॥
सुन पंछी पन्नग कहे पानी तातो डार ।
कनक कराही इच तले सो निकले मोहोर अपार ॥

पंथी एक मो बुध्य सुन लीजे । बांबी कूं तातो जल दीजे ॥
साप भरै अर भीतर भीजे । तब तू द्रव्य काहि कै लीजे ॥

जा धन पर पंनग रहै सुगता कुंजर हृत्थ ।
मृगमद नाभि कुरंग के सो जीवत न आवै हृत्थ ॥

(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)

राम नाम रसना रटति देह प्राण अस्थ ।
पंथी सूं उपगार करि छोडे प्राण समस्थ ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

ओरगने मन चितियो कौन करेही उपाव
अचरज बात जरे नहीं नृप सुन ले जाय ॥]

पंनग पता के बंधे जो न्यारे । उरगना सब बात विचारे ।
इन तो मोक्ष भरम भुलायो । सुपनातर सो मोहि फसायो ॥
बड़ी कराही कहाँ तैं लाऊँ । दस पषाल पानी ओटाऊँ ।
इतनो सामो जब करि पाउँ । तब सो जल बाँबी बूँ नाऊँ ॥

सती नाहर केहर करज पनग लये गरत्व ।
सुर सुरन मृगमद ए जीवत न आवै हृत्थ ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

केसरि केस भुअंग मणि सरन सिंह को लेह ।
सती प्रीत त्यूँ को लहै सो येह जान चित देह ॥

केसरि केस कौन छपै भाई । मनि पंनग को लियो न जाई ।
सती परोवर अगन समाना । निरषे जाको जाये घेयाना ॥
जंगल मों बाँबी षोदाऊँ । हेम चुराय मैं कहाँ छिपाऊँ ।
नृप सुने तो खेन न पाऊँ । अब मैं सूधो नृप पे जाऊँ ॥]
एह आरंभ मो पै नही होई । राजा बिना न खोदै कोई ।
ए सब बात त्रपत सुनाउँ । मेरे भाग लखो सोह पाऊँ ॥

(बाबी का सरप वाइक)

उरगना की बातै पंनग नै सगरी सुनी ।
बाँबी नृप क जान सन्मुख होय बोलो फुनी ॥

म० वार्ता १४ (११००-६४)

[तु० १ मे अधिक :

मे किह कारन बोलियो बात करत भयो पाप ;
बांबी मां सु निकर कर बाहिर आयो सांप ॥

च० १ मे अधिक :

दूध मलाइ के दोइषै बु छत्री तुरी हराय ।
नर्क लोक कूँ सचरै सो तिसा ताल कूँ जाय ॥
पर घर मूसी देख ले अपने मन राषे मनि ।
सुनो हमारी बात चुगली तुम कहि हो जनि ॥

तु० १, न० १ मे अधिक :

उरगाने औसी चित धरिहै । बांबी सर्प कहा उच्चरिहै ।
सुन पंथी मैं मन की कहूँ । बचन एक तोही मै लहूँ ॥
तुम्हि भावे तो करूँ उपगारे । दूध अहार भरूँ भंडारे ।
कहे सर्प सांची है सोइ । पन अब सभाव कहां लौ होइ ॥

रस पुराणि मर्माणि जे घदंत नराधम ।
ते नरा प्राण संदेहो वल्मीको विमिको अहि ॥

(अन्य प्रतियों मे यह छंद बाद मे आया है)

च० १ मे अधिक :

सुन पन्नग जब बोले बानि । ये तौ भई मलियापुर को कानि ।
तब पंथी तू नाग कहाई । हो परतीत मेरे जिव होई ॥

तु० १ च० १ में अधिक :

(उरगाना वाक्य)

केसो नगर केसी होइ बीती । सोही प्रसंग कहौ सुक सेती ।
सुनि प्रसंग जिय मों सुष मानूं । ता पाछे बिचार जिय ठानूं ॥

(बांबी के सर्प वाक्य)

कहे पन्नग पंथी सुन लीजे । जो बूझे तो बचन सुन लीजे ।
मलियापुर मां भई है जेही । बात सुनो तो कहूँ सनेही ॥
चगर मलियापुर हरदत्त राय । सूतो पेखियो सेज बिछाय ।
तिहां नागन एक गर्भ सुं रहे । भई प्रसन्न बालक संग्रहै ॥

भागो येक षातो जब जान्यो । सूतो राय सुष माहिं समानो ।
 पीवे पवन बड़े अति देहे । धीन रोग बदे राजा की देहे ॥
 अति घने देश के बैद बुलाये । निकाल रोग काहू ना पाये ।
 अति दुष भयो बहुत ही राय । येक दिवस आहेके जाय ॥
 प्रान सुषना उपजे अंग । रहे रैन बन तेही प्रसंग ।
 निस निद्रा वस भयो है राय । बांबी सर्प निकस्यो तिहां टाय ॥

ढोलो बड तले राजा पौढ्यो आप ।
 बांबी सर्प जब बोलियो सुबद सुनो उन साप ॥
 उतते बोलो बांबि को उदर सर्प सुनु कान ।
 नृप रूपेउ निबेरसे मुष मां बैठो आन ॥
 आस पास बातां करे होने लगी निदान ।
 येही बात चित धार के सो मंत्री दीनो कान ॥

राजा सूतो नींद मंमारी । पाछे मंत्री बहु बुध सारी ।
 सर्प बांबी से बोलन आयो । नृप उदर से वे उठि धायो ॥
 सुनतहि बचन उदर ते निकस्यो । आस पास पर बिग्रह पस्यो ।
 नाहीं सर्प तू मूरष नानी । राजा कूं दुष देहे अग्यानी ॥
 जे कोइ बैद मिले रे भाइ । चूनो घोल पिलावे राइ ।
 मृत होइ अरु ठाहर छांडे । पुनि बिग्रह तू का सूं मांडे ॥
 धरमी बहोत तहां सुष पावे । इन बातें जिय काय गमावे ।
 उदर गंध बैठक कहा करही । सबल सुष जीव परिहरही ॥

(उदर सर्प वाक्य)

उदर सर्प कोप जो करही । कनक कराही तले दे रही ।
 तातो तेल कर डारे कोही । सगरो माल ले जावे सोही ॥
 धन बल तोहि बोल ना आवे । मिलै न कोऊ बैद बतावे ।
 कृपन सुबरन देश भुलानो । मो कूं बोल बचन कियो सयानो ॥
 मंत्री दोउ बात चित दीनो । प्रात भई तब गवन ग्रह कीनो ।
 राजा तलफ मरे तिहां बारी । चूनो मंगाइ मुष में डारी ॥
 तलफि सर्प मूवो तेहि ठाई । राय रोग सब दूर नसाई ।
 सौ सब भाव कियो परधान । चित मां आन्यो वोही ग्यान ॥

तातो तेल उन डाल्यो जबही । माल धन सब ले गयो तबही ।
यह सारो तब बीति गयो । गायत्री जप मंत्री कह्यो ॥]

केवल तृ० १ मे अधिक :

त्राहि त्राहि मंत्री कहै बडो कमायो पाप ।
राजा के आनंद भयो यो करत संताप ॥
कर्म लिख्यो सोही सो उरगानो राय ।
मंत्री पन्नग मार के मन पाछे पलुताय ॥

केवल च० १ मे अधिक :

पुरुष पुरुष को वित्त जादिन कबहू न भूपति ।
नृप के प्रान हतान बाबी के उदर सर्प ॥

तृ० १, च० १ मे अधिक :

वे जाने मेरो प्रान उषारुं । बिग्रह काज भयो सिधारुं ।
जो कोई बिग्रह करिहे भाई । अपने ग्रह मे समुझो जाई ॥
येते पर कोई बिग्रह करिहै । तो फुनि राजग्रहे पाव न धरही ।
येह कथा पंथी जब बोल्यो । रह्यो सरप बदन मुष तोल्यो ॥

अैसी कोन कराइये बिग्रह बड़े बड़ाय ।

नृप दुआरे का लहे समझ आपने भाय ॥

तू रजपूत राज बड धनी मंत्री मिलावो तोहि ।

नृप दुआरे जाइके जनि हत्या सिर लेहि ॥

मोहर येक दिन प्रति देहूँ जो सहजे चित लाय ।

तेरे हाथ कछु नहिं केर चुगली कहा पाय ॥]

राजपूत जो चुगली करै । घोरो जो फूहारा धरै ।

रजक बराबर तन कू धरै । अस नही बात बिस्तरै ॥

(यह चौपई प्र० ३ मे नहीं है)

जो घोरो फूहारा करै चुगल होय रजपूत ।

वह जननी गधहा लग्यो वह बनिया को पूत ॥

सो रजपूत राखि रज तेरी । मत चाडै सर हत्या मेरी ।

करुं बीनली जो चित आनू । हुं जाखुं कै तुमही जाखु ॥

[तृ० १ में अधिक :

चुगली माहिं नाहिं कइ पावै । ये सब बात जाय सुनावै ।

सगरो माल नृप ले जावे । तेरे हाथ कछु नहिं आवै ॥]

एक मोहर मो पै नित लीजै । दया दान मो कुं जिय दीजे ।
पीठी लग तोकुं पुहुचाऊ । जो एह ठाहर रहबे पाऊं ॥

(उरगना वाइक)

जो नित को सो नहयो पाउं । तो काहे कुं बाबी घूदाउं ।
दुध कटोरा भरि निति लाऊं । तेरो सेवक सदा कहाऊं ॥

[प्र० १, २ मे अधिक :

असै बात करी उन तइया । मोहै परष्यो लाग्यो दर्इया ।
मे इन कू जातो नही तेख्यो । फिरै कवच न मो ऊपर फेख्यो ॥
अब तो ईसी बुधी उपाउ । कही ककरि कै फुरसत पाउ ।
माया सुपी काहा दुष दर्ई । मरन सामग्री मो कू भई ॥
अब तो चिंता बोहोत उंपनी । किहि बिधि बातें अब करनी ।
जो छछुंद्री सापै ग्रही । खेत न मेलत बात न परही ॥
हरि हरि बुध्य मो असि दीजे । बगर विचार्यो काम न कीजे ।
उरगानो लोगो मोहे पिछै । मेरो द्रव्य लेन कुं अछै ॥
कहुं तो रहे न सकुं इह भाई । स्वर्ग अत्य पाताल जो जाइ ।
जिहां जाउं तिहा धन के लागुं । हर पै कौन आग्या मांगू ॥
समरन करी हुं रात दिन तेरो । ऐ हे संकर हरि है प्रभु मेरो ।
तुम सुष(दुष?) भंजन तुम सुष दाता । तुम ही राख्यो सरण की ध्यात ॥
द्रोपद लज्या राखी लै भली । भले वीर बतावै साषी ॥
भली बुरी उधी सर उचारी । मो पै किया करीहो मुरारी ।
एह संकट सब दूरी करणा । मो कू राखो तुमारे चरणा ॥
मन मै धीरजै असै धरीये । कबहुं काम नै असी लहीये ॥
रे भइया मोपै काहा चाही । तुम धन चाहो सो याहां नाही ।
उरगानो कहै वचन जो पाउं । तोही तो कुं दुध पीलाउं ॥]
सुनि रे वीर अबहि कछु दीजे । तो सूं मेरो जीय न पतीजे ।
जो न विदेखे अपने नैना । तो न पतीजे गुर के वैष्णा ॥

तेरो मोकु दचन दै तो हुं देहुं तुरंत ।

मोथी कछु अंतर परै तो हीर हरत परत ॥

(२१४)

(उरगना वाइक)

मंत्र द्रोही कृतघ्नश्च जे विश्वासघातकं ।
ततराः नरकं याती यावत् चंद्र दिवाकर ॥

[द्वि० १ मे अधिक :

परोक्षे कार्यं हता च प्रत्यक्षे प्रियवादिनं ।
वर्ज्य एतादृशं मित्रं विषकुंभं पयोमुखं ॥
सुष पर मीठे ईष सम पीठ पाछे कछु दूर ।
जैसे कुंभ विष सो भय्यो ऊपर पाई पूर ॥]

बंधे बचन नर पंनग दोउ । ताजो भेद न जानै कोउ ।
दूध कटोरा भरि के पाउ । एक मोहोर नित दै ले आउ ॥
अैसे करत मास एक गमियो । उर भयो सो चित दे सुनियो ।
उरगाना घर बिग्रह लागो । नयो प्रसंग भयो कछु आगै ॥

नगर नाम अमरावती अमरसेनि त्रप तास ।
बांबी तै एकै कोसहु उरगाना को बास ॥
ताके घर की संपदा सघरे मानस तीन ।
अपने अपने लोभ कूं ओर ओर मति मीन ॥
घोता पेहली न्यारिको दूजी ब्याही ओर ।
उरगाना की ओर मति ताको चित कछु ओर ॥

(त्रिया वाक्य)

अहो कंत मोहि अचिरज आबै । तू निति मोहोर किहां थी ल्याबै ।
चाकर नही सो राइ पै पावै । या बातें मोकूं समझावै ॥
उरगानो बोले त्रिया ताही । यह कछु बात कहन की नाहीं ।
नारायण जंष तूसट तोही । सुष संपति घर बैठा ही मिलांही ॥
माहापुरुष भेज्यो एक मोकुं । ताकी बात काहा कहूं तुम कुं ।
अब कोइ न बात न कीजे । मैं लाउं सो चुप कर लीजे ॥

[प्र० ३ में अधिक :

तुं ल्यावे किन ठोर सुं सोइ मोहि ठोर बताया ।
कनेन देवता कुं मिलियो सो मोहि नेन देषाय ॥]

तुं राख्यो पर नार सुं हूं फुनि करहुं जार ।

सरब बात मोसुं कहो जीय मे सोच विचार ॥

(यह छंद प्र० १, २ में नहीं है)

अली चंद देख्यो नहीं बिन देखे ही आल ।

अपत राहसू काहा कहुं झूठे करत जंजाल ॥

[च० १ में अधिक :

कोइ माती मैं मंतरै सो देत है तोहि मोहोर ।

वाको जिय तो सुं मिल्यो सो मोसुं सोच विचार ॥]

पूरष कछु दोस नही जो भुगतै त्रीया चार ।

साध त्रीया कस रहुं हूं फुनि करहुं जाण जार ॥

लंघन दोय च्यारै करै मैथन की नित चाह ।

नातर भूपै ढोर लुं भाषै म्हाल वहंत ॥

(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)

आहेछी तै अधिक त्रिय वेधन हरै पधार ।

याके द्विग अधिक बहै जत चितवत तत मार ॥

पर दारा पर द्रव्य पर सिर दोस धरंत ।

परमेसुरता स विमुष रौरौ नरग परंत ॥

(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)

[च० १ में अधिक :

नई नार नई ता छकि कोन कोन से धार ।

ढोटा पहेली नार को सो चिहूँ मन चिहूँ सार ॥]

नई नारि अर पुरुष पुराण । इनमै कहां भलप्यन जाना ।

जोरै गांठि परै नही पोतै । भैसै बहल बहल को जोतै ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

अनभ्यासी विषं शास्त्रं अजीर्णं भोजनं विषं ।

विषं गोष्ठी दरिद्रस्य वृद्धस्य तरुणी विषं]

मैं जानो मेरो घर बसो । त्रिया कुं काम काल होइ डस्यो ।

हूं अथ बैस थे जीवन धस्यो । बूढो वाह करै सो भोरौ ॥

आ द्रव्या लाइकै दोष लगावे । सो तो सब हात तेरे पावै ।

हु सबेरे लरका संग लीनो । मेरी सब संचोटी देउं ॥
 प्रात भयो लरका संग लीनो । दूध कटोरा भरि कै दीनो ।
 जब बाबो केरे ढिग आयो । अहि संक्यो अर सीस डुलायो ।

(बाब्री सर्प वाक्य)

चीहुं सखण की बात थी सोर भई षट कान ।
 यामै कछु भलपन नहीं फूटो मतो निदान ॥

[तु०, ३, च० १ में अधिक :

आगे तो था जान तो अब लरिका लायो संग ।
 बिगरी बात सुधरे नहीं अलि प्रजल विहां अंग ॥]

(उरगाना वाइक)

स्वामी ए लरका है मेरा । सदा काल अब सेवग तेरा ।
 मोही देत सो याकूँ दीजो । इनके हाथ को पय पीजो ॥
 पनग कुं परतीत न आवै । लरका मोकुं दूध पिलावै ।
 यामै कछु भलपन नाहीं । याको मेरो दोउ घर जाहीं ॥
 कह न सकूँ जीय मै अति धरको । जैसे गूंगे चबावतै चर को ।
 मोकुं भई वाई गति आई । सुसरो वैद बहु कुठोर ही षाई ॥

[द्वि० १ में अधिक :

यह दुबिधा निम बासर करिये । जंघ उधारी लाज ते मरिये ।
 हमको भई बात यह कांची । यह दुषदाई कहत हौं सांची ॥]
 बहू कुठोर बीछु लग्यो सुसरो भयो वयंद ।
 तिहां सयानप कहा करै परबस पड़ो गयद ॥

[द्वि० १ में अधिक :

कहे ते बने न दुष कठिन हानि होत जिय काज ।
 जांघ उधारी कीजिये सकुच गही जिय लाज ॥]

उरगानै लरका की ठानी । परबस पत्यो कही सो मानी ।
 पिता पुत्र मिल कै पय पायो । दई मोहर सो एक ही लयायो ॥

[तु० १ में अधिक :

उरगानै बहु बिनती ठानी । सो तो सर्प मान के लीनी ।
 भवमां सर्प बहुत पड़तावे । दोय मां काल एक को आवै ॥]

तादिन ते लरका ही आवै । बांध्यो रोज सो निति कै ल्यावै ।
 युहीं करत दिसव दस बीते । वो मन मै कछु ओरी चीतै ॥
 ढीगा हाथ सदा भल रहै । ताकै घातै मारण कूं चहै ।
 अति डराय जीय संका धरै । एह चंडाल मेरी अत करै ॥
 काचो दूध पीवन सुष भावै । ऊपर तै ढीगा फिरावै ।
 साधक ज्यूं फूल हवा केरै । मन मे गूढ गुपत तन हेरै ॥

(प्र० ४ में यह छंद नहीं है)

[तृ० १, च० १ में अधिक :

ढीगा हाथ सदा रहै श्रैसी चित मो भौन ।
 फुन्नग हनि द्रव लेन की फिरत फिरत मरे कौन ॥
 नवन करे अति साधकी सुष से मीठे बैन ।
 दूध कटोरा पीवही सोत के मूढ मो देन ॥]

[तृ० १ में अधिक :

सर्प आपनो सुकृत संभाख्यौ । औ अपने मन घात विचाख्यौ ।
 जो पै सर्प दूध कू पीवै । ढीगा लागत नहि औ जीवै ॥]

[द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

तासे दूध पीवन सुष नावै । वे ऊपर से ढीगा लावे ।
 ज्यूं साध के हाथे जो फेरे । मन मो मूढ़ गुथत नहीं हेरे ॥]
 एह जान ढीगा हणु सगलो धत ले जाडं ।
 वह ताके वीगरे डसूं प्रथम नहुं विगराडं ॥
 एह लरका यात्री बुधि काची । घटी वढी कछु लही न साची ।
 ताकि ताकि एह ढीगा ल्याये । लागत रपट लरका है पायो ॥
 डसतहि प्राण षेल गयौ आगै । वाकै जंग सबल सी लागै ।
 नीत नीत बांबी मैं आया । वाके पिता सांक सुध पायो ॥

[च० १ में अधिक :

ढीगा कठोर वाच रे निकम गयो है प्रान ।
 रारे के मारग कोस पर और बांबी के सर दान ॥
 ओरगना कौ पुत्र सो कड़कसी बाट में पयो ।

अंग नदी से दान न कोड माख्यो न डस्यो ॥
इसके अनतर इनके ऊपर का छंद दुहराया हुआ है ।]

(उरगाना वाइक)

मेरो कर्म शुंही लख्यो तालुं तो धन खायो ।
जब रंडी विग्रह रच्यो तब तो यह फल पायो ॥
कित रंडी विग्रह रच्यो कित एह लरका पायो ।
किति मेरी मोहर मिटै आगे वात बढाए ॥
विग्रह तै धन छीजहै विग्रह तैं धन षाह ।
विग्रह तै विग्रह बढै काहा रंक काहा राव ॥
विग्रह तै रावण गल्यो वीग्रह तै वली पंड ।
जिहां जिहां वीग्रह भयो तिहां तिहां रही न मंड ॥

(यह छंद प्र० ३ मे नहीं है)

[द्वि० १ में अधिक :

यस्य स्थान विरोधेन यस्य देशे विमर्जितं ।
काकी कील्के मंत्रेण कुजरः प्रलयं गतः ॥
कलह ते दानव घटे कोट अष्टदश सैन ।
क्रोध क्रूर कौरव करत दह्यो कलह हर मैत्र ॥]
मेरो कछु दूसन नहीं सुनि उरगाने राय ।
पुत्र सोक तोकुं भयो मोहि ढीगा को घाव ॥

[प्र० ४ में अधिक :

गोठ बिणट्टी सज्जणा दूधा लाव न साव ।
तोही सालै डीकरौ मो माथै रो घाव ॥]
बैर चढ्यो चित हुन मिलो जोरे मिलावै जंग ।
जोवन तात न प्रगस्यो सुषहु न लहीए अंग ॥

(यह छंद प्र० ३ मे नहीं है)

मेरे तेरे प्रीत थी सो तो निबही लाज ।
तू तेरा फल पाइहै वाचा उथप्यो आज ॥

[च० १ में अधिक :

घर सो कलपत बांबी लो जाये । देख्यो पुत्र अति दुष पाये ।
सगा सजन सब पीछे सूं आय । लै लरिका कूं मंजिल पहुँचाये ॥

तेरो कलू दोस नहिं जो कीनो सो पाय ।
 सारन सूवा कूं लियो तो उनही सीस मुढाय ॥
 आपनि बुद्धि बनाय ते तैसी संगत करे ।
 जो जैसे फल पाय ॥

नगर अवंती अति सुषदाई । राज करे तिहां बिक्रम राई ।
 ओसवाल हीरा साहा रहिये । ताके घर कलू संपदा नहिये ॥
 उन येक सूवटा मंगायो । सो पुनि सुषदेव आप ही आयो ।
 पढ़े वेद औ कथा कहानी । घर की रीति सबे उन जानी ॥
 नाम सूवा मानक कहिये । त्रिया पुरष महासुष लहिये ।
 नित सूवा सूं राख्यो रंग । ज्यूं दुरभिक्ष मित्यो जु अन्न ॥
 येक दिना साहे बुद्धि उपाई । सो पूछे मानक कूं जाई ।
 मानक तेरी अग्या पाऊं । तो लइ षेप देसंतर जाऊं ॥
 घर धनिया तिनी कंठ बुलाई । त्यासूं बात कही समझाई ।
 मानक केरी अग्या लीजो । जे यह कहे सो कम ही कीजो ॥
 अैसे कहि साहि तये चलयो ही । सोप्यो काम वाकूं सब ही ।
 त्रिया वाकी विभचारणी आही । जिहां मन भावे तिहां जाई ॥
 येह चरित्र देखि सुवा बील्यो बानि । कहूं सीष मानो सेठानि ।
 अैसे समे साह जो आवे । तो तू सजा काहा सुष पावे ॥

मानक की बातें सुनी साहन चढ्यो बहु कोप ।

उन चेरी सूं यूं कह्यो सो कर मानक कूं लोप ॥

चेरी बेग सुवटा कूं लीनो । पाष लुंभ कै लुम्भो कीनो ।
 दासी घर छुरी लेन कूं धाई । तौ लौं सूवो पनाल मों जाई ॥
 चेरी बही देहरे आई । देष सूवा वेह ठाहर नाहीं ।
 ढूंढी घर की दीवालें सारी । दासी मन मों कियो बिचारी ॥
 उन जानो मझारी जायो । चेरी अपने प्राण बचायो ।
 सूवटा और बजार सूं ल्याई । रांधी मांस सांढन कूं देषाई ॥

षाय मास हरषित भई सुवटा नाप्यो मराये ।

निरभे काहू को नहिं धरे मन भावे तिहां जाये ॥

हर रच्छा जिनकी करे सिर है सिरजणहार ।

करता राषे तास कूं कोण है मारणहार ॥

नित नित चोषा धावे सेणनि । ताके नाथे पनाल भरे पानि ।
 तामों दाना बह कर जावे । सो सूवा नित जुग कर पावे ॥
 पिवे उदक वह करे अराम । निरभे रहे सूवा वे ठाम ।
 जिन पर दृष्टि होय करता की । ताकूं मारे ताब है किन की ॥
 केतेक दिवस बोहि ठाहर रहियै । पर आये तब बाहर जह्ये ।
 येह बिध करता वाकूं बचाये । निकसि सीव के देहर आये ॥
 सुवटा मन मों सोच अति करही । काके सरण जाये कर रहही ।
 सोचत सिव के देवल जाई । तह्यो गुप्त होय ताहि के माही ॥
 साहन उठी बडे भिनुसारे । पूजन कू आई हरके द्वारे ।
 धूप दीप नैवेदहि कीनो । पालव छोड़ि प्रनाम ही कीनो ॥
 नीलकंठ बिनती चित धरियै । दोय कर जोड़ी ऊभी रहिये ।
 मो पति आये बेग कब मरिये । बार बार बाणा फिर चाहिये ॥
 आन सोने के छत्र चढ़ाऊं । सचा मन धिव को दीप जलाऊं ।
 तेरी दासी सदा कहाऊं । जो मैं तेरो निहचै पाऊं ॥
 सूवा बेटो थो ताक मों सारा । सो लागो बोलन ते बारा ।
 जो साहन तू सीस मुड़ावे । तो आवे साह तुरत मर जावे ॥
 तद साहन चौंकि चौकानी । मोसूं बात कहीये कौन ।
 इत उत देखे मनस कोउ नाहीं । उभिआ पति प्रसन्न भयो मोहि ॥
 घरहि आय कर नाई बुलायो । मन मों हरष सूं सीस मुड़ायो ।
 तापर दिवस दोय जो गयो । सीवने कह्यो सो आजु ये न हूवो ॥

संकर बाचा के उठले गोरष इंद्र चल थाये ।

धू आसन जो डगमगे जो पोहमी रसातल जाये ॥

फिर संभु के देहरे आई । संकरहू निहचौ नहीं पाई ।
 फेर सुवा बोदयो यही दाब । नेरो नहीं सो अबही आवे ॥
 जो तू सीस को फेर मुड़ावे । दे पाछे ना चूनो लगावे ।
 तापर साजी तेल दे जाई । आवे साह तुरत मर जाई ॥
 ऊपर थूहर दूध भरो सेठानी । ऊपर डारो ठंडो पानी ।
 सदही हरष सूं घरही आई । घुटी हती सो फेर मुड़ाई ॥
 तापर साजि चूनो भरही । ऊपर तेल हरष सूं घरही ।
 फिर कर थूहर दूध लगायो । दिवस तीसरे साहा घर आयो ॥

साहा कूं आवत देष के संकर की सत बात ।
मन मो हरषत थूं भई सो फूलत हे सब गात ॥
साहा कूं आवत देष के दीयो दग भउ मान ।
साहा कहे दुरबल क्यूं सो दुष पायो सेठानि ॥

सुवटा कूं मंझारी लीनो । ताको दुष मैं अतिसय कीनो ।
कृती छाती मसतक दोई । ताथे गात अति दुष होई ॥
हरी साह सुनि येही बानी । सुनते सौंही पड्यो है धरनी ।
सो सेठानि ने आनि उठायो । कर परपच अरसाहा समझायो ॥
मूवा पाछे मरे नहीं कोई । जो कुछ लिखी हती सो होई ।
रमोई पावन घरमो खं जाये । तब सूआ बैठो हाथ पर आये ॥
देधे साह तब अचरज पायो । मूवो सुवटा कहुं से आयो ।
हुवो हरष कछु कहत न बनही । जेसे बांक घर कुंवर जनमे ॥

हरी साहा पूछे मानक कूं काहे दुरबल बहु गात ।
तब सुवटा सारी कही जो बीती सो बात ॥
त्रिया तेरी बिभचारिणी मन भावे तहां जाय ।
वाकूं सीष जो मैं दई सो मो नायो थो मार ॥
चेरी ने मोकूं लियो नोच पंष सुनि साह ।
छुरी लेन कू वे गई हूं धस्यो पनाली मांह ॥

नित नित चोषा धोवे सेठानी । ताको नावे पनाल में पानी ।
ताके दाने मैं चुग चुग जाऊं । वाही ठोर को पानी पिऊं ॥
आये पंष बाहर भयो भाई । सिव के आसर ठौर मैं पाई ।
अैसे संकट प्रान बचायो । सूवा समयो सो कहि समझायो ॥
हरी साह मन बुद्धि बिनारी । ब्याह की फेर दूसरी नारी ।
जद ब्याह कर घर मो ल्याउं । तद रंडी को सीष लगाऊं ॥
सुवटा उपरी ऊपर छिपायो । बोल मत सुष कूं समझाओ ।
ब्याह मंडाय तुरत मढायो । दिवस पंदरह में दुसरी लायो ॥
बाजा बजावत घर कूं आयो । निवतहरनकूं थानक कू पहुँचायो ।
सुवटा को उन राख्यो छिपाई । बडी त्रिया कूं डरी बुलाई ॥
कैसे सुवा मंझारी पायो । दंते उंचे थे हाथ क्यूं आयो ।
पिजरे में कछु लाग जो नाहीं । येह मोकूं तुम कहो समझाई ॥

तब त्रिया कही फिरि बानी । चेरी मान गई थी पानी ।
 मैं बैठी थी रसोई घरमो । कूदी बिल्ली वाई पलमों ॥
 धमक पाये सूवा मर जाई । साहन ने करी चतुराई ।
 तब साहन कूं सुवटा देषायो । मानक कूं वेही ठौर बुलायो ॥
 सुनत परपंच साहा कोप चढि आयो । बिक्रम सेन कूं जाय सुनावो ।
 सुगल कूं वेही बेर बुलायो । देके रुपया ओर नाक कटाओ ॥

दीनी गधा चढ़ाय कर चेड़ी राइ ततकाल ।

सुगल हाथ रसी दबो सो सेर सुदी बिनिकाल ॥

अैसी सुन ओरगना भाई । वा क्यूं डाग प्रथम क्यूं लाई ।
 जो वाकूं यो मारती नाई । तो वाकूं वो डसतो नाई ॥]

एह सुनि उरगानो चलो सुत कुं सदगति लाय ।

त्रीया सूं सब बातां कही वह कछु जिव न पत्याय ॥

तैं लरका कुं दरब दियो ले छोख्यो करि अंत ।

मो सू भेद दुराह करि मिथ्या बोलो कंत ॥

[द्वि० १ मे अधिक :

राजानो राजपुत्रस्य रागी रोगी च रावतः ।

चंडिका कर्मकश्चैव षट् शरा विवर्जितः ॥]

[तृ० १, च० १ में अधिक :

मेरा लरिका कूं मारके मोसूं कहो विवेक ।

तेरो मरमठ भांजिहूं सो करूं तमासो देष ॥]

रांड मांड अर मातो सांड । चढ़ी कुवाण अर काढ्यो षांड ।

ए पांचु घर बाहिर आवैं । अपणो अपणो अंग जणावैं ॥

[च० १ मे अधिक :

कलजुग आई कूबरी औ नाचन लागी रांड ।

चेतना होय तो चेत जो नहिं तो रहो से मांड ॥]

नूष कै आगै जाये पुकारी । झूठी साची कहत न हारी ।

दूत पठाए षसम बुलायो । उरगना सुनि तबही आयो ॥

राजा अमरसेनि धरम धारी । सुनी बात जब न्यारी न्यारी ।

रंडी की सब झूठी ठानी । उरगना की साची मानी ॥

[द्वि० १ में अधिक :

सन्न संग जो हित करे सजन दुरावत तंत ।
गुह्य बात त्रिया सों करे ते मूरख भतिवंत ॥
अहि क्रीडा वणिक मैत्रं लीलया विष भोजनं ।
वर्जयेद्योषिता वृंदं यदि कल्याणमिच्छति ॥
क्रीडा करे जु सर्प सो बिष लीलत सहजान ।
बिना सीचते मरत है भेद करत तू अयान ॥
आयुर्वित्तं गृहच्छिद्रं मंत्रमौषध मैथुने ।
दानं मानौ च नव गोप्यानि कारयेत् ॥
विषल्या सुष आयुद भेद छाड़ त्रिष संग ।
मान मंत्र अपमान दुष ए नव करो न भंग ॥]

[तृ० १, च० १ में अधिक :

अनुचित कर्मरम्भः स्वजन विरोधो वलीय सास्पद्वा ।
प्रमदाजन बिस्वासो मृत्यु हाराणि चत्वारि ॥]
अनुक्रम चित आरम तै सजन विरोध दरबार ।
बड़े सपरधा तास कै मरता के ठाहर च्यार ॥

(प्र० ३ में यह छंद नहीं है)

(चोपई)

एक मोहर परवतो सारी । ता परि में ए बषत गुदारी ।
अब घर कछु न आवै जावै । बासी रहै न कूटा पावै ॥
मेहरी को धनपुरष लो चाकर को धन राए ।
पावै तो बवनिध करै नही तर रहै मुहु चाह ।

(यह छंद प्र० ३ में नहीं है)

[द्वि० १ में अधिक :

युवस्य यौवनं पुंसः पुरुष जीवनं धनं ।
स्त्रियाश्च यौवनं पुंसः पुरुष यौवनं व्ययं ॥]

मो पै रोक सवायो लीजे । मेरे द्वार चाकरी कीजे ।
बांबी षोद षाद धन लेहुं । तोफुं घर बैठा ही देहुं ॥

[च० १ में अधिक :

घर बैठे तोकूँ देहु सुन ओरगना राय ।
तोये दूर कछु नहीं सो बाबी मोहि बताय ॥

वां थे ओरगनां चल्थो बांबी के ढिग जाय ।
कहो फुन्नग कैसी करां सो अब कहो बचन की बात ॥]

[तु० १, च० १, में अधिक :

सुनि पंथी फुन्नग कहे थेह बांबी यह माल ।
तेरो बचन सभाल के सो मोहे गंगा ले चाल ॥
येह बात द्रासू परी नृप के सरखन जाय ।
इनकी मोहूं सीष दो केहि के सिर बूझी पाये ॥

(यह छंद केवल च० १ मे है)

ओरगना अंतर नही कीनो कठिन सरीर ।
बहू भांति से चाया लियो पोड़ोच्यो गंगा तीर ॥
गंगा काठे मे तके ओर फुन्नग भयो बिसवास ।
वांसे ओरगना चल्थो सो पोहोंचे नृप के पास ॥
बोले नृप सो उरगानो भाइ । चलत बांबी मोकुं बताय ।
ओरगनो वा बांबी बताई । अमर सेन सब माल षोदाई ।

ओरगना सूं नृप कहे तू है मेरो भाइ ।
रंडी भार निकाल दे सो ओर देहुं तोहे ब्याहि ॥]
बांबी को धन ले गयो राजा भरो भंडार ।
उरगना चाकर रह्यो रंडी कै सुष छार ॥
पुरुष पराणि मर्माणि जे वर्दति मध्यमानराः ।
ते नराः नरकां यांति वल्मीकोदर सर्पवत् ॥

(प्र० ३ मे यह श्लोक नहीं है)

तारण मंत्री नृप समझावै । मन को विश्रम सब मिटावै ।
मधुमालती जैत जन वारी । चरन बंदि तिहां गोद पसारी ।

(राजा वाइक)

चरम दिस टहुं कछु न जानूं । माणस देव कहा पहचानूं ।
मेरो अवगुण सब बीसारो । ए दोउ कन्या राज तुम्हारो ॥
सुष पालषी तिहां सझकीनी । नगर माहि चलबे चित दीनी ।
घर घर तोरन भई बधाई । कनक माल राखी सुष पाई ॥

दोह पालकी महल मैं आई । मधु कूँ तारख ग्रह पठाए ।
उही विरिया वीप्र बुल्याए । उतैत कवर दुह लै क लगन लषाए ॥

(प्र० ३ में यह छंद नहीं है)

जैत माल सतगुर की जानी । जो मालती नाहि मन मानी ।
दोए कन्या एक मंडफ व्याही । मेरो एह धरम मै चाही ॥
धरम व्याह तुम तबही करते । कन्या को उपहास न धरतै ।
ता पर गह गल काहे कुं मरतै । पहली समझि जो औसी धरतै ॥
तब काहू को कहो न मान्यो । ज्यो कछु कृत्यो स्यो अपन्यो जान्यो ।
हाथी घोरे टसम भूझाए । अब नृप आप धरम कूँ धाए ।

अष्ट वर्षा भवेत् गौरी नव वर्षे च रोहिणी ।

दश वर्षे भवेत् कन्या ततो ऊर्ध्वं रजस्वला ॥

(प्र० ३ में यह श्लोक नहीं है)

[द्वि० १ मे अधिक :

उत्तम व्याह सात माहं मध्यम भाग दश जोग ।

द्वादश ते ऊनी चमल पंचदशी संजोग ॥

तृ० १, च० १ मे अधिक :

पंच वर्ष की गौरी कहिये । सप्त वर्ष की रोहिनि लहिये ।
दश वर्ष की कन्या मानो । आगे फिर रजस्वला जानो ॥]
असट वर्ष की कन्या गोरी । नव वर्ष की रोहिण कुंवारी ।
दस वर्ष सो कन्या माही । तत उद्ध रजस्वला ॥

(प्र० ३ में यह छंद नहीं है)

षोडस बरस कहाँ लुं रहै । वर प्रापती सो कूँ चहै ।
जोबन सबै पढण कूँ नाही । अछित हो सोई ढिग पाई ॥
वाही ठोर सुरत सो मंडी । वह भागो वह गैल न छंडी ।
बारी माहि जाइ कै पकृत्यो । जैत मालती दोउ कर जकृत्यो ॥
जब कन्या अपनै धर्म बीती । जो रावरी षसम कुं जीती ।

[द्वि० १ में अधिक :

कलि कुल हानि स्मृति यूं बोले । पुरब छिपत नृप दूँडत बोले ।

करत कथा अधिक बढ़ जाई । चित उपजे सो कहों सुनाई ॥]

म० वार्ता १५ (११००-६४)

गंधप ग्याह राम सर कीनो । प्रथम समागम को रस लीनू ॥
 कछु तो प्रेम पूरबलो होतो । पोवै कहा देवबल जूतो ॥
 पहर पहर लुं कुवरी भुगतै । अति महमंत महाबल जुगतो ॥
 एक छ्वाडि दूजी कुं भुगतै । आसन नेक न छंडै जुग मै ॥
 ए फुनि माज काम रस मातो । अति विपरीत कहा न समातो ॥
 कोक आसन चोरासी चाढे । कोऊ घट न कोऊ बाढै ॥
 धूँटै अघर सघर रस मानू । ज्यूं पारेवा फर मैदानू ॥
 दासी च्यार मै ढिग ही राषी । द्रग चरित देखि के साषी ॥
 इम सुं आन कही योवन सारी । वे पुनि गिरी भीर का मारी ॥

काम रहित कोउ होय है त्रिया पुरष मैं कोइ ।

एह रस नीक समझीए सनमुख प्रगटे सोइ ॥

तृ० १, च० १ मे अधिक :

बिरह बिथा बूझै नहीं जैसे जरत हे आग ।
 दोउ जन रंग मे रांचहीं सो अपनी कछु ये न लाग ॥
 रंग राचे तन दोय जये ओर कछु एक कीनी बात ।
 राम सरोवर बाग मे सुष माने एक साथ ॥
 तापे बहु विग्रह भयो षेत छ्वायो आप ।
 हाथी घोडा नर सबे ताको भयो संताप ॥]

(चोपई)

सात दिवस अपने रंग खेले । ता पीछे तुम विग्रह मेले ।
 सो विग्रह तुमही कूं लागै । दल झूझाए आप ही भागे ॥
 वे कोउ अनौ पानप राषै । राषी कनक माल युं भाषै ।
 कितनिक बात गुपति अनेरी । साहब सुं कहियै काहा फेरी ॥

आयुर्वित्त ग्रह छिद्रं मंत्रमौषध मैथुनं ।

दान मानापमानं च नव गोप्यं तु कारणम् ॥

(प्र० ३ मे यह श्लोक नहीं है)

[तृ० १ में अधिक :

अपनो द्रव्य आयुर्बल मिथुन ऊषध जान ।

ओगुन गुन मंत्र रस त्रिया भेद मन आन ॥]

गुप्त मंत्र जे बड़ो विचारै । मतो विदूष सो सब हारै ।
जान बूझि अपनो घर षोवै । तो मीत्री काहा मूँड धरि रोवै ॥

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

राजा मतो न मन मो घरही । मंत्री होय कहा बुधि करही ।
मनमथ उतपत पीर न बूझै । एती भई सगरो दल मूँके ॥
जोबन रूप जिहां तिहां आवै । काम व्यापत प्र संतावै ।
बर प्राप्त कन्या जेहि ध्यावै । ताकी सरन आगै आवै ॥]

[६३४ अ]

प्र० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

(प्रस्ताव श्री रामचंद्र जी को)

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

चंद्रसेन हम उच्चरे कनकमाल सुनि ताम ।
रघुवंसी जब अवतरे सो किन जाने थे राम ॥

च० १ में अधिक :

लंका जारी बहु बिध से ओर चले सीय को लेह ।
चित्त वारो मारग भये सो बंदर बिदा करि देह ॥]
राम लछमन सीतलो अरु चोथो हनुमान ।
नमस्कार चारुं कियो अंजनी दियो न मान ॥

[प्र० ३ मे अधिक :

राम लछमन सीतसुं अरु चोथो हनुमान ।
तप वेठी जिहां अंजनी कियो तिहां परणाम ॥]

तृ० १, च० १ में अधिक :

ये चारुं मूरख भये सीता लछमन राम ।
भैव जान्यो सब से बड़ो पंडित हनुमान ॥
रामै कह्यो कुराम तूं लछमन कहो कुलछि ।
आव कुसीता सीयहुं रे हनुमान कुलछ ॥

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

सोच सरीर ऊपज्यो हिरदा कियो विचार ।
लंका जिति आये अमी सो अंजनि दियो न मान ॥

(२१८)

हनुमान हिये बिचार के बात कहे सुन येह ।
माता तुम सत ऊचरो सो बूझौ यहै बिवेक ॥]

(हनुमान वाइक)

निराहार द्वादस बरस जुद्ध न पूरे कोइ ।
लक्ष्मिन कुलछ मन कछो मो जीय सांसो होय ॥

(अंजनी वाइक)

रामचरित जानै सबै भूल गयौ मन मोन ।
राष न सको सीत कूं अवर अलछन कोन ॥

[तृ० १, च० १ मे अधिक :

सीता सूनी मेल के बन मों फिरियो जाय ।
जो कोउ मारे श्रीराम कूं तब ऊपर करे को आय ॥]

(हनुमान वाइक)

सती रूप साहस प्रबल एह पटंतर वोर ।
हनू जपै अंजनी सुनो एह अचरज मो होए ॥

(अंजनी वाइक)

कंध चढी लंका गई सती कहावै आप ।
तबही भसम न कर सकै जर बर कटतो पाप ॥

[तृ० १, च० में अधिक :

सती सराप न चूकही जर बर उड़ती छार ।
अैसी बुद्धि उपावती सो क्यूं होतो जंजार ॥]

(हनुमान वाइक)

तीन लोक तारन तरन जग जपै जसु नाम ।
माता खूं हनुमान कहै सो क्युं कछो कुरांम ॥

(अंजनी वाइक)

करता हरता सकल को घट घट रहो समाय ।
कनक मृग कीन्हो नही तो विभ्रम कित जाय ॥
न भूतपूर्व न कदंच द्रष्टा हेम कुरंगं न कदापि वार्ताः ।
तथापि लुब्ध रघुनन्दनस्य विनाशकाले विपरीत बुद्धिः ॥

(प्र० ४ में यह छंद नहीं है)

[द्वि० १ मे अधिक :

दुखो प्रगट बाढ़े न कछु यह जानत सब कोय ।
कनक हानि कीन्हों नहीं क्यो चित विभ्रम होइ ॥]

(रामचंद्र वाइक)

इह भवस्य कबहुं न मिटै संसारी की गति ।
सत्य सत्य गोतम सुता जो तुम कही सो सति ॥
ओर एक दूजी कहुं तुम नंदो हनुमान ।
एह सम को जोधा नही बल पोरष जग जान ॥
वस छेद रावन क्रियो सीता मोहि मिलाय ।
लंक प्रजाल तो भयो जो हनुमान सहाय ॥
पदम अठारह मध्य मुष मेरे हित को दूत ।
माता जोय हनुमान है कैसे कहो कपूत ॥

(अंजनी वाइक)

गिर तक के असन दियो चली दुध की धार ।
त्रिख टीटै मै नीर ज्युं भई वार की पार ॥

[प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ मे अधिक :

इण मेरो सो पय पियौ कहा गयौ उह जोर ।
बाल पयों रबि प्रासियौ मैं काढ्यो मुख फोर ॥
तैं इतनो कहि कत कियौ पदम अठारह जोर ।
रावण कूं लंका सहित करतौ साहस भोर ॥

तृ० १ में अधिक :

रावन भारथ बार के लंका लेतो कूद ।
राम सिया न लावतो तासों कहो कुबुधि ॥

प्र० ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

सायर बांध्यो कृष्ण पै बानर मारै भार ।
आघी अंजलि नीर कूं ना पियौ तिहि बार ॥]
येह मेरे स्तन न पियो अदीन आयो सोह ।
वंभख हूतै ते पर्यो मेरो पूत न होइ ॥

(हनुमान वाइक)

धरा पकरि ऊंधी धरों जो रुघनाथ सहाए ।
 मोहि प्रभू की आग्या नही सकूं न त्रिण उठाए ॥
 सात समुंद अचमन करूं लंका कित एक मान ।
 दखिनि तै उत्तर धरु जो आग्या दें श्रीराम ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

हुकमी बंदी राम को कखो न लोपूं कोय ।
 जैसो हुकम तैसो करूं जो कुछ होय सो होय ॥]
 प्रलैकाल जग को करूं रावण कितोक आहि ।
 वे प्रभु की आग्या लई जाको अपजस नाहि ॥
 ज्युं कुंभार भाजन घडै एह घडी सब जोनि ।
 घडि भंजै फिर फिर घडै ताको अचरज कोन ॥
 तैं जो कहो रुघनाथ सुं ताको उत्तर एह ।
 सेस सहस दीय रसन सू कहि न सकूं कछु तेह ॥
 बड़े कहै सो सुनि रहो उत्तर दिये न काम ।
 अंजनी की आग्या लही चले अजोधा राम ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

तीनि लोक करता भये तिनकूं बायो बोल ।
 हिरदै येत विचारिये मानस केतो येक तोल ॥]

च० १ में अधिक :

रानी सुं राजा कहे सत्त बचन सुन लेह ।
 हिरदै बुद्धि विचारिये सो पीछे कैयक केह ॥]
 रानी सुं राजा एह भाषी । सीताराम अंजनी साषी ।
 महा अपूरब इतनो दुख पायो । उनको कछु कहत न आवै ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

वै रघुवंसी बनमो होतो । रावन दुष्ट हरी लेई सीता ।
 राम कोप करि देस सिधारे । रावन के दससीस बिहारे ॥

द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

देव मुनी सब मानस रूपी । सबको कोइ बंधे करम के बसी ।
 लिप्यो लेष सोही फल पावै । बल पौरुष कछु काम आवै ॥

तृ० १ :

कर्म लेश नाही मिटे यामे कळू ना फेर ।

सुनो राय चित ध्यान धर कहा गऊ कहा सेर ॥

(राजा वाक्य)

सुन रानी तुम कहा बषानी । गऊ सिंघ की मैं ना जानी ।
जैसी भई सत सो कहियै । पाछे भेद बात को ल्हियै ॥

(रानी वाक्य)

अैसे कर्म करावे फेरा । जेसे सिंघ गाय का घेरा ।
अब राजा तोहि कथा सुनाऊ । कर्म रेश को भेद बताऊ ॥
गऊ एक विप्र प्रतिपाली । देव अंस दूध मा आली ।
सो नित चरन जाय बन माहिं । एक पुत्र वाके घर माहिं ॥
चरै गाय मन संक न धरै । बन मां एक सिंघ अनुसरै ।
देवै गऊ सिंघ एक आयो । कहना भई स्याम गुन गायो ॥
गऊ अंतर सोच बिचारे । कर्म लिख्यो सो कोउ न टारै ।
चली सेर के सनमुष आई । देशत सिंघ उठो मुष बाहि ॥
बहुरि गाय मुष बचन प्रकासा । हम तो आहि तुमारे पासा ॥
तोरे कर्म तोहे दीनो अहारा । जो जानै सो करे बिचारा ॥
कर्म हीन मैं आई आजू । तोके कर्म गत छीजे काजू ।
सुनो बनराय संत के सूर । जो घर जान देहु मै तुरा ॥

सुन बनराय कृपा निधि भाषत (सत्य) सुजान ।

चंद सूर दोय साषहै कहूँ बचन परमान ॥

रानी करे राय सुन बातां । बासि सेर चंक्र की घातां ।
गाय सिंघ सो बचन सुनावै । ब्रह्म वाच शिरवाचा वावै ॥
मेरे गुसाई ब्राह्मन आइ । तिन्है मोहि आनी मोल बिसाइ ।
तिन मेरी सेवा कीनी बहुता । सुन ले सिंघ बचन गाता ॥
अर मेरे एक बछरा आहि । तेहि मैं धीर पिवावा नाहिं ।
पुत्र हमारे कर्म का हीना । मेरी कूख जनम उही लीना ॥
पुत्र मेरो जो भयो निरासा । फेर विप्र की दूटी आसा ।
आज का दिन मोहि मांग्या दीजै । मोसूँ सिंघ बचन कर लीजै ॥

देख्यौ आज प्रतग्या मेरी । साषी देव तैतीसो केरी ।
 बहुरि सिंघ कहा बोले बाता । आजहि आनि वनी मोहि घाता ॥
 रानी कहे मुनि राय पियारा । कर्म रेष जो परी कपारा ।
 कर्म रेष मैं कैसे कहूं । तुमे छोडि कर भषाऊं ॥
 आज कर्मगत भोजन पावा । मो तुम मोहि बातन बिलमावा ।
 जो घर जान देउं मैं तोही । पांच सिंघ हाकरे मोहीं ॥
 कलि मा मोहि देहां सब गारी । सुष अहार दीने तुम डारी ।
 में तो मरूं पंच के लाजा । तोरे कर्म छीजे काजा ॥
 कहे बचन सिंघन सुन गाय । तुम जाओ अपने घर कू जाई ।
 घर के गये फिर आवै कोय । काहे जीव गमावू सोय ॥

(गऊ वाक्य)

नीर पीर बाचा बंधे वाचा घेन आकास ।
 त्रिलोकनाथ बाक बांधे जिन लीनो गर्भ निवास ॥
 करी प्रनाम सेर ते गाय चली छटकाय ।
 नगर निकट प्राप्त भई विप्र हांक ले जाय ॥
 गाय विप्र ले आवे तिहां । बछरा घर बांध्यो है जिहां ।
 कर्म रेष ब्रह्मन कस कीना । बछुवा खोलि पुसावै लीना ॥
 तब ब्राह्मण दोयनी ले आवा । दूध दोहि कर घर पठावा ।
 ब्राह्मण अपने घर कू जावा । बछरा गाय रहे इक ठावां ॥
 चाटे बछरा कू ठारै आत्सु । कर्म रेष ते भवे बिनु सु ।
 बछरा जब देखै सिस काढ़ी । ऊपर माता रोवै ठाढ़ी ॥
 गऊ बहुत मन लीन उदास । अरु बछुवा बचन प्रकासा ।

(बछुवा वाक्य)

कहो मात बेदन तुम मोही । कवन कष्ट माता है तोही ॥
 मैं बो कछु हूं पर उपगारी । तो माता जिन लखो बारी ।
 जो मन बिथा कहो मोहि तीरा । काहे ठारे नैन भर नीरा ॥
 सत्य बचन हूं पूछ हूं माता कह्यौ सतयाय ।

पुत्र काम आवे बहीं काहे कौ जन्मौ माय ॥

(गऊ वाक्य)

काल गई हम पर्वत पारा । तिहां बहूतक देषा चारा ।
 चली आज बरषडा जाइ । जहां पेट भरबि चारो पाइ ॥

उठा सिंघ जब आगे आवा । दोय देष जिय दया जमावा ।
कहै सिंघ मन माहिं बुझाई । इक की बाचा दो जन आई ॥

(बड़ा वाक्य)

बोले बड़ा सेर सुन बातां । पुत्र जिवत कहूं हतिहे माता ॥
आपनि बाचा तुम्ह मर लेहो । घर जान मेरी माता देहो ॥
माता जाय बिप्र के पासा । तोहि मोहि षाय पूर मन आसा ।
जिन अपना सत सुकृत नासा । तिनहि कुं परिहै जम की फासा ॥
गाय सिंह सूं कहे बुझाई । हिरदै सिंघ दया मन आई ।
कर्म के लख्यो [न] मिटे कपारा । कहि गाय कहा सेर बिचारा ॥
गाय कहा सेर न माना । तो फुनि बछरा बिनती ठाना ।
अब तुम भयो माहि कूं आई । मात्रा मेरी देहो भुगताई ॥
सिंघ कहे सुन बोरे भाई । हम लोकन की यह बडाई ।
आप षाय अरु ओर षवावे । सोह सिंघ जोर कहावे ॥
नारी पुरष हम अपने आछा । तुम दोय जन गाय अरु बाछा ।
कर्म रेष अरु भोजन पावा । तुम्हही छाड़ अंत कहा नावा ॥
मास अहार सिंघ कूं आवा । कर्म रेष हम सिंघ कहावा ।
दूजी बात छोड़ के भाई । दोय तुम होय हम मेल मिलाई ॥
तुम कूं छांड कून पे जाऊं । पंचन में कहा मुख दरसाऊं ।
एक जे हासी दूसरी गारी । पेट अहार कौन बिघ डारी ॥

बोले गाय सेर सूं तुम अपनी बाचा लेहु ।

पुत मेरो है लारिका घर जान तुम देहु ॥

मात त्रात अरु बंधू आता । ओतो जुग में लूझम नाता ।
बचन बोल अपने प्रतिपाला । सतत माल कछु कुटाखो ॥
तूं अग्यान ग्यान नहि तोही । बाचा बिचल अपनो धर्म षोई ।
बंधे बचन धरती आकासा । बचन बचन क्रसन घर बासा ॥
जीत्रब कौन तपे एह आसा । अंतकाल को होय बिनासा ।
यह सुनि ग्यान भयो आय । सत बचन जो बोले गाय ॥

(सत्य सिंघ वाक्य)

धन धन गऊ माता तू मेरी । सेवा करूं दोय कर ज़ोरी ।
अब तौ माता चेला मैं तेरा । गुन आगुन सब मेरो मारा ॥

माता तेरो बछा जो आहैं । वह तो मेरो गुरु माइ कहावैं ।
 अब तो माता करो सुभाव । राम नाम अब मोहि सुनाव ॥
 देश गऊ भयौ लौलीना । जन्म जन्म मैं दास तुम्हारा ।
 लूटे बहुत लूर घरी पावे । सिंघ अग्यान सकल बिसरावै ॥
 हस्त कमल तब माया दीना । देश गुरु गाय कहं खे लीना ।
 रामनाम जिन मंत्र सुनायो । हरषे सिंघ चरन चित लायो ॥
 अैसे है सब कर्म कहानी । सो कछु जानत न जानी ॥

गऊ सिंघ बछरा सहित बिप्र सहित बन झार ।

बिमान बेठाय प्रभू पें गये सो सब रेष हे कपार ॥

सुन राजा तारन साह बातां । ये तो हे सब कर्म की धातां ।
 मोपै कछु कहत न आवै । कर्म रेष कोई साध न पावे ॥]
 अबहुं कहत हुं अैसी । मधुमालती जैत की कैसी ।
 तुम तो कह्यो कूंवरी दोइ ब्याहो । मखी भई हम इतनो चाहो ॥
 गंधरप वाह (ब्याह) रामसर कीनो । देवचरित्र भावै सोइ लीनो ।
 अब कोहो आपन कैसी कीजे । याकी बेग मोहि सीष दीजे ॥

(राणी वाइक)

राखी कहै राइ सुनि लीजे । आरण तो सगले सकीजे ।
 गंधरप वाह (ब्याह) न कोई जानै । अपने सिर अपजस तब ठाने ॥
 इतनो एक ठोर मिलावो । ज्युं ज्युं हाथै हाथ मिलावो ।
 मेरे जीव मै असी आवै । फुनि जैसे रावरै मन भावै ॥

(राजा वाइक)

मोकुं बुधी देन तुम आए । दास ऊपरि लुन लगाए ।
 बिन ब्याहै जुग हासी होई । जग माही अपकीरत होई ॥
 राव रंक लरकन कूं वाहै । सब कोई अपने जस कूं चाहै ।
 तन तप छै अरु लजा राखै । राखी सुं राजा थुं भाषै ॥

(रानी वाइक)

मैं अब लुं जानो नही नही ब्याह को संच ।
 मोसुं भेद दुराए कै राजा कीयो परपंच ॥
 कन्या को उपहास इत दूजै हारै बेत ।
 कबहुं जीय मैं अैसी धरे तिहु मारण की नीत ॥

जो तुम अब अैसी कही मेरो मेठ्यो भरम ।

जीव प्रतीत आई अबै अपनो एह धरम ॥

(प्र० ४ तथा द्वि० १ में यह छंद नहीं है)

[द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

जो तुम मन अैसी कथ्यो मेरो मेठ्यो भ्रम ।

जिय प्रतीत आई अबे मो अपनो एक धर्म ॥]

(राजा वाइक)

तुम अयान अबूझ हो अब कर चले प्रपंच ।

दीपक कर लै देषी कै उन्हीं ले की अंच ॥

(प्र० ३ में यह छंद नहीं है)

तीन फोज मेरी बली तापर उपज्यो भरम ।

चौथि पीरया हम चढे षोथो षत्री धरम ॥

(प्र० ३ में यह छंद नहीं है)

हम न पतीजे जग कहै देषे अपने नैन ।

धन वह अकेला मंदमत कंकर मारे सेन ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

गोला असे ना लगे त्यों ककर की गाज ।

हस्ती घोरे सब मुये अजहुं न आवे लाज ॥]

ज्युं अरजन के बान के ज्युं गिलोल की चोट ।

एक छुटत सहसक लगै फूटव कोटा कोट ॥

प्रथम आय हसती हनै महामात मैमंत ।

सुंढि भिसुंढि छिन छिन किए छिद्र विछिद्र किए दंत ॥

(प्र० ३ में यह छंद नहीं है)

बड़े पंछी भारड दोह गिर समान ये दोह ।

हाथी घोरे सब प्रसै अर्ध दल प्रास गये सोह ॥

देषा एक महाबली उननै मारे गज कोट ।

फुनि त्रिसूल ताके लगै जित नित वाहे चोट ॥

[प० ३ अ]

[च० १ में अधिक :

हम तो भूले भरम सों जानी नहिं कछु येह ।

हाथी घोरा नर तुरंग सो सबने छोरी देह ॥

हम तौ दोरै और कूं वाहां भई कछु और ।
 फौज हराये हम बीरह सो कहीं न पाई ठौर ॥
 जुग मिल सब हासी करै रही नहीं कहु ठौर ।
 अब मैं अैसे जानिबे सो अपने जिये की दौर ॥
 होनी थी सो हो गई अब होने की नांय ।
 सब मिल अब अैसी कही सो मत्री दिये समजाय ॥]

[६१८ अ]

प्र० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

सबे सफाई ब्याह की फूरमाए तब अब ।
 सो हम आगे कर धरी दिन दस पहली हम ॥

[च० १ में अधिक :

लगन लिषे बहु विधि से नग्न लोक सुष पाय ।
 हसी खुसी सबके मने सो हिये न हरष अमाय ॥

द्वि० १, तृ० १, च० १ में अधिक :

ढोल दमामा और सैनाई । बंके भेर बजे कर नाई ।
 झांझ मृदंग ताल डफ बानै । संघ पखावज नादर साजै ॥]

[६४० आ]

प्र० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

गुन गंधफ अपछरा अनंगी । संगीत कला कोक रस रंगी ।
 गावहि राग नृप सुं वनचे । मानुं इंद्र सभा सर संचै ॥
 बान फरै दुलहन दुलहा । बांधे मोहर सेहरा फूले ।
 उरही सृजिन कै चोरा । आगन लैन पावै भोरा ॥

दुलह कुन रष त्रिया आगरी मूरति काम ।
 तापर बनवानै चढै चितवत मूरछ बाम ॥
 बसन भुल्लानी देह की पंथि भुल्लानी गेह ।
 प्रान भुल्लाने थिर रहै प्रगठ्यो काम सनेह ॥
 आरति ले आई त्रिया कहत सुवासन सोय ।
 लंक लगावन कू कर ऊंच हाथ न होय ॥
 राणी मिलि गारी गावहीं मधू देषि मई सुन ।
 मठ धूठ मानु रहै कहन नवारी कोन ॥

अठोत्तर सै ब्याधि मै मनरथ विथा प्रबल ।
 याको बैद कहा करै जानै ताही सहल ॥
 काम रूप अवतार मधु कहूँ कहाँ ले फूल ।
 जब सो ध्यावै भूत होय वपरि त्रिया सुवेल ॥

[च० १ में अधिक :

मन माते ।
 काम लहर जब ऊपजे मनमथ प्रगटे]
 दूल्हा रूप अनंग को खेल न बरनै कोइ ।
 कछु एक दुलहिनी की कहूँ चित दे सुनिये सोइ ॥
 दो पालकी जराव की उँझल परदा नाहि ।
 सुंदर रूप बिलास द्विग दोए दुलहिनि माहि ॥
 पहली कंदूष की लता तापर कियो सिंगार ।
 लावन रूप न कह सकै बरनूँ कहा विचार ॥
 जा देशे मुनि तप टरै द्विढ आसन जिय अर्थ ।
 देव विमानन चलि सके बाचि रहे रबि रत्थ ॥
 ने फरि बजार मै मिलै तमासै लोय ।
 नरपति हारे देस के देशन आए ओइ ॥
 देस देस के नृपत सब और नगर के लोग ।
 निरष नयन मूपछ (मूरछ) सकल सुष मै बाढो सोग ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

नागिन पुतरी नैन की रहत कुंडली षाह ।
 पापन भूषी दरस की चितवत ही डस जाह ॥

तृ० १ :

मालती अनंग अनूप चंद्रबदन मृगलोचनी ।
 निरषत सनेही भूप दुतिय जन की को कहे ॥]
 कोउ पीपर मीठ ही कोउ सकै त अंग ।
 कोउ उछंग ले चले रोवत कलपत संग ॥
 बाजदार सौ सब गरे ओर टहलवा सोइ ।
 भू पर परे चिरगिची नर मै रह्यो न कोइ ॥

[च० १ में अधिक :

महा बिरह तन उलठ सुध सरीरा नाहिं ।
काम नागिनी डसि गई सो कौन सभाखे जाहिं ॥

च० १, च० १ में अधिक :

आकुल व्याकुल सब भये चित ना राखे ठोर ।
कामदेव तन प्रगट्यो सो बात नहीं कछु ओर ॥

च० १ में अधिक :

बिरह बान तन मो लग्यो उठि न सके कोय ।
परी पुकार बजार मो सो अब कहो कैसी होय ॥
बिरह बिथा कैसे सहे बिस्तु रहे नहिं ठोर ।
भूली गत भूले रहे सो काम खहत हे जोर ॥
बिरह पवन जब ही बहे तन मन रहे न धीर ।
अब मनकी मन जान ही सो अपने जिय की पीर ॥

द्वि० १ में अधिक :

जबे ते तिन यह कही नर कर सर रूप ।
छलन सकल को औतरे छत्री छत्रसिर भूप ॥]

(राजा वाइक)

इह बातैं खवन सुनी सोच भयो नृप चंद ।
लोक तमासे कूं सुए फेरि नयो दुष दंद ॥
ना कोउ मारे ना सुए द्विगन समानो रूप ।
सुरक्षा गति नर कुं भई परे बिरह के कूप ॥

(प्र० ४ तथा द्वि० १ में यह छंद नहीं है)

तब परेच बांधी दुती नरहु न चिहिने नयन ।
अब परदे बिनु पाखरी सोवत जागे नयन ॥

च० १ में अधिक :

जो नेन की जानीहै यह नैन के हेत ।
जाके हित है नैन को जग देषे दोउ नार ॥
दान दशमधू नहिन मिले ओर नहीं ब्याह को धंध ।
ताते तन अनंग चढ़ो दुगने परे जु फंद ॥]
नर समूह चाने मिले इहा नहीं कछु कार ।
ए देषे सब जगत कूं ए देषो दोष नारि ॥

दिन दस मधु नाही मिलै नवे व्याह की धंध ।
 तन अनंग अति ही चढ्यो द्विगव परे जग छध ॥
 काम सरप षाए सब लहर जहर की देत ।
 घरी च्यार मुरछै रही पाछे भयो सचेत ॥

नर सचेत होय कै सब आए । पालषी परदे बेग बनाए ।
 बाजा बाजत महल में आए । मालती काम चरित्र दिषाए ॥
 नूत तार नृप गये ठिकानै । नगर लोक सगरे सुष माने ।
 अन्न प्रवाह जुग कुं होई । भूखे पासे (प्यासे) रहे न कोई ॥
 घरी साधक लगन लिषाए । वर कन्या एकत्र मिलाए ।
 पानिग्रहन बेद बिधि कीने । वोहोतक दान विप्र कुं दीने ॥
 चौरी चिहुं कित कलस चटाए । जांबु पत्र बस पर छाए ।
 पुनि दुलहिनी दुलहना तिहां आए । मोती फेरा सातक दीनो ॥
 सिंहासन आसन बनवाए । आदर करी तापर बैठाए ।
 कनक क्रोत दोहन कुं सब छाजै । सब नायक मध्य मधु विराजे ॥
 (अंतिम तीन छंद प्र० ४ मे नहीं है)

[६४१ अ]

।० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :
 जाको रूप जगत मे घट घट व्यापक होय ।
 ताकुं उपमा कोन की कहै कवीसर सोइ ॥

[६४२ अ]

।० १, २, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :
 (मधु वाइक)

एक गोकुल एक द्वारका एह तुहारो राज ।
 हम कूंवर सुष बिलसहों ओर न दूजो काज ॥
 हम भोगीसर भवर हैं कहुं काहां खुं अंग ।
 महादेव धंधो कियो जब तै दह्यो अनंग ॥
 एक दहे के तीन तन आधे के मधु सार ।
 आधे तन की दोइ त्रिया जैस मालती नारि ॥
 एह घाटल एह मालती हूं पुनि भंवर बसेष ।
 पीकस, पूरब अवतरे तीन जात तन एक ॥

(२४१)

सलित त्रिवेणी जायफल त्रिबली त्रिपत बिबास ।
जैतमाल मधुमालती जाबन्त्री घट निवास ॥

(राणी वाइक)

जैतमाल मधु मालती एक प्राण तन तीन ।
मैं नीके जानी सबै कोउ तन अंतर चीन ॥
तेरे बल कीमत नहीं कहूं कहां लुं मूल ।
भारंड भंवर गिलोल की फुनि केहर त्रिसूल ॥
गिरजा गीरवानी कही सरगहि सबद पुकारि ।
मोकुं चेत भयो नही सौ पाएक मारे एक बार ॥
अब अपराध बिमा करो ए मेरी मनुहार ।
राजपाट मो सरम की कै तुम कै करतार ॥

(राजा वाइक)

राजपाट की कहत है अब न कहो रहो मून ।
खरका है सोई जिहां कहन सुनन की कोन ॥

[तृ० १, च० १ में अधिक :

कहा सुनन की ओर है देन लेन की ओर ।
मन की मन ही जानिये अपने जिय की दोर ॥]
तुम जीवो घर भोगवो हम सेवा सूं काम ।
पाछै होय सो होइहै सोई करिहै राम ॥
काम निवास अंस काम अब समझ कहो अब तंत ।
सा देहा सब पेषही वग व्यापक कह तंत ॥
हस्त चरन आमिष रुधर कीस (केस) नष तन मान ।
मोकुं यह अचरज भयो रहै कहा को काम ॥
जा दिन ते पुहवो रची जीव जंत जप नाम ।
भवन मध्य दीप मधु ल्युं घट भीतर काम ॥
प्राण कहा मनमथ कहा न्यारे एक ठोर ।
स्याने हुंत समझिए मूढ कहै कछु ओर ॥
गोरस मैं नोनीत जुं काठन मैं जुं आग ।
देह भवन ते पाइए प्राण काम एक लाग ॥

म० वार्ता १६ (११००-६४)

[द्वि० १ मे अधिक :

तिष्ठ मध्य ज्यों तेल है ईष मध्य मिष्टान्न ।
 फूल मध्य ते पाइये प्राण घ्राण सप्राप्त ॥
 कष्ट किये रस पाइये देह सनेह की रीत ।
 बासव में बस जात है फूल फूल की प्रीत ॥
 बिजुरी ज्यो घन मो रहै मंत्र तंत्र मह राम ।
 देह मध्य ज्यों काम है फल मध्य पै राग ॥
 दर्पन मो प्रतिबिम्ब ज्यों छाया काया सग ।
 कामदेव त्यों रहत है ज्यौ जस बसत तरंग ॥
 दान मध्य कीरत रहै औगुन अपजस बाग ।
 काम रहत त्यों देह में ज्यौ चकमक में आग ॥
 ज्यों सुगंध मृगनाभि मो जानत नाही न सोइ ।
 काम स्याम त्यों लहत है घ्राण जिह होइ ॥
 ज्यो गज सिर मुक्ता लहत लहत जाको भेव ।
 त्योंही काम सरीर मो ज्यो मंजारत भेव ॥
 ज्यों षंडित दर्पन गहत है शेष वेष बहु होइ ।
 मूरख मन ते कहत है तिमर रोग क्षसि होइ ॥
 ज्यौ शरीर में व्याधि है अनुरक्त उपगार ।
 सो गत उपजत काम बपु बस कीन्हो ससार ॥]
 गोरस रस कू जग मथे काठ मथन फुनि होय ।
 देह मथन तब ही करै भोग रस सनमुख होइ ॥

(यह छंद प्र० ४ तथा वृ० १ मे नहीं है)

जोगीसर खोजत मूए गुरमुख भए ज ओर ।
 मनसा वाचा क्रमना तीन रहत ठोर ॥
 एकादसी निग्रह करी दिन दस गहियै सोयग ।
 फुनि अजि तेज ही करहि जोग कै भोग ॥
 कोक पठै नीके करी फुनि साधै विन मान ।
 घरी अंस चूकै नही लहै काम को थान ॥

प्रानेसुर ढिग दाम बतायो । यह तो भेद सबै सुन पायो ।
 योनि बरूप सबै कहायो । लिष्ट छिष्ट न्यारो न रह्यायो ॥

जाने नहीं न कोउ असो । काहु सगैं न काहु परसैं ।
 दूह समाथ कहो मोहि आगै । मो मन को सांसो अब भागै ॥
 सांस उदो सर्ग नहीं जानो । इहां जल कुंभ सरस भरि आनो ।
 सबहु न जल बिंब प्रकासै । ज्यूं सब जोती पिंड मै भासै ॥
 जल देखीइ जो एकहि इदा । घट देखीइ सहस इक चंदा ।
 लीषै छीपै न सब जुग व्यापै । अलष निरंजन आयो आपै ॥

[तृ० १ में अधिक :

जेतमाल मधुमालती बांधी तिहां की आस ।
 जो रस सुष सजोग येह दिन दिन भोग बिलास ॥
 सुष समा दिन दिन बढे मन बढे तिही योग ।
 मोटो मंदिर बिलसिये सुष माहि संयोग ॥

दिन दिन प्रति अधिक तिहां होइ । भोगे पु(र)स नाति रिहो होई ।
 कनक माल राणी सुष पावै । हरष हेत मधु को गुन गावै ॥
 घोर षाड घत भोजन करिहै । मन बांछित सबही फल फलही ।
 कुवर मधू बिलसै सुष धरही । जैत मालती अति रस भरही ॥]
 हम है काम अस अवतारी । इह कयै कहै सो नीकी न्यारी ।
 असै कहि मधु नृप समझायौ । राजा सुनत बोहोत सुष पायो ॥

[६४६ अ]

प्र० १, २, ४, तृ० १, च० १ :

कायथ नैगम कुल अहै नाथा सुत भए राम ।
 तनय चतुर्भुज दास के कथा प्रकासी तांम ॥
 अलप बुधि दीठै दई काम पबध पकास ।
 कवियन सुं करि जोरकै कहत चतुर्भुज दास ॥

[६४७ अ]

प्र० ६२, ४, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

वनासपति मै अंबफल रस मै एक रसत ।
 कथा मध्य मधुमालती षट रति मधि वसत ॥
 लता मध्य पंनग लता सौंधन मै घनसार ।
 कथा मै मधुमालती आभूषण मै हार ॥

[द्वि० १ में अधिक :

सरिता मो गंगा अधिक देवन मो हरि नाम ।
कथा मांझ मधु मालती रूप सिमर अति काम ॥
देह मध्य ज्यौ नेत्र है रसिक मांझ निय औन ।
कथा अधिक मधुमालती तृया मध्य मुष मौन ॥
द्रव्य मध्य जो दान सुष दान मान सुष होइ ।
कथा मांझ मधुमालती मुक्त मुक्त तन सोइ ॥
सुधा मांझ भोजन अधिक भोजन घृत भरपूर ।
कथा सुनत मधुमालती घन मो नित ससि सूर ॥

तृ० १, च० १ में अधिक :

काम बिलास की येह कथा चतुर सुनो स्मित लाये ।
सुगन होय सुगहगहे निगनाये कहि न जाब ॥]
राजनीति की यामै साषी । पंचाख्यान बुधि इहां भाषी ।
चरनाएक चातुरी बनाई । थोरी थोरी सबहु आई ॥
फुनि बसंभ राजनीति गाथो । यामै ईसर को मद छाथो ।
लाकी एह बीला विसतारी । रसिकनि रसक अवन सुषकारी ॥
रसक होय सो रसकूँ चाहै । अघातम आतम अवगाहै ।
चातुर पूरष होइहैं जोई । एहे फल रस समझ सोई ॥
किस्नदेव को कुवर कहावै । प्रदुमन काम अस मधु गावै ।
पुत्र कलत्र सब सुष पावै । दुष दालद्र रोग नही आवै ॥
कामर्थी लभ्यते कामं निर्धनो धन प्रापते ।
अपुत्रं लभ्यते पुत्रं व्याधितस्य न पीडते ॥

[६४८ अ]

प्र० १, २, द्वि० १, तृ० १, च० १ :

संपूरन मधुमालती कलस भयो संपूर ।
सुरता (स्रोता) वकता सबनकूँ सुषदायक दुष दूर ॥

[६४८ आ]

प्र० १, २ :

कैसर के पति सामजी तिण उपमार महाराज ।
कनक बरनी कामनी तै पामीनै (पामीनै ?) आज ॥

च० १ :

केवल निम्नलिखित अश प्रति के फटे होने के कारण प्राप्त हैं :—

... ..

सुई न सुगना जिये राचही नूग ना सूं कही न जाये ॥

... .. जिये की लाज ।

सब बास जल मों रहै तो चकमक जेने आग ॥

... .. और बसे दूर के बास ।

नैना मो पर दौ भयौ सो प्राण तुमारे पास ॥

... .. ओर राखत रहियो चीत ।

प्रीतम पतिया प्रेम की सो बांचत रहियो नित ॥

काम बिलास कियत कथा चौपाई भरपूर ।

पढे गुने जेहि धरे सो करै बिलास कपूर ॥

—————

[सख्याएँ छद्मों की हैं ।]

३. चौवार < चतुर्द्वार = चार द्वारों के मङ्ग । नार < नारी । भूम < भूमि ।

४. कुरी छत्तीस = ३६ कुलों के लोग । मध्य युग में छत्तीस कुलों के लोग श्रेष्ठ माने जाते थे : विभिन्न रचनाओं में इनकी नामावली किंचित् भिन्न भिन्न है । स० १५३८ की रचित भाङ्ग व्यास कृत 'हम्मीर चउपई' में वह इस प्रकार है :

मदा वंदा दाहिमा जाणि । कछवाहा मेरा मुकि आणि ।
चारहडा वो डाणा अति भूभार । चापेला मिलिया तिह अपार ।
माठीय गवड़ तुंवर असंष । सुभट सेल चाल्या हसंत ।
डामिब डाडीय असि घणा हुण । डोडी डाआण पयाण रुण ।
गुहिलत गहिलं गोहिल राव । परमार पधारया अति उछाह ।
सोलकी सिंघल घणइ मंडाणि । चंदेल षाहडा नइ चहुआण ।
जाडा जादव महुउडा एव । सुरमा रणमल जाइ तेउ ।
राठवड मेवाडा निकुंइ । छत्तीस कुली मीलिआ रंभ ॥

(छंद १६६-१६७)

चीस = चीत्कार, चिंघाड़ ।

६. जाम < याम = प्रहर ।

७. ग्रह < गृह । अतेवर < अंतःपुर ।

८. अनोपम < अनुपम । ओर < अवर < अपर = अन्य ।

९. गज कपोतादि नायिका के विभिन्न अंगों के उपमान हैं ।

१०. सूर < सूर्य । अदेसा < अदेशः (फा०) = भय, विस्मय ।

११. लावण्य < लावण्य ।

१३. र (अरु, और) < अपर । और < अवर < अपर = अन्य ।

१४. सध < सधि । होइ : बहुवचन क्रियारूप के लिए एकवचन प्रयुक्त हुआ है । इस प्रकार का प्रयोग रचना में प्रायः मिलेगा । सुध < शुद्धि = स्मृति । अग्री < भृङ्ग : कौट विशेष जिसके सपर्क में आने पर घास का एक कौट भी भृङ्ग हो जाता है, ऐसा विश्वास है ।

१५. सैल < सैर (फा०) । दोली = रीझी, अनुरक्ता । मृगा < मृगी ।

१६. सेत < श्वेत = सफेद ।
 १८. घृत < मृत्यु ।
 १९. वात < वत्ता < वार्त्ता । चात्रुक < चातक = पपीहा ।
 २०. सजन < स्वजन = घर के लोग ।
 २१. चौस < तृषा ।
 २२. सुं < सउ < समम् = साथ । गोवल < गोकुल = गोकुल, गोधन ।
 २५. पिरोहित < पुरोहित । बौतिक < ज्यौतिष ।
 २६. प्रमोघ < प्रबोध ।
 २७. अवधार < अवधारय् = निश्चय करना । सार < शाला = पाठशाला ।
 अद्भ < अध्वन् = मार्ग, रास्ता । चउदै विद्या < चतुर्दश विद्या = चारवेद
 + छः वेदांग + पुराण + मीमांसा + न्याय + धर्मशास्त्र । तुल० राजा
 भोज चतुर्दश विद्या या चेतन सों हेत । (पद्मावत ४४६.६)
 २८. बोहोर (बहुरि) = पुनः । आएस < आदेश ।
 ३०. करम < कर्म-रेखा । लख् < लिख् = लिखना ।
 ३१. अतेवर < अतःपुर । भेव < भेद । दुज < द्विज ।
 ३२. अक्खर < अक्षर = शान ।
 ३३. घात = उत्कट इच्छा (!)
 ३४. सांक < शंका । चिन (चीन) < चिह्न । नई < गइ = निश्चय ही ।
 ३६. परेच = परदा ।
 ३७. सच = सुख ।
 ४०. उपन् < उत् + पत् = उत्पन्न होना ।
 ४१. विचषण < विचक्षण ।
 ४४. सच = सुख ।
 ४४. कक्का = ककहरा । बारखरी = बारहसड़ी, विभिन्न अक्षरों के साथ
 मात्राओं का प्रयोग ।
 ४६. चाणायक < चाणक्य = चाणक्य नीति, राजनीतिशास्त्र । सारस्वत <
 सारस्वत = सारस्वत चट्टिका । लीलावति < लीलावती = इस नाम का
 प्रसिद्ध गणित ग्रंथ ।
 ४८. चुंघ (चोप) = उत्कट इच्छा । अस < एवं = इस प्रकार । सरस <
 सदृश = समान ।
 ४९. बक्के < विवेक । सरस < सदृश = समान ।

५०. आरन < अरन्ध । गूढ < गुह्य = गोपनीय बात । मैन < मयण < मदन
कामदेव ।

५२. गैद < कदुक = गैद ।

५४. मयन < मयण < मदन = काम । ढोल् = ढुलकाना, गिराना ।

५५. गैद < कदुक = गैद ।

५६. तलत्र (फा०) = इच्छा ।

५८. सेंवर < शाल्मली । अत्र < आम्र ।

५९. राता < रत्त < रक्त = लाल ।

६०. चंच < चञ्चु । ठकोर् = ठोक लगाना ।

६१. बपरा < वप्पुडा (अप०) = बेचारा । बफेरा < वप्पीअ + डा = पपीहा ।
चूछिम < तुच्छ = पतली, हलकी ।

६२. ताम < तावत् = तब तक ।

६३. सैन < सकेत । मैन < मयण < मदन । गल = बात ।

६४. सघ् < सं + घा = साँभना, लगाना, जोड़ना ।

६५. केत < कियत् = कितना ही । सीघन < सिंहिनी ।

६८. नीला : नीले : बहुवचन विशेषण के स्थान पर एक वचन विशेषण
का प्रयोग किया गया है, ऐसा प्रायः मिल जाता है । महमत्त <
मयमत्त < मदमत्त । गारो < गौरव = गुरुता, अभिमान ।

६९. भरण < क्षरण । ईछ् = इच्छा करना । ठोह < स्थान । हरक
< हलुअ < लघुक = हलका ।

७०. पुलाई < पलायित = भागकर ।

७१. साषी < साक्षी = गवाह ।

७२. नहचो < निश्चय ।

७७. पतीब् < पत्तिअ < प्रति + इ = प्रतीति करना । घूहड < घूअ + डा <
घूक = उल्लू ।

८२. क्रूर < कूट = कुटिल । पै < परि (?) = हो न हो ।

८३. सलक् = सरकना, भागना ।

८४. पेल् < प्रेरय् = ठेलना । सिल < शिला । चूरय् = चूर्ष करना ।

टीटोरी < टिट्टिम । हड < अड = अडा । सायर < सागर । अंच् =
खींचना ।

८५. बात < वत्ता < वार्ता ।

८६. सु < समम् = साथ

८६. सार् < सारय् = ठीक करना, दुस्त करना । मारी (मारिअ) = मारिए ।

९१. भूक्त < युद्ध ।

९३. साकर < सक्कर < शर्करा । पावग < पावक । लाकर < लक्कड < लकुट लकड़ी ।

९५. जन (जानु) = मानो ।

९६. सवन < श्रवण = कान । ती (थी ?) = से ।

९७. गोस (अप०) = प्रभात ।

९८. सु < समम् = साथ ।

१००. मदर < मन्दिर = भवन, प्रासाद ।

१०१. मिदर < मन्दिर = भवन, प्रासाद ।

१०३. सरलोक = श्लोक ।

१०४. छास = छाछ, मठा ।

१०५. सरभर = बराबरी ।

१०६. कूषमाडि < कुष्माण्ड = कुम्हडा । चीन < चिण < चि = चुनना, तोड़ना ।

१०७. ध्रुवत < ध्रुववत् = ध्रुव के समान ।

१०१. धीघाय् = धिधिआना ।

१११. बसी = वश में हुआ ।

११५. सच = सुख ।

११६. गाह < गाथा ।

१२१. अखिर < अक्षर = ज्ञान ।

१२३. समीय < समिह < समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

१२५. अछया < इच्छा ।

१२६. गारो < गुरु = मारी ।

१२६. सयल < सैर (फ्रा०) ।

१३०. मोरा = मोला-माला, निरीह ।

१३१. गीघा < गिद्ध < गृध्र = आसक्त, लम्पट, लोलुप ।

१३२. असा = ऐसा ।

१३३. सयल < सैर (फा०) । दुलाय् = दुराना, छिपाना ।

१३४. बेरी < वेला = बार ।

१३६. जीतव = जीना, बीवन ।

१३६. पारय् = डालना ।

१४१. समियो समिइ < समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

१४२. कासी < कासिअ < कासित = छीक । बीह = भय ।

१४४. सेल (दे०) = बाण, बछ्छा, माला ।

१४८. घाट = चिल्लाहट ।

१५६. समीय < समिइ < समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

१५८. सुहाग = सुहागा ।

१६२. समीयो < समिइ < समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।

१६३. असा = ऐसा ।

१६५. सगर < सकल । गाह < गाथा ।

१६६. एता < इयत् = इतना ।

१६८. तारा कुची = ताला-कुंजी ।

१६६. नै (नइ) = को । मडवाना = मँडौवा, उपहास-काव्य । कौरी < कुमारिका ।

१७०. रडी = राँड, विषवा ।

१७१. घी < दुहिता = कन्या ।

१७२. हढाय् = हढ़तापूर्वक निश्चय करना ।

१७७. सरवन < श्रवण = कान ।

१७५. उपाअ < उत्पादय् = उत्पन्न करना ।

१७६. परवार < परिवार ।

१००. इछ् = इच्छा करना । बारी < बालिका । भव = जन्म ।

१८१. हारिल की लकरी : टेक : प्रसिद्ध है कि हारिल पक्षी या तो वृद्ध बन रहता है और यदि वह भूमि पर उतरता भी है तो वह चंगुल में कोई लकड़ी का टुकड़ा लिए रहता है ।

१८२. सवन < श्रवण = कान ।

१८४. काइ < किम् = क्या ।

१८६. मगर < मकर = षड्रियाल, जलजन्तु विशेष । मकोडा < मकोड [दे०]
= कीट विशेष, चींटा । हरियल = हारिल पत्नी (दे० ऊपर १०१ की
टिप्पणी) । काठी < काष्ठ = लकड़ी । ये समस्त अपनी टेक के लिए
प्रसिद्ध हैं, मगर जिसे पकड़ लेता है, छोड़ता नहीं, भले ही उसे प्राण
गँवाने पड़े, चींटा भी इसी प्रकार पकड़ लेने पर छोड़ता नहीं, भले ही
वह टुकड़े टुकड़े हो जाए, हारिल लकड़ी की टेक के लिए प्रसिद्ध ही है,
काठ एक सीमा तक झुकाया जा सकता है, उसके बाद नहीं झुकता
भले ही टूट जाए ।

१८७. नारेल < नालिकेर = नारियल, फलदान का नारियल ।

१८८. हथलेवा = पाणिग्रहण ।

१८९. चौरी = वेदिका । फटुकना = रीति-विशेष । सह < सद्य (?)
डाइजा = दायज । जसा = जैसा ।

१९०. सोवण = शयन-कक्ष ।

१९१. सेक < शय्या । अनुसारय् = पीछे-पीछे ले जाना । आरि = हठ, अड़
टेक = सहारा लेना ।

१९२. चेज < चोज < चौय = चोरी, छिपकर भेद लेना । माकसी =
वदीग्रह (?) ।

१९३. पान < पाणि = हाथ । फरस् = स्पर्श करना । दाभ् = दग्ध करना ।

१९४. काक < काकु ।

१९५. अहरनिस < अहर्निश = रात दिन ।

१९६. ब्रषभ < वृषभ = बैल [जैसा मूर्ख प्रेमी] । गार् = गाड़ना ।

१९८. जामै < जिस [के शरीर] में ।

१९९. अवर < अपर = और, अन्य बात ।

२०१. सैन < सकेत ।

२०३. बिसहर < बिसधर = सप ।

२०६. तास सु = उषसे, उसको ।

२१०. तप < तप्प < तल्प = बिछावन । तीख < तिक्ख < तीक्ष्ण = शस्त्र,
हथियार । गरथ्य < ग्रथ = घन । कोरा = अछूता । भोलु = भोला
मनुष्य ।

२११. इचारत < इशारा (फ्रा०) = संकेत ।

२१४. केता < कियत् = कितना । यहाँ भी एक वचन विशेषण बहुवचन अर्थ मे प्रयुक्त हुआ है । अयान < अज्ञान ।
२१५. आंधी = अघी ।
२१६. हंस = सूर्य (?) । टे (दर्ई) = दी (?) । उतपति = सृष्टि का आदि ।
२१७. किरच = कौच की गुरिया (माले की मणि) ।
२१८. तूट् = त्रुटित होना, टूटना । पाई (पाइय) = पाउए । जाई (जाइय) = जाइए ।
२२३. गोरा = गोला, गोलियों । अड अड = 'हडहड' करते हुए ।
२२४. फरस = स्पर्श करना ।
२२६. मनवा = गायमुनी पत्नी । जार = जाल । सकाय् = रोका जाना ।
मैन < मयण < मदन = काम ।
२३४. भख् = भौंकना ।
२३५. चाह् = देखना ।
२३६. कित < कियत् = कितना ।
२४०. कोर = छिद्र करना । अली = भ्रमर ।
२४६. उराह (उराह) = उरोंकी । कित < कियत् = कितना । चानक < चाणक्य = कूटनीति ।
२४८. पटा = परदा [जो जब मालती मधु के साथ पढ़ रही थी, दोनों के बीच मे बंधा हुआ था] ।
२४०. पचार = चुनौती देना । आयस < आदेश । सयन < संकेत ।
२५१. रयणी < रजनी । मण् = कहना । राहु = बधिक, चिड़ियों को फँसाने वाला । विह < विधि ।
२५२. चित्रसर < चित्रशाला = चित्रसारी । सच = सुख ।
२५३. आ = यह । पजर = पिंजडा । नाश् = डालना ।
२५४. येता < इयत् = इतना । बागुर = पागुर (रोमन्थ) की हुई वस्तु ।
२५६. बारी < बालिका ।
२५७. ग्रम < गर्भ ।
२५८. भाहुं < भाद्रपद = भादौ मास । भाइ < भाव ।
२५९. बिगूच् = विगुप्त होना [विगुप्त होने (पोल खुलने) से फजोहित में पड़ना] । ढूक् = जा पड़ना ।

२६२. कित < कियत् = कितना भी । असी = ऐसी । निदानी = समाप्त होनेवाली ।

२६७. दन्व < द्रव्य । लछु < लक्ष् = लाख ।

२६८. काक < काकु । जुग < जगत् = ससार ।

२७२. मृगमद = मृग के शरीर का मद—कस्तूरी । स्वातिष्ठुत = मुक्ता ।

२७३. अतर < यत्र ।

२७५. पटल = समूह, मंचात । क्रम < कर्म ।

२७८. चात्रग < चातक = पपीहा । लु (लौ) = सदृश । वेही < विद्ध = बेधी हुई ।

२८१. पखाल् < प्रक्षालय् = धोना । गरज < गरज (फा०) । समियो समिह < समिति = सभा, युद्ध ।

२८३. दाद (फा०) = सहायता ।

२८४. आम < अन्म < अभ्र = आकाश । नीपज् = निष्पादित होना, उत्पन्न होना । छेह < छेअ < छेद = नाश, विनाश, कमी, न्यूनता ।

२८५. अत्र < आम्र ।

२८६. छाहा < छाया । और < अवर < अपर ।

२८९. वोछु < तुच्छ । जाई (जाइय) = जाइए ।

२९०. घ्याल = खेल, खिलवाड़ ।

२९१. पख (पक ?) < पक्क (?) ।

२९३. चलन लचाऊ = चरणों में रचा लूँ ।

२९४. होइ = होते हैं : एकवचन क्रिया रूप का प्रयोग बहुवचन अर्थ में किया गया है । सहु = समस्त । अर अपर = और ।

२९५. सुद्धि < शुद्धि = खबर । कम < कम = कार्य ।

२९६. बैस < वयस् = अवस्था ।

२९७. नेवर < नूपुर = चरणों का आभरण-विशेष ।

२९९. किर < किल = अवश्य ही ।

३०१. इत < चित = विचार । असारत < इशारा (फा०) = संकेत । साब् < सधा = जोड़ना, लगाना ।

३०२. उमी < ऊर्ध्वित = खड़ी । नै (नइ) = को । समल < समल्लिअ = सम्बद्ध ।

३०४. कूर < क्रूर = कुटिल, निर्दय ।

३०५. मुसट = मोन ।

३०६. आक < अक्क < अर्क = मदार ।
 ३०७. कटाई = कटीला पौदा ।
 ३०८. फरस् = स्पर्श करना ।
 ३०९. आकर = खानि, समूह ।
 ३११. केस् < किंशुक = पलाश का फूल ।
 ३१५. मनछा < मनसा । अनत < अन्यत्र । सूक् = शुष्क होना ।
 ३१६. ओर < अवर < अपर = और, अन्य ।
 ३२२. पाडल < पाटल = पॉडर, वृक्ष-विशेष ।
 ३२४. बाकुल < व्याकुल ।
 ३२६. बाहर < जाहिर (फा०) = प्रकट । चीन् = पहचानना ।
 ३२८. सेवती < शत पत्रिका = लता-विशेष ।
 ३३१. सैल < सैर (फा०) = घूमना-फिरना ।
 ३३३. किति < कियत् = कितना ।
 ३३४. बार् < ज्वालय् = जलाना ।
 ३३५. हेम < हिम = पाला ।
 ३४१. जुग < जगत् ।
 ३४२. सूक् = शुष्क होना ।
 ३४३. कूड < कूट = असत्य, छलयुक्त ।
 ३४६. दाख् < दर्शय् = दिखाना ।
 ३५०. कोक (कोक) < काकु ।
 ३५१. जान < ज्ञान ।
 ३५३. अतरेष < अन्तरिक्ष ।
 ३५४. समो < समय = प्रसंग ।
 ३५६. तहे < तथा उस प्रकार ।
 ३६१. नागरवेलि < नागवल्ली = लता विशेष । मडफ < मण्डप ।
 ३१२. जै < यदा = जब ।
 ३६४. मूर < मूल = जड़ ।
 ३६५. फरस् = स्पर्श करना ।
 ३६७. सुद्धि < शुद्धि = समाचार ।
 ३६८. धरी < धरिअ < धृत = धारण की हुई । हेम = स्वर्ण ।

३७४. गच (फा०) = चूना । धौलहर < धवलग्रह = प्रासाद ।
 ३७६. बरिका < बालिका । सुद्धि < शुद्धि = खबर, समाचार ।
 ३८१. विणजारा < वाणिज्य कारक = व्यापारी, जो पहले चैलो घोड़ों आदि पर अपना सौदा लाद कर एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते रहते थे ।
 ३८५. तञ्ज = ज्ञानी ।
 ३८६. वाति < क्षान्ति = क्षमा ।
 ३८७. दरसन < दशन = दाँत ।
 ३८८. दन्धन < दक्षिण नायक । अनुकूल = अनुकूल नायक ।
 ३९२. उकील < वकील (फा०) = प्रतिनिधि, दूत ।
 ३९४. आथे = इससे ।
 ३९५. छीव् = छूना । तेकु = तुमको । भिख्या < भिक्षा ।
 ४०१. परेच = परदा । भाख् = भाँकना ।
 ४०३. करवत < करपत्र = आरा : पहले लोग मुकिलाभ के लिए कभी कभी तीर्थों में आरे से सिर चिरवाते थे । कारी < कालीय = कालानाग । कारी-रसना = सर्प की जिह्वा जो बीच से फटी होती है ।
 ४०४. सुह् < भू = भौंह । कलम < कलम (फा०) = तुलिका । नावक = एक प्रकार का छोटा धनुष : तुल० सतसईया के दोहरे ज्यों नावक के तीर ।
 ४०५. आरन < अरण्य = वन ।
 ४०६. कैसु < किशुक = पलाश का पुष्प । सूक < शुक्र = सुआ, तोता । रोह् = अवरोध करना, रोकना ।
 ४०७. निरहार् = निर्धारण करना । मुसक् = मुस्काना ।
 ४०८. समुक < चिबुक ।
 ४०९. बान < वण्य < वर्ण ।
 ४१०. स्यंभू < शम्भु । कुंज < कञ्ज = कमल । खमक : वस्त्र-विशेष (?) ।
 ४११. अतलस : वस्त्र विशेष । जरकस : वस्त्र-विशेष । सग्गट < सिग्ग (दे०) = श्रान्त । वग < व्यग्र ।
 ४१३. कनीर < कर्णिकार = कनैर ।
 ४१४. पैड़ी = पैरी, सोढ़ी ।
 ४१५. संघा = जोड़ना, लगाना ।
 ४१६. पाघर < पद्धर [दे०] = ऋजु, सरल, सीधा । तरकस (तर्कस) = तूणीर ।

४१७. नूपर < नूपुर । रव् = शब्द करना । सर < शूर = योद्धा ।
 ४२१. पाउक < पावक = अग्नि ।
 ४२२. भाग् = भंग करना, तोड़ना ।
 ४२५. बार < बाल = बालक ।
 ४२७. सेर < सहर < स्वैर = स्वेच्छा, स्वच्छन्दता ।
 ४२६. मूक् < मुच् = खोलना, निकालना ।
 ४३६. अवर < अपर = अन्य ।
 ४३६. तरम = नरम, मुलायम । माकर < मर्कट = बन्दर ।
 ४४०. साघ < सघा = जोड़ना ।
 ४४६. जै < जह् < यदि । ग्रथ = पुँजी, धन ।
 ४५३. समीय < समिह् < समिति = सभा, युद्ध, लड़ाई ।
 ४५४. जसु < यस्य = जिसका । अवर < अपर = अन्य ।
 ४५५. पुलदग्नि < पुरन्ध्री ।
 ४५६. बारी < बाटिका । सयल < सैर (फा०) घूमना-फिरना ।
 ४५८ जाह् < जाती = जाही पुष्प । जूही < यूथिका = पुष्प-विशेष ।
 ४६१. सखिह्न < सखीअण < सखी-गण ।
 ४६३. वु = वह ।
 ४६५. फरस् = स्पर्श करना । करसी < कलश ।
 ४६६. सहेट < सकैत = मिलन स्थल । रयणि < रजनी । समिय < समिह् < समिति । < समय ।
 ४६७. अछा < इच्छा ।
 ४६८. बरिया < वेला ।
 ४७०. कवाण । कुवाण < कमान = धनुष ।
 ४७५. आवध < आयुध ।
 ४८१. मुख = सम्मुख । सुद्धि < शुद्धि = खबर ।
 ४८३. प्रतीत < प्रतीति ।
 ४८५. सव < शत = सौ ।
 ४८७. को = कोई । कुमल < कुमक (फा०) = सेना । परचक्री = देवशक्ति ।
 ४८८. सुं < सउं < सयम् = साथ ।
 ४८९. वाड = बाट, तोलने की वजन । बाढ़ = बढ़ना, अधिक अथवा व्यर्थ का होना ।

४६२. कुटम < कुटुम्भ ।

४६३. मोहाल < महाल (फा०) = टोला ।

४६४. पुरषातन < पुरुषत्व ।

४६५. ऊषर < उलूषल = ओखली । आन < अन्न ।

४६७. खत्री < क्षत्रिय । मुख = सम्मुख । आवध = आयुध ।

४६८. साखि < साक्ष्य । आ = यह । बिन् = बीनना, चुनना ।

४६९. बिहड < विखण्ड ।

५००. चीस < चीत्कार । लूट < लुट् = लोटना ।

५०४. हाएल < हायल (फा०) = बीच में आड़ करनेवाला ।

५०५. कुमख < कुमक = सेना ।

५०८. परचक्री = देवशक्ति । आयस < आदेश ।

५०० बानीया < वणिक् ।

५११. जुग < जगत् = ससार ।

५१२. तो = तुम ।

५१३. अनेरी < अणेलिस < अनीदश = अनुपम, असाधारण ।

५१४. मुहाल < महाल = टोली ।

५१५. कंडर < कन्दर = कन्दरा । लसकोरी = चिमटेवाली (?) ।

५१७. नह < नख ।

५२०. मुहाल < महाल = टोली । अते < इयत् = इतना ।

५२१. दाग् = दाघ करना, जलाना ।

५२२. मुहाल < महाल = टोली ।

५२३. बीछू < वृश्चिक् = बिच्छू ।

५२४. तार = चमकीले । अपाय = बेवस । मात < मत्त । मत् = चिन्तन करना ।
कवाण < कमान (फा०) = धनुष । नेजा (फा०) = भाला ।

५२५. जमवर < यमदंष्ट्रा = एक प्रकार की तलवार । गुर्ज (फा०) = एक प्रकार की गदा ।

५२६. अखूट् < (खुट् = टूटना, क्षीण होना) । आवध < आयुध । नेर < निकट ।

५२६. नाश् = डालना ।

५३०. पोकर = पुकार ।

५३१. परचक्री = देव-शक्ति । सरह < शरभ । शलभ । आप < आत्म =
आत्म गौरव ।

५३४. दाभ् = दग्ध होना ।
 ५३६. परचक्री = देवशक्ति ।
 ५३७. अन्यत < अन्यत्र ।
 ५४५. कुमख < कुमक = सेना ।
 ५४६. दासी = चरण दासी = जूती ।
 ५५२. दोह : मधु तथा मालती ।
 ५५३. हज्जा = धावा । सार = फौलाद । भलका = भाला ।
 ५५६. मुहाल < महाल (फा०) = टोली ।
 ५५८. चखि < चक्षु = आँख ।
 ५६०. दह < दश । षड = तृण, घास ।
 ५६२. विहड < विलगड ।
 ५६५. स्याम < स्वामिन् = पति ।
 ५६७. अवर < अपर । अनकी = इनकी ।
 ५६८. खयाल = खेल, खिलवाड़, लीला ।
 ५७१. सोरी < शावर । नै (नह) = को ।
 ५७५. जादू < यादव ।
 ५७६. धीरप < धीरत्त्व । भव = जन्म ।
 ५७७. अयानप < अज्ञानत्त्व ।
 ५७८. जप् = कहना ।
 ५८२. दस रूप = दशावतार । ब्रमा < ब्रह्मा ।
 ५८८. बार = स्तुति, प्रार्थना । दाद (फा०) = न्याय ।
 ५९०. मुसाल < मशाल (फा०) । चच < चञ्चु = चोंच । कातर < कर्त्तरी =
 कैची । उर (ओर) < अवर < अपर = अन्य ।
 ५९१. गिर < गिरि = पर्वत ।
 ५९४. सिंहार् < संहार करना । मू'ड = शूकर ।
 ५९८. यत्री < यन्त्रित । सासा < संशय ।
 ६००. जे < जइ < यदि । सामुद्रक < सामुद्रिक = लवण ।
 ६०३. चाणायक < चाणक्य ।
 ६०६. अयान < अज्ञान ।
 ६०९. अंत्री = यत्र मत्र का प्रयोग करनेवाला ।
 ६१६. बरदाई = वर पाया हुआ । मरजाद < मर्यादा ।

६१७. आन < आज्ञा । थिरता < स्थिरता ।
६२१. स्याम < स्वामिन् = स्वामी ।
६२२. चोरासी लष : चौरासी लक्ष्य योनियाँ ।
६२५. आन < आज्ञा ।
६२८. बे < द्वय = दो ।
६३२. अवधार < अवधारय् = निश्चय करना ।
६३४. नालकेल < नालिकेर = नारियल ।
६३७. न्योतैपात < निमन्त्रण-पत्र ।
६३८. आन < अन्न । चाट् = चढ़ाना ।
६३९. निसाण = घौसा ।
६४३. किसहै = किसे ।

मधुमालती रसविलास

श्री रामचद्रायनमो । श्री गणेशायनमो । श्री संतजनायनमो ।

॥ श्री श्री ॥

अथ श्री मधुमालती रस विलास लिषते

दोहा

नमसकार मो माधवा श्री गुरु परम उदार ।

जाहि कृपा तैं जगत भव निहचै उतरैं पार ॥ १ ॥

चौपई

वर विरंचि तनया बर पाऊं । सकर सुत गनिपति सिर नाऊं ।
चापुर चित हित सहित रिभाऊं । मधु मालती प्रीति रस गाऊं ॥२॥
लीलावती ललित येक देसा । चंद्रसेन जिहां सुषड नरेसा ।
सुआ धाम धुन गगनिप बैसा । मांनौ सब विधि रच्य महेसा ॥३॥
बसई पर पुर जोजन चारु । चौरासी चौहटा चौवारु ।
अति विचित्र दीसैं नर नारी । मांनौ तिलक सब चवन मंभारि ॥४॥
करैं सेव कुल निप छतीस । चढै सहस दस नावैं सीस ।
वरैंदि मत कुजर करैं च'स । करैं राज जहां वौह विधि ईस ॥५॥

सोरठाँ

हय दल अत न पार कुवर कारे मेघ ज्यौ ।

कुल छतीसौ साजि चढ़ै द्वारि नृप चंद कै ॥ ६ ॥

चौपई

मत्री बुधि पराक्रम नाम । तारन (तारन) सह जास कौ नाम ।
निप कै अंतेवरि त्रीय चारि । सतति येक मालती कंवारि ॥७॥
बरनौ कहां रूप की अपार । मांनौ सची लखौ अवतार ।
वपमां कौन पटंतर कहुं । गुन अनेक छबि पार न लहुं ॥८॥
दिन दिन रूप अनुपम चढै । असी और न बिधना गढै ।
गज कपोत हरि बिंब प्रबाल । अंगी मधुकर मीन मराल ॥९॥
कदली की सोमा अति सोइ । तैंति समान नही छबि कोइ ।
जा दीठां चित चलै मुनेसा । दर्षे धरनी ढरै सेसा ॥१०॥

सुर भुलै धरि जीय अदेसा । मानो ससि की छांह परेसा ।
 राजलोक बरनन कित कहु । थोरी सी मंत्री की लहु ॥११॥
 थोरे मां कि बौहत सुष होय । अति लांवनि जिन राचौ कोय ।
 तारन साह सुहड गुन सार । त्रीया येक तसु येक कवार ॥१२॥
 जाकौ नांव मनौहर धख्यौ । मानौ कांम सही श्रौतख्यौ ।
 जनम लखौ कोई करम कुसाजि । नातर सही मदन सुरराज ॥१३॥
 मधु मधु जाहि बुलावै तात । बाढै मांनु कला निधि गात ।
 भयौ बरस दस है कै मौर । निरषत त्रीया होय राति और ॥१४॥
 नित नित कंवर करै कहुं सैल । दौली फिरै त्रीया तब गैल ।
 कबहुं क राम सरोवरि जाय । अगनि जुथ मानो चौकि भुलाय ॥१५॥

दोहौ

राम सरोवर ताल की सोभा कही न जाय ।
 सेत अरुन पंकज तहां मुनिवर रहे लुकाय ॥१६॥

चौपई

सोभा बहुत राम सर कहैं । वाहै विधि तहां बिहंगम रहैं ।
 प्रफुलित कमल बास गहमहै । वपमां मांनु राम सर लहै ॥१७॥
 त्रीया जिनी येक जल कौ भरैं । चितवत कुंभ सीस तैं ढरैं ।
 सो बातैं सब ही जानई । मधु निरख्यैं तैंहि यह गति भई ॥१८॥
 यह बात मालती सुनि पाई । मधु है सकल रूप सुखदाई ।
 तब ही मालति मन में आई । किणि विधि मधु देख्यै ही जाई ॥१९॥
 मन की किणि ही कहि न सुनावै । जेसे बिहंग बुंद कौ ध्यावै ।
 येक दिन मन में साह कै आई । मधु के चरित सुने करि राई ॥२०॥
 बिजिहै सुनि हम कु तैंहि बारा । तातैं अब करि पीय पयारा ।
 मधु को कहै पिता बड गयात । पढौ पुत्र विद्या विषात ॥२१॥
 अब तैं अनत कहैं जिन रहौ । पंडित कै ढिग बैठन चहौ ।
 विद्या बिना सोभ नही पावै । बिद्या बिना ग्यांन नही आवै ॥२२॥
 बिद्या बिना घर नां होइ । विद्या बिना जनम बल षोई ।
 दोष दोष लोचन पसु पछी नर । तीन ज लोचन विद्या केवर ॥२३॥
 लोचन सपत धरम जो करै । ग्यांनी लोचन अनत ही घरै ।
 लख ही पंडित परम सुजांन । बेगि बुलायौ निधि परधान ॥२४॥

कह्यौ पढावा मधु कौ सोय । जातैं करम आपनौ होय ।
 तब ही महौरत पंडित लेय । मधु कौ विद्या बहुविधि देय ॥२५॥
 जेते अछिर पंडित कहै । ते ते कवर कठ ले गेहै ।
 येक दिना मंत्री कौ राय । पुछन लग्यै बात सुष भाय ॥२६॥
 कहा रहै मधु निकट य आवै । साह कहै दिन पढि र गवावै ।
 बरस साठि पैसठि कै अति । पंडित हैय महा गुनवंत ॥२७॥
 सुनि कै निप औं पै पयरै । जौ मालती पढिवे की करै ।
 तौ ज पढायां कछुक सोय । भीतरि जाय बुझिहौं लोय ॥२८॥

दोहो

काली कलम कपाल की विधना लिखी सुभाय ।
 मधु मालती मिलाप कौ लागौ हुन वपान ॥२९॥

चौपई

गयो राय अतेवरि जहां । कनक माल रानी ही तहां ।
 राखी प्रति पुछै यह भेव । पंडित येक महा दिजदेव ॥३०॥

दोहो

राखी पहली मालती कहै बयन तब राय ।
 मेरे मन भी पढन की सो नित्य मिली ज आय ॥३१॥

चौपई

मन मैं सांसौ भयौ भुवाल । देखि तबहि मालती बिसाल ।
 कन्या वर प्रापत कुं भई । बेगि वपाय करनौ अव दई ॥३२॥
 छिनक वार चिंता हम करी । फिरि मन मांहै अवरै धरी ।
 पढिवे कारनि लागी रहै । तौलुं बर दुहु निप कहै ॥३३॥
 चंद्रसेनि पुनि रांनी कहै । पंडित ढिग मंत्री सुत रहै ।
 ताकौ कीजै कौन वपाय । रहत संदेह मांहि मन आय ॥३४॥
 मंत्री पुत्र नाम जब कह्यो । सुनि मालती जीय सुष लह्यो ।
 जाकै मनि मिलिवे की तोस । मनसा कौ दाता जगदीस ॥३५॥
 रानी कहै पढैवो तहां । पट परेष बंधियौ जहां ।
 मालती कहै होह कीउ जाम । मेरै येक विद्या सुं काम ॥३६॥
 यौं ज बचन निपि सुनि कै पायौ । तब ही पंडित बेगि बुलायौ ।
 पट परेच आढी तहां भई । पढिवै कौ पाटी लिपि दई ॥३७॥

जो जो अछिरि पंडित देय । सो मालती सबै लिखि लेय ।
 नांवा बांचै आराम गही । मानौ बंदर मांझि ही पढी ॥३८॥
 मंत्री सुत कछु अधिकौ पढौ । तब मालती चौप चित चढौ ।
 निमष येक मे लेय मिलाय । दोऊ दसन बरने जाय ॥३९॥
 पट परेच कै वोहित रहैं । बचन ववेक परसपर कहैं ।
 मधु मालती दोऊ परबीन । दोऊ अधिक कोऊ नहि हीन ॥४०॥
 येक दिना गुर बन कुं गयौ । मन मैं गुन मालती थयौ ।
 जब परेच ढिग भरी के नै [न] । निरण्यौ मधु जैसौ ही मैं ॥४१॥

सो [र] ठौ

भई बिरह बर नारि मधु मुरति निरण्यौ जहां ।
 कीजै कौन वपाय मन मैं थौ सोचन लगी ॥४२॥

चौपई

मालती तबै परेच ज फारी । कर गहि दई फूल की मारी ।
 लागत मधु ऊचौ सौ देख्यौ । मालती बदन चंद सौ पेख्यौ ॥४३॥

सोरठौ

चितवन चाख्यो (चारयो) नैन मानौ लाये बानवरि ।
 प्रगठ्यै (प्रगठ्यौ) मदन जलाय प्रीत हेत मधु मालती ॥४४॥

चौपई

मधु तौ सकुचि तबै यौ करी । नीचा दिसटि धरनि मैं धरी ।
 तब मालती अैसे जस भारौ । मधु ऊपरि फिरि फूल ज डारौ ॥४५॥
 मालती निकटि पठैवन सोय । तौ परबीन सदन विधि होय ॥

सोरठौ

तू ज रह्यै (रह्यौ) मुख मोरि हुं निरखुं तुव बदन कुं ।
 कुंन सयानप तोहि बोली अैसे मालती ॥४६॥

चौपई

मालती वाच :

मधुर महाफल देखि रसोई । खायें बिन ना रहै ज कोई ।

फल न छोडि ज देखि र नैना । कहत सकल हैं अैसे बैना ॥४७॥

मधु वाच :

चंद्रायन फल सुंदर होय । पावै कुं ईछै ना कोय ।

बिन लुकै जो चपै जोई । तहि समान ना मुरिष कोई ॥४८॥

मालती वाच :

भरे सरोवर मै रहै प्यासो । फले ब्रिछ जित रहै निरासो ।
कैसे कै ताही कु कहिये । पुनि ताको वतर क्यै (क्यौ) लहिये ॥४६॥

मधु वाच :

फल की भुष न जल की प्यासै । मैं न रंग तैं रहै बुदासै ।
मेरे बयन जोय चित दीजे । भागै ताकी पीठि न कीजे ॥५०॥
मधु मालती सी बौहतैं टारै । मालती यह मनसा नही डारै ।
मधु तब (?) येक अपरब्र बात । पटतर दई मालती गात ॥५१॥

दोहो

बाढै सकनि सनेह अग सिंघनि जैसी भई ।
मधु जेपै गति नेह समझि देखि जीय मालती ॥५२॥

चौपई

मालती मधु कौ सबद सुनावै । अग सिंघनि की बात बतावै ।
कैसे भई सोय हम कहिजे । लै विचार जाको कछु एहिजै ॥५३॥
मधु जेपै हु कितेक जाऊं । जौ बुझै तौं तनक सुनाऊं ।
येक अगि अति कांम कौ मातौ । अगिनि मांझ रहै रस मांतौ ॥५४॥
चरै हस्यै तिण निस दिन सारौ । अति रसमंत भयो जीय गारौ ।
नौ दस अगिनि मांहि हजारौ । जासै बल बौह सायर कारौ ॥५५॥
दूजै बनि येक सिंघनि रहई । बिरह विथा बौहते तन सहई ।
येक दौस सिंघनि अग देख्यौ । अति मैमंत जुपरमधि पेध्यौ ॥५६॥
तवही सिंघनि लागी जरना । प्रगळ्यै काम महादुष भरना ।
मन मैं आई प्रीतम करिये । हिरन कनै जाय रहि रहिये ॥५७॥
अग केहरी की चाल ज पाई । बेगि ठिकानो चले पुलाई ।
तब ही सिंघनि नीयरैं आई । धिर हो अगि भाजौ मति जाई ॥५८॥
तेरे जीय की रखया करिहुं । मनसा वाचा तैं चित धरिहुं ।
याके पवन सूर हैं साषी । अैसे सति सति कहि भाषी ॥५९॥
जौ अपनौ छित ठाहर राषै । बात कहां यौं सिंघनि भाषै ।
तोको अपनी पीर सुनाऊं । जौ हुं तेरी आज्ञा पाऊं ॥६०॥
मेरे तन कुं बिरह मतावै । ज्यावै जौ तब पीर बुझावै ।
हुं तुम कौ यह जाचन आई । हूँ प्रीतम मुझ करौ सहाई ॥६१॥

सिंघनि प्रति बोलेयै अग कारो । तुम तैं नही हमारौ चारौ ।
 मोहि तुम्हरौ साच न आवै । कपट रूप तोहि को पतियावै ॥६२॥
 तू अपनै मारगि किन जाई । मोकु छलन हतन क्यैं धाई ।
 कुंवर बिना न सिंघ सिघारै । अग कुं कहा बिसासै मारै ॥६३॥
 पूरिब बैर जाहि जेहि होई । ताके बचन न मानै कोई ।
 मै ज सुनी है येक कहांनी । तातैं ना मानै तुम बानी ॥६४॥
 सिंघनि अग कु पुछै अैसे । कौन कहानी कहियो कैसे ।
 हिरन कहै सुनि जीव हतारी । बात कहत ही जिन मोहि मारी ॥६५॥
 येक ठौर घूघन बौहतेरे । रहैं रैन दिन सुष के घेरे ।
 तिन मै अलिमरदन बढ राजा । करै सकल घूघन के काजा ॥६६॥
 येक दिना सब कागनि ठानी । मारौ घूघनि करौ पुतानी ।
 तिन मधि येक काग बुधिबंता । कहै सबद सबस्यैं विरदता ॥६७॥
 काचौ मत्र न कबहुं कीजे । हुं ज कहौ तिण ही विधि कीजे ।
 मीठे बच[न] कहौ बन जायर । कहौ सबै हम तुमरे चाकर ॥६८॥
 वै तुम कौ कीजै गो जबही । जारैगे बनकुं मिलि सबही ।
 अ विधि काज भलौ किन कीजे । गुड तैं मरे सो विष का दीजे ॥६९॥
 मेघ बरन कागन कौ राजा । मन मै मानि लयौ यह काजा ।
 सब मिलि चले छलन कुं तबही । जहां अलिमरदन घूघू रहही ॥७०॥
 गोसैं वैसि बसीठ पठायौ । कहियो मेघ बरन कीहां आयौ ।
 गयौ बसीठ संदेस सुनायौ । राजा सुनत बहुत सुख पायौ ॥७१॥
 अलिमरदन मत्री ज पठायौ । कागनि आदर के बौह लायौ ।
 मेघ बरन आयौ बन जबही । दोऊ मिले अंक भरि तबही ॥७२॥
 कुसर कुसर कहि पुछैं दोऊ । कागनि मतौ न जानै कोऊ ।
 कागन कह्यै तौ घूहर कोनौ । सो माग्यै जोई ले दीनौ ॥७३॥
 घूहर अंधे द्यौस न सूझौ । रैन बदै ना पंछी दूजौ ।
 येक दिना घूघनि मिलि आई । बैठे गुफा मांहि सब जाई ॥७४॥
 तब कागनि मिलि अगनि लगाई । भसम कीये ये विधि सब आई ।
 भयौ कागलो घूघन करौ । राज सकल ब्रह्म करि डेरौ ॥७५॥
 कल्ला कीयौ बै । जिन जीवन । जिनमै रस कौ बनै ज पीवन ।
 चावै मोहि प्रतीत न आवै । अैसे सिंघनि अग सुनावै ॥७६॥

सिंघनि अगपति बोली बानी । तैते हुं ज काग करि जानी ।
 असी बुध तोहि अग बौरे । जैसैं दुध छाडि दे धोरे ॥७७॥
 काग सिंघ द्यौ सरभरि होई । वतिम मधिम मानै लोई ।
 लूटे हुहि चोर जैति घरही । सो फुनि साध देषि की करई ॥७८॥

दोहा

घर छडैं सुष मुरि चलै हाहा करैं विधाय ।
 सुनि हो अग दुख मोचना ताकु सिंघ न षाय ॥७९॥

चौपई

सुनि करि बचन अगहि सुष पायौ । तजी आस सिंघनि ढिग आयौ ।
 सिंघनि अग लायौ वरि रसिया । तू मेरे प्रान नेह मन बसिया ॥८०॥
 तोकों मैं दीनी यह देही । करि सुष पूरन प्रान सनेही ।
 मो तन सुरत नेह सुष कारी । अगनि भली क लाहुं (नाहर) नारी ॥८१॥
 याकौ मोहि परेषौ दीजै । मेरो बचन मानि सुष कीजे ।
 सुनि सुनि बचन हिरन मन फूली । सिंघनि राचि हिरनि कौ भूली ॥८२॥
 अति वभग देही अति मानौ । सींघनि केरे तन स्यौ रानौ ।
 बढ्यौ पेम कछु कहत न आवै । रैन दिना सुष बभरि गंवावै ॥८३॥
 सुष मैं रहत भये दिन केते । द्वै मैं कोऊ येक न चेते ।
 तौलुं सींघ सैल तैं आयौ । सिंघनि जाकौ आहट पायौ ॥८४॥
 तब सिंघनि घनि (?) र अगि राख्यौ । आवत सिंघ तबै यों भाख्यौ ।
 तुम कारनि मैं बर भल धरिये । आवो बेगि काज सब सरिये ॥८५॥
 निरषित वै मोटौ अग कारौ । दौरि सिंघि अग छिन मैं माख्यौ ।
 प्रीति भरै कै बाध्यौ मरे । ताको दोस कवन सिर धरै ॥८६॥

मालती वाच :

सुनि हो मधु तु कहत बिसाख्यो । असे नाहिन वह अग माख्यौ ।
 मोख्यै असे झुठ न कहिजे । मोरे सुष तै सति सुनि लीजे ॥८७॥
 जा दिन सीह सैल तैं आयौ । सिंघनि लै अग दूरी दुरायौ ।
 पहर येक जहां सुरतन कीनौ । फुनि जब पीवन कौ चित दीनौ ॥८८॥
 नदी छीर चलि अये दोऊ । वहां सिंघ बैठे कौ सोऊ ।
 देषि सिंघ जब सिंघनि रोई । केहि बिधि राखौ अग अब सोई ॥८९॥

तब यह मन मैं निहचौ कीयौ । अग मरिया तौ अग मो जीयौ ।
अग पहला तन कुं देहु । अैसे प्रीति साच करि लेहु ॥१०॥

दोहौ

अंतर जिन पारौ दई अव मरिबे की रीति ।
अग कौ तौ सोभा भई मैं तनि बंधी प्रीति ॥११॥

चौपई

अतनां मैं अग थिर हौ कैना । निरधि र सिंघ क्रोध भये नैना ।
तब सिंघनि मन मैं यह आई । परी दौरि अग सींगनि जाई ॥१२॥
फूटे सींग दोउ वर आगे । पांन निकसि सिंघनि के भागे ।
सिंघनि करी ज कोबु न कीही । अैसे सूर मनिष जा धरही ॥१३॥
पाछें आय सिंघ अग मारयौ । अैसे वनी दहुंन तन दाख्यौ ।
विधि के अहिर लिखे ज जोय । तातै कछु अंतर ना होय ॥१४॥
अग की मौत सिंघनी साकौ । चित दे कह्यौ समयौ ताकौ ।
सिंघ गयौ वन कु फिरि छुडि । मालती कथा कहीयौ मंडि ॥१५॥

सोरठी

मधु मरिचौ येक वार और वडे के कंधि चढि ।
सवद रह्यै संसारि अग पहलां सिंघनि सुई ॥१६॥

मधुवाच :

चौपई

सिंघनि यह के कारन कीनौ । यामै सुख जीवन का लीनौ ।
त्रीया की बुद्धि ववैक न चीन्हौ । अग मराय आप तन दीनौ ॥१७॥
मधु समयौ सुनि जीव दुख पाई । मालति कै मनि येक न आई ।
मालती वही वात फिरि मडे । जैसे धोरी देय न छंडे ॥१८॥
मालती फिरि अैसे करि कहई । तैं कछु ना मधु मो जीय लहई ।
विरह अगनि मोरै तन लगई । फुनि येते वुपरि तन जरई ॥१९॥
मो मनि मधु तू निस दिन वसई । छिन छिन काम कालतन डसई ।
तू तौऊ मोतन ना चितई । कैसे कैयां देह न रहई ॥२०॥

चौपई

मधु जयै मालती अयानी । सिषयां बुद्धि न होय सयानी ।
जिहौ क प्रेम दूरि मुख दरसै । तितौ क चैन नही तन परसै ॥२१॥

चंद चकोर कुमद किन देषै । पुनि रवि और कमल किन पेषै ।
वम नत निरषै वौह सुष देही । परसे जात सकल गुन तेही ॥१०२॥

दोहौ

लोचन केरी प्रीतड़ी जो करि जानत कोय ।
जो रंग नैना ऊपजै सो सुष सेक न होय ॥१०३॥

मालती वाच :

भनै मालती रे मधु मानी । कैसी तैं अपनै जीय ठानी ।
और पुरिष तैं त्रीय निरुपावै । त्रीय बोले नही वै ललचावै ॥१०४॥
देखी सुरवर कौ व्योहारा । मन मैं सोधि करौ बिचारा ।
मेरी कही तोहि नही भावै । हुं कछु कहुं तो तू कछु गावै ॥१०५॥
मधु जंपै मालती सुनि लीजे । सत छोडे दिन कितेक जीजे ।
तु अयान हूँ बातैं कहई । सुनन हारे सुनि के कहई ॥१०६॥
हम तुम गरु येकही पढई । दूजै तू मो त्रिय करि धरई ।
यह जीय समझि विकट मति बुझै । बुरौ करम यह सब दिन सुझै ॥१०७॥

मालती वाच :

मधु तू झूठ वौहत ही काढौ । हम तुम कुलि अंतर वौह वाढौ ।
येक ग्रंथ तैं बुपजै दोऊ । तास्यैं दोस धरै ना कोऊ ॥१०८॥
त्रपति न पावक काठहि जरें । त्रपति न सायर सखिता भरें ।
त्रपति न काल प्रांन कुं लेतही । त्रपतिन नारी रस हेत ही ॥१०९॥
सुनि मंत्री सुत मंनहि विचारै । त्रीय स्यैं वचन कहत नर हारै ।
तजिये कंनक खवन जैहि टूटै । तजिये पंथ चोर जैहि लूटै ॥११०॥
तजिये प्रीति जहां दुष पड्ये । विन स्वारथि पर धरि ना जड्ये ।
रवि घर गये चंद भयौ मंदा । वावन वप बलि कै धरि छुंदा ॥१११॥
संकर जटा सुरसुरी आई । रही समाय तहीं ही जाई ।
यंद्र भयौ लघु दिशि ग्रह जाई । अैसे बडे भये लघुताई ॥११२॥

दोहौ

चंद यंद्र अर सुरसुरी तन बावन बलि भूप ।
बिन स्वारथि पर घर गये सब भये लघुता ॥११३॥

भ्रगो वाच :

सोरठौ

परै प्रेम की पासि कटै न जौ कोटिक करौ ।
नैन मन अरपै तास प्रीति रीति यह मालती ॥१२७॥
प्रेम प्रीति कै काज पंछी हुं बंधन सहै ।
नातर बहरी बाज गये गगनि फिरि को गहै ॥१२८॥
खवनन राचै राग भ्रग वत ही थकित भयौ ।
सर सनमुष बर लागि प्रेम न मुकै मालती ॥१२९॥

चौपई

अंगी प्रेम बढाय बतायौ । मानौ बिरह बान बर लायौ ।
तब ही मधु मनसा मैं आयौ । तन चटपटी जानु कछु षायौ ॥१३०॥

सोरठौ

बिरह व्यापि कै नारि पैड चारि पर ही गई ।
वत चकइ करै बिलाप सबद सुनै यह मालती ॥१३१॥

चौपई

चकई पीव पीव कहि कहि जंपै । लेय वसास हाय कहि कंपै ।
मालति के सुनि अति रिस आई । चकई क्यैं चानक सी लाई ॥१३२॥
कठिन प्रान तेरे सुनि चकी । पति बियोग कहि क्यैं सहि सकी ।
चरन पंष नहीं थिर थकी । ढिग ही रहत जाम चहुं बकी ॥१३३॥
कहै मालती सुनि जलचरनी । मो पर परी राम की सरनी ।
तुव बिच पट यह नाहिन कटै । तौ मेरे सराप कौन तैं कटै ॥१३४॥
चकई जौ हुं तोहि मिलाऊं । कहियौ तौ तुमपै का पाऊं ।
मो बिच कौ यह पट जौ कटै । तौ तेरौ स्याप काम अब फटै ॥१३५॥
मधु कौ मालती सरवर हेरै । जैसैं दामनि घन मैं घेरै ।
कोईक बार लग रहि घरि आई । चकई कारनि अधिक बुलाई ॥१३६॥
चकवा चकई पकरि मंगाया । घालि पांजरै साल बंध[1]या ।
मालती अरध निसा मैं आई । चकवा चकही टेरे जगाई ॥१३७॥
मैं तौ तुव पीय आनि मिलाई । बिरह बियोग कना सुष पाई ।
चकई यौ जंपै सुनि सजनी । तुं पुछै सो ना यह रजनी ॥१३८॥

म० वार्ता १८ (११००-६४)

जौ अरै मिलिवे सच पावै । तौ पछी बौहत पीजरै आवै ।
 झूठै ही मन क्यै समझईयो । बागुरि के चुंसे रस षड्ये ॥१३१॥
 मालती वाच :

तुव बियोग दुष दूरी मिटायौ । कत सहित संकट किम आयौ ।
 पीव स्यै मिलि रस सब निस पायौ । बागुरि चुस्थै मोहि बतायौ ॥१४०॥
 सरस निरस की यौ गति ठानै । तु कवरी अतनौ कत जानै ।
 प्रथम समागम सुरत न सुझी । बागुरि चुंस कहां तैं वृक्षी ॥१४१॥

सोरठौ

सुरिज बादर वोढि कबहौ कबहौ दरस लौ ।
 चंद जानि बिगसाय सो कुमंद कहा करत है ॥१४२॥

चौपई

हुं पंछी थोरी बुधि मेरी । पढे गुने की मति है तेरी ।
 तु ज कवरि दुरि ही दूकी । मलय भुवंगम की गति चूकी ॥१४३॥
 मालती सुनियौ वोह सच पाई । तबहि निज सषि बेगि बुलाई ।
 जैतमाल ता सषी कौ नामा । मन पहली ज संवारै कामा ॥१४४॥

सोरठौ

प्रेम संपुरन सोय दोय डील बिन ना लहौ ।
 तीजो करता होय जेहि यौ सब घट निरमयौ ॥१४५॥

चौपई

दोय के बीचि बसीठ न होई । परम चतुर नर जानौ सोई ।
 सषी तैं बात कहत मन डरई । ना जानौ सषी का मन धरई ॥१४६॥
 फल दुराथ सषी आप ही पायौ । पै मेरै कछु हाथि न आयौ ।
 जो कछु करता दुतर लहिये । तब तौ आनि सषी प्रति कहिये ॥१४७॥
 छुधूया पास सबै मोहि भागी । काम रहत निस दिन तन जागी ।
 मधु मूरति मिलवे अमिलाषी । देषौ बदन देत है साषी ॥१४८॥
 जैतमाल तू दिन की बारी । मेरै सब सषियन तैं प्यारी ।
 तुव तैं दुरै नही कछु मेरै । मेरे प्रान सब रस तेरै ॥१४९॥
 दिन कौ सकल लोक ही ध्यावौ । सुनि मत जो चाहै सोई पावै ।
 आकौ भेद कौन कहि मोसुं । पाछै मन की पुछुं तोसुं ॥१५०॥

जैतमाल जपै सुनि बाई । तैं मो कु काक ही सुनाई ।
सब जुग रहै देव के बंधे । देवा सकल दिजन के बंधे ॥१५१॥

सलोक

देवाधीनां जगत्राणं मंत्राधीना स देवता ।
सो मंत्रा ब्राह्मणाधीनां तसमात ब्राह्मण देवता ॥१५२॥

चौपई

मालती वाच :

असौ मंत्र रहै सुष तेरै । काज नि आवै कबहुं मेरै ।
मधु मधु कहत एक छिन बीतै । कोडि तैतीस देव किंम जीतै ॥१५३॥
म्रिग न ज्यै किसतूरी षाई । मुकत माल ज्यै गजकंठ नाई (नआई) ।
अहि मणि कब हौं होय न चीन्हा । तेरे मत्र इहै गति कीन्हा ॥१५४॥

दोहौ

अग मद गज सिर स्वाति सुत अहि मणि क्रप धन राज ।
या थै निरधन अति भले जीयत न आवै काज ॥१५५॥

चौपई

तैं मो पान नहीं कछु अंतर । विधना देह रची द्वै अंतर ।
मो मरतै तु निहचै मरिही । तब यौ मत्र काज कहा करिही ॥१५६॥
जैतमाल फिरि वतर दीनौ । तैं अपजस मेरै सिर कीनौ ।
जीय प्रपंच मधु मोहि दुरायौ । नैक न कबहौ भेद जनायौ ॥१५७॥

सोरठौ

रहैं सदा येक संगि भेद अमेद तासु करौ ।
करै न ताकौ काज प्रीति कपट जैहि मालती ॥१५८॥

चौपई

मालती तबहि चरन लपटानी । मेरी चूक सबै मैं जानी ।
अब मोकुं तुम तुरत जिवावो । मधु सुरति जौं नैन दिखावे ॥१५९॥
अै जैतमाल यौ गोरी । आरतिवत काज बुधि थोरी ।
तैं मनसा चातुक लौं बंधी । विहवल भई काम की अंधी ॥१६०॥

दोहौ

सो गति अंध्यां अंध की जो गति कामा अंध ।
मानौ अति गज अंधरौ आरति पूरन अंध ॥१६१॥

आरति अपनी कारनै चरन पखारै खीर ।
 गरज सरै समयौ टरै नैक न पावै नीर ॥१६२॥
 अति आदर सनमान दे पुनि नछावरि होय ।
 आरति विन सुनि मालती बात न पुछै कोय ॥१६३॥

मालती वाच :

तू तौ सखी आपनी कहई । मेरे वचन नाहि चित धरई ।
 बडे सोय आप दुष सहैं । वोछी बात न कबहौ कहैं ॥१६४॥

दोहौ

जीवन पर वपगार हित देषहु धरनी आभ ।
 वै वरसै वा नीपजै छीबा गिनै न लाभ ॥१६५॥
 फिरि तरवर की गति सुनौ जैसे करै सदाय ।
 धुप सहै सिर आपनै औरैं छांह कराय ॥१६६॥
 सुनियौ धौं गति अंब की फलैं विस के हैत ।
 पंथी पथर तैं हनत वो अंब्रत फल देत ॥१६७॥

चौपई

वेद पुरान सकल ही भाष्यौ । मुनि सवहिन आपन मुख दाष्यौ ।
 पर वपगार पुनि नहीं असौ । पर दुष पाप समौ नही कैसौ ॥१६८॥
 वोछै वोछी बुधि विचारै । बडौ बडाई करत न हारै ।
 ये तौ हैं हि सहज के लछिन । ना जानौ का करत विचछन ॥१६९॥
 सखी बिहसि मालती वर लाई । तुं अब कवरी मति दुष पाई ।
 धीरज राखि जीय ढिढ तेरो । करुं ज खेल देषि अब मेरे ॥१७०॥
 कहै तौ गगनि चंद रवि रंछुं । कहै तौ यंद्र मेघ सुर बंधु ।
 कहै तौ विन पावक अनं रंछुं । कहै तौ सेस नाग सब बंधु ॥१७१॥
 कहै तौ जोगिन वीर हुंकारुं । कहै तौ सिंध सकल तरि फारुं ।
 कहै तौ गिरधन स्यैं गिर मारुं । कहै तौ वदधि त्रित करि डारुं ॥१७२॥
 कहै तौ वसुधा अचल चलाऊं । कहै तौ सखिता वलटि बहाऊं ।
 कहै तौ अनरित जल बरसाऊं । कहै तौ पथर धातु (?) कराऊं ॥१७३॥
 मखिन मंत्र हू बौहतक जानुं । सुर नर सकल बांधि कै आनुं ।
 मधु जौ नैन देषिवै पाऊं । पंछी रूप धरे करि लाऊं ॥१७४॥

सबही षबरि लीन कौ पठई । दुती येक महा गुन अठई ।
 मधु की षबरी राम सर पाई । दूती देषि तबै फिरि आई ॥१७२॥
 जैतमाल सुनि कै वठि धाई । मालती काम हेति चित लाई ।
 ल्हौरी देह बुधि बल पूरी । पर वपगार करने कौ सूरौ ॥१७३॥
 भई सषी संगि और महारी । तन कीनौ अति सोल सिंगारी ।
 मंजन चीर चार वर हारा । कर ककन नेवर भुंनकारा ॥१७४॥
 चलि सखा कै निकट ज आई । मधु षेलत देषि र सच पाई ।
 जैतमाल सब गुन अनसुरई । वसिकरन वांनी मुष धरई ॥१७५॥
 पहलौ याकौ वचन भषावुं । कैसी चातुर है सोई पाऊं ।
 प्रेम वचन केरे सर संधु । पाछै मंत्र सकति करि बंधु ॥१७६॥
 जैतमाल मन मै यौ अठई । भौरे मिसि मधु कारन कहिई ।
 मालती कुसम विछ करिअष्यै । येक संमै दूजौ फल रष्यै ॥१८०॥

सोरठौ

सुभग सरस रस पूर प्रेम न पुछै तास को ।

मधुकर मन के कूर क्यै तजिय्ये सोई मालती ॥१८१॥

मधु वाच :

रही वमगि मन मौन बोलत हु कछु सुधि धरी ।

मधुकर दोस ज कौन अनरिति फूलै मालती ॥१८२॥

जैतमाल वाच :

षट रिति वाराह मास सकल कुसम प्रति ही भ्रमै ।

रीकै आक पलास दोस धरै धौ मालती ॥१८३॥

मधु वाच :

रोगी डरपै रोगि वैद अयानौ कौ ररै ।

भंवर मालती छोडि आक पलास हि मन धरै ॥१८४॥

जैतमाल वाच :

फलहुं न आवै काब कुसम कोबु परसै नही ।

अके अक अकाज मधुकर परसौ जास तुम ॥१८५॥

मधु वाच :

दोहौ

तुअ में द्रुम अक सब मधुकर वाढ्यौ हेत ।

मैं वह भसमी जानि कै गिर्यै जानि तब जैत ॥१८६॥

जैतमाल वाच :

प्रथम स्याम फुनि लाल फुलैं हि पात गंवाइ कै ।
केसु कुसमहि लागि अली लगे कौ कौन गुन ॥१८७॥

मधु वाच :

केसु पावक जानि कै मधुकर मरिवा हेत ।
जरन काजि वहिं डुमि गयो सति वचन सुनि जैत ॥१८८॥

जैतमाल वाच :

नष सिख कट कटाय नीच प्रीति के गुन तहां ।
कवलनि परस्यै जाय वहा विरंभ्यै कौन गुनि ॥१८९॥

मधुवाच :

दोहौ

तन बंधन कै कारनै गयौ वहां सुनि जैत ।
फिरि वत तै निकसौ नही निवहै वसही हेत ॥१९०॥

जैतमाल वाच :

पीली मुष मधुकर यह कहि गुनि । डुम बेली भटकत सब वनि वनि ।
साची बात मोहि समझावो । कूर कंलांवत ज्यै मति गावो ॥१९१॥

मधु वाच :

कूर कंलांवत ज्यै घर भूले । मधुकर ज्यै पंवन वसि डूलै ।
अचिरज इहै लागत मेरे मनि । तुंम ही भटकत हौ असे वनि ॥१९२॥
जैति सकुचि मन लज्या पाई । मेरी बात मोहि पर आई ।
मैं मधु साच साच करि बूझी । तेरे जोय कहु औरै सूझी ॥१९३॥
वनिता लता और पंडित नरा । यनकै सहज अनेक और धरा ।
जौलुं नैक न आलम गहई । तौलुं भलै न कोऊ कहई ॥१९४॥

मालती वाच :

हुं तौ नारि नही हौ तैसी । और फिरत हैं घरि घरि जैसी ।
मोकुं सकल बात मधु सूझै । जोय कहुं सोई तू बुझै ॥१९५॥

मधु वाच :

मधु जंपे तू चतुर सयानी । तौ कहियो माकु यह वांनी ।
कौन मालती कौन ज मधुकर । वतपति कहौ सकल पछिली हर ॥१९६॥

जैतमाल वाच :

सुनि मधु अब पछिली ज सुनांऊ । जौ तुम.....हुं पाऊं ।
 खग माहि करते सुष दोई । गंधप येक अपछरा खोई ॥११७॥
 ते काहु कौ गिनत न डोलैं । मदन ग्रब मैं अलबल बोलैं ।
 तिनके सुष की कहत न आवै । राति चौस भरि जौ कोउ गावै ॥११८॥
 येक दिना नदन वनि जाई । रहे बहुत पर तहां लुभाई ।
 अतना मैं रिषि सपत ज आये । तिनकुं देषि कछु न लजाए ॥११९॥
 हिलि मिलि रहे येक तन जैसैं । निषि क्रोध रिपिन भयौ अैसे ।
 तुम तौ हम तैं नही लजावो । होइ मालती भवर सिधावो ॥२००॥
 हु वनकी होती तब चेरी । सेवती की गति भई मेरी ।
 परे वहां तैं निहचै तबही । वन मैं रहे आय दोउ तब ही ॥२०१॥

दोहौ

गंधप तौ भंमरौ भयौ गंधपि मालती सोय ।
 सषी सेवती जहां भई करता करै सहोय ॥२०२॥

चौपई

अति ही मगन भये वत दोऊ । अबहु नाहिन विछुरैं कोऊ ।
 कबहुक सैल काजि वनि फिरई । मालती विन मनसानहीं धरई ॥२०३॥
 मधि रयन समयौ जहां होई । वहै देव तन प्रगटै सोई ।
 अति रस सुरत केलि जहां करई । वासर भये वहै तन धरई ॥२०४॥
 कितेक चौंस औ विधि वन रहई । अभि अतर किण्णि ही ना लहई ।
 निकट ही सेवती पहिचानैं । भमर मालती तास न जानैं ॥२०५॥
 ससि(ससिर)वसंत ग्रीष्म रुति बीती । वरिषा सरद दोउ दुति जीती ।
 कांठन भई हेम दुति भारी । वन रुति तव मालती प्रजारी ॥२०६॥
 फिरि कै वनि वन मैं दौं लागी । मालती भसम निपट तब दागी ।
 हेम जरी अर पावक जारी । विधि लुहार केरी गति धारी ॥२०७॥
 सेवती वहा कछु येक वांची । दिन द्वै रही प्रान तन पांची ।
 मधुकर जरत मालती निरषी । मैं तब प्रीति भवर की परषी ॥२०८॥
 चौस दूसरै कीनी फेरी । भीनैं वचन मालती टेरी ।
 मैं निरषी गति एकै तिहारी । तुम तैं प्रीति करै जेहि गारी ॥२०९॥

(२८०)

सोरठौ

जरी मालती जोग मधुकर कै भावै नही ।
दिन द्वै कीयौ न सोग लोक लाज वा भी तजी ॥ २१० ॥

दोहौ

जरिबौ मरिबौ कठिन है मधुकर मालती संग ।
मै नीकै सब परिषियौ येह तुमारौ अग ॥ २११ ॥

सोरठौ

मुष दीठा की प्रीति औसी तौ सब को करै ।
वै कलि कोई भीत जीयत जीय मुये मरै ॥ २१२ ॥

दोहौ

सेवन्ती थौ भंवर नै कहे बहुत तब बोल ।
सुनि करि भवर पुलाइयौ गयौ भवन कहुं कोल ॥ २१३ ॥

चौपई

और तबै भाष नही लागी । मधु चुप कह्यौ जैत की आगी ।
फिरि कै मधु बोल्यौ तैहि बारा । जैसै भयौ सति निरधारा ॥ २१४ ॥

मधु वाच :

सेवन्ती येती बात कहा जानै । झूठी बात घनी ही ठानै ।
जैहि वपु बीतै सो तैहि बुझै । पर घर कहा परोसनि सुझै ॥ २१५ ॥

सोरठौ

जरती मालती देखि मधुकर तौ पहली मुबो ।
सो प्रतीति अब पेषि मुंवा बिन कोऊ औतरे ॥ २१६ ॥

चौपई

मूवां बिन कोऊ सुग न देखै । मूवां बिन औतार न पेखै ।
मूवां बिन परतीति न मानै । मूवां बिन कोऊ सति न ठानै ॥ २१७ ॥

दोहौ

जो मेरै पाछे भई गति मालती स जोहि ।
जैतमाल सति करि कहौ सब जानेत है तोहि ॥ २१८ ॥

जैतमाल वाच :

सति वचन सुनि हो मधु मेरौ । ज्यै सुष पावै जियरो तेरो ।
जा पाछैं बरिषा रति आई । जल बरष्यै कछु अमित रिसाई ॥२१६॥
गोभा फूटि मालती फूली । प्रीति पुरातन सोई भूली ॥२१६॥
मधुकर प्रेम संपूरन दाष्यौ । जैतमाल अँसैं करि भाष्यौ ।
कितेक द्यौस बीते फूलें करी । मालती बौहरि सीत पावक जरि ॥२२०॥
तब मै भी तन दीनौ डारी । आप भई इत विप्र कंवारी ।
मालती निप घरि कन्या होई । वंनिक पुत्र भये तुम सोई ॥२२१॥

मधु वाच :

मालती लयौ जनम निप आई । तु ब्रिहमन के बड कुल जाई ।
मैं लीनो बनिक घरि जनमां । केहि कारनि कहियौ अब मन मां ॥२२२॥

[जैतमाल वाच :]

तेरे मधु मन मैं या आई । या कारनि मै देह गंमाई ।
यातौ फिरि कै अजहु फूली । मेरी सकल बात ही भूली ॥†
त्रीय नै प्रीति न कीजे कबही । तैं अपना जीय मै या लहई ।
मालती जनम लयौ निप घरिका । मै बांनिक घरि हँस्यौ लरिका ॥२२३॥
तुम मन मांही इहै वुपाई । निप बांनिक ना होय सगाई ।
ता तैं तुम इत प्रगटे आई । मालती तैं अँसे न रिसाई ॥२२४॥
तुम दोऊ हो देवन अंसा । प्रगटौ आय कही हरबंसा ।
अब मालती मिलन की ठानौ । पूरिबली बातैं सति जानौ ॥२२५॥

दोहौ

मधु वाच :

सबै सयानप छाड़ि कै जैतमाल सुनि बैन ।
पूरिबली पूरिब गई वह वासुर वह रैन ॥ २२६ ॥

चौपई

पूरिबली बातैं अब डारौ । वो तौ लादि गयौ बनिजारौ ।
तिकि वीतां कोउ विप्र न बूझै । नीकां जैत सयानप सूझै ॥२२७॥

* यह छंद एक ही अर्द्धाली का है और संख्या भी बाद में दुहराई हुई है ।

† यहाँ छंद-संख्या नहीं दी हुई है ।

राजा मीत सुने ना कोई । तीन लोक में पूछौ सोई ।
 काहू करी न कोऊ करिहै । निप की प्रीति काज बिगरीहै ॥२२८॥
 येक त्रीय जाति और निपवंसी । यनकै प्रीति संपूरन कंसी ।
 जैसी लता करेली करई । और वकांनि जगत मधि फरई ॥२२९॥
 काक सवुचि सुने ना कोई । जुवा ठौरि सति ना होई ।
 कारे साप पायें ना रहई । फुनि त्रिया कांम सांति को कहई ॥२३०॥

सोरठौ

राजा मीत न होय बुझौ जौ कोऊ कहै ।
 मन गति लहै न कोय दंत न गज के को गहै ॥ २३१ ॥

जैतमाल वाच :

मधु तू दछिन लछिन धारे । मालती तौ अनकुल विचारै ।
 पुरब प्रीति जानि चित धरई । नातर बनिक मीत क्यों करिही ॥२३२॥
 छाडि और भूपन के बातक । तुम वर बरत है पूरिबली तक ।
 दीपग मैं ज्यै पतंग सिरावै । तैस्यै तुमसौ को सुख पावै ॥२३३॥

[मधु वाच :]

मधु जपै तुव बडी अथानी । यन वातन मै नाहिन जानी ।
 राज काज की बात न बूझै । दिज कौं भीष मांगि वै सूझै ॥२३४॥
 सीषौ जाय वाप की कीली । पाछै यौ कछु करौह दीली ।
 देषी सुनी न कबहौं कीजे । अपनै कुल के क्रमि चित दीजे ॥२३५॥
 ज्यै चकोर पावक भष करई । पंछी और छुवत जरि मरिही ।
 राज की बातनि होहैं नारी । को पूछै गुंगन की गारी ॥२३६॥

जैतमाल वाच :

मधु मो वचन मांनि निरधारा । अपनी गरज सहौ तोहि गारा ।
 तुम सनबंध लिप्यौ करतारा । जदि तदि गंगा सोरं पारा ॥२३७॥
 नर बौह आप सयानप करहो । तौलुं त्रीय स्यै काम न परही ।
 नैन कटाछि वान वरि लागै । ग्यान ध्यात तब तब तैं भागै ॥२३८॥

दोहौ

तौलुं पुरिष करै सबै तौलुं ही करै सयान ।
 जौलु वरि मेदै नही त्रीय नैनन के वान ॥ २३९ ॥

(२८३)

चौपई

यौं मधु स्यै बातन कर लाई । सषी पठाय मालती बुलाई ।
 औचकि आय दामनि सी कौंधी । निरषत नैन भई चकचौंधी ॥ २४० ॥
 तदि परेच झंखत सुष देण्यौ । अब कै रूप सकल ही पेण्यौ ।
 वपमां देंन पटंतरि को है । सुर नर नाग सकल मन मोहै ॥ २४१ ॥

दोही

द्वादस अभरंन अंग सजि पुंनि सिंगार नवसत ।
 आन सोभ सोभा भई औसौ मालती गत ॥ २४२ ॥
 काठ सिंगार बनाइये सो पुनि सोभा होय ।
 बिन भुषन तन राजही साची सोभा सोय ॥ २४३ ॥

चौपई

मालती बिन भूषन ही सोहै । मैं देषि जाके तनि मोहै ।
 भुवलोका मैं हुई नै हूँहै । बिधि बनाय सर काकर घेहौं ॥ २४४ ॥

दोही

मधु भूलै जहां देषि कै वतर देय न कोय ।
 मालती वचन कहा कहै चित दै सुनिज्यै सोय ॥ २४५ ॥

सोरठी

अब कै जनम स येह निहचै करि मन मैं गढी ।
 कै मधुकर रस लेय कै दौ दांऊ मालती ॥ २४६ ॥
 वतपति येक समूर प्रीति हेति तन द्वै धरे ।
 पुहिंवि न बुगै सूर अंतर देई मालती ॥ २४७ ॥
 जौ कछु जीय मैं षोट तौ साषी सकर कहै ।
 कै तन रहै अवोट कै परसै मधु मालती ॥ २४८ ॥

मधुवाच :

तौ तनि जरबहि देषि मैं देही ऊपरि दई ।
 विछुरन निमष ज पेषि सो येते दिन क्यै रही ॥ २४९ ॥

चौपई

त्रीय तैं प्रीति करौ जिन कोई । नातर दुष तौ निहचै होई ।
 मैं, अपनै जीय तोपर दीनौ । तैं प्रपंच मोसुं यह कीनौ ॥ २५० ॥

मेरी देह छार है निघटी । तुव वन में नव पलव प्रगटी ।
पुरिष मरत त्रीय बुपरि मरही । पै त्रीय ऊपरी पुरीष न मरही ॥२५१॥

मालती वाच :

सोरठौ

पुरिष प्रेम वसि होय त्रीय तौ परपंचै गढी ।

देषी सुंनी न कोय नागबेलि मडप छडी ॥ २५२ ॥

[मधु वाचः]

चोपई

मधुकर वचन सुने जव अँसौ । वत्तर देय मालती कैसौ ।

पुरिष कहै सो सब त्रीय सहियो । पै त्रीय वानी कठोर ना कहियो ॥२५३॥

मालती वाच :

नव षड सपत दीप में भटकी । निस वासुरि कबहौं ना अटकी ।

प्रज पुरिष बोजन दुष पायौ । पै काहु नही बोज बजायो ॥२५४॥

ज्यै निस वडगन चद विहुनी । फुलवारी चंपक विन सुनी ।

रुति वसंत पिक विन नही नीकी । वरिषा विन दांमनि ज्यै फीकी ॥२५५॥

सेनि सुभट है अर निप नाही । सरवर जल दुम विन ज्यै पांही ।

मनि जैसै कचन विन सुनी । अँसी त्रीय है कंत विहुनी ॥२५६॥

मालती करुना करि ज सुनावै । वै अलि मधु की बात न पावै ।

अब हुं निहचै प्रांन गंमाऊं । तुम विवोगि कैसे सुष पाऊं ॥२५७॥

जैतमाल वाच :

अब कै मधु तु और ज कहि छहै । सुनत मालती अब मरि जैहै ॥२५८॥

सवै सयानप जैहै तेरी । मधु तू मांनि बात सब मेरी ।

[मधु वाचः]

मधु जंपै तुव वचन न धरिहौं । फुनि त्रीय सेती प्रीतिनकरिहौं ॥२५९॥

जीयते तजिहौ सति न मेरौ । करिहौं जैत कहां लग करौ ॥२६०॥†

जैतमाल वाच :

पूरिब नेह ग्रह चित दीजे । येह बात कौ विरंम न कीजे ।

ऊषां अनुरुध भई गति ज्यै ही । गंधर्व व्याह करौ तुम त्यै हो ॥२६१॥

* इस छंद में प्रति में एक ही अर्द्धाली है ।

† इस छंद में की प्रति में एक ही अर्द्धाली है ।

मधु वाच :

पूरिबली बीती को जानै । अब तौ निपति वंनिक की ठानै ।
लरक बुधि जौ तीय मैं धरियो । तौ इन वातन ही सुष भरिये ॥२६२॥
सुनि राय छिनक मै मारै । काहे कौं यह बुधि बिचारै ।
विगरे मतै वसीठ ज करिहौ । साप चचुधरि की गति परिहौ ॥२६३॥

मालती वाच :

अैसे वचन कौन बुधि भाषै । मो कुं ते सु मोन ही राषै ।
पुरिब प्रीति जौय चित धरिये । तौ मरिबे तैं नाही न डरिये ॥२६४॥
यौं ज परसपर बौहत जगायो । हारि जीति कोऊ न अघायो ।
जा पीछे बोलियौ वानी । पवन देवता सति बषांनी ॥२६५॥

सोरठौ

मालती सई न नारि मधुकर सौ प्रीतम नही ।
पवन सुनावै टेरि सत्ति सत्ति जानौ सबै ॥ २६६ ॥

दोहौ

पवन कहै मधु मालती कोऊ घटे नही लेष ।
मसि काजल ऊपरि चढी इहै पटंतरि पेधि ॥ २६७ ॥

चौपई

यौ करि पवनि कही सति वांनी । तब मधु रीस मिटी जिय कांनी ।
पुरिब डरि मनकौ अम भागौ । मालती वदन देषनै लागौ ॥२६८॥
मधु मालति तुष मांकि निहारी । पढि तब मंत्र मोहनी डारी ।
जैतमाल तब यंत्र ज कीनौ । मधु तब ऊतर निठि सै दीनौ ॥२६९॥
तबही मालती रूप लुभानौ । रुति वसंत पायक पिक मानौ ।
नर अति आप सयांनप धारै । सगरे जग कौ जीवत बुबारै ॥२७०॥
करता कैहि ठाहर ग्रव गारै । अंति ही आय त्रीया पै हारै ।
जा पीछै वन मधु कौ कह्यै । त्यों तों ही मधुचित मैं चह्यै ॥२७१॥
कीनौ बौहत मोल विन चाकर । पुनि कीनों बाजीगर मांकर ।
मालती कै मधु रस वस हुवो । तब मालती विचार यह कीर्यो ॥२७२॥

दोहौ

परसौं मधु केतनिहि तन करौ सुरत सुष केलि ।
हैं तन मांहै बिरह सर सो षोडं अब मेलि ॥ २७३ ॥

चौपाई

मधु तौ सब विधि चतुर विनामी । मालती मनहि बात सब जानी ।
 तब मधु वन प्रति यौ वच रई । विना व्याहि त्रीय भोग न करई ॥२७४॥
 त्रीया कवारी भोग करै नर । ता समान पापी नाहिन धर ।
 जैतमाल सुनि करि यह वानी । कहै ज व्याह करौ तुम ठानी ॥२७५॥
 लीनौ लगन वेद विधि जबही । करे नेवटा सब विधि तबही ।
 ककन कर अंचर गहि बंध्यौ । टुटौ मन फेरि कै संध्यौ ॥२७६॥
 रच्यै कलस जहां अबज करौ । मधु मालती फिरायौ फेरौ ।
 मंगलचार जैति ऊचरई । दोऊ मनहि मांहि सुष धरई ॥२७७॥

दोहौ

वन्धौ विवाह मधुमालती सुरभी अति सुष होय ।
 फुनि विसतर बाढै कथा चित दे सुनियो सोय ॥२७८॥

सोरठो

गंध्रप भई विवाह करि कै मधु अर मालती ।
 बिलसन लागे भोग मोद मानि जीय रैन दिन ॥२७९॥ ❀

चौपाई

राम सरोवर कै ढिग भारी । बिलसन लागे सुष नर नारी ।
 जीवन सुफल मालती मान्यौ । सुष में यौ तन मन जव सान्यौ ॥२८०॥
 गति होती सो लुग मंझारी । भई आनि सो अब नर नारी ।
 चै समये की सुष की वातैं । कहि नही आवन मेरैं गातैं ॥२८१॥
 सुष में बीते दिन दस जांही । विसरि गये सब ही गति ताही ।
 जा पीछे सरवर कौ माली । आयौ दुदन कौ फुलवाली ॥२८२॥

दोहौ

माली कुसुम न कारनै गयौ जहां दोऊ मित ।
 दुरे निरधि मधु मालती माली भयो संचित ॥२८३॥

चौपाई

माली मन मैं तवै विचारा । कहत हुते ज नंगर मधि सारा ।
 राज कंवारी गुन निधि होई । छलि लै गयौ साह सुत सोई ॥२८४॥

* प्रतिभे-संख्या दुईरई दुई हैं ।

जे ये सरवर रहे लुकाई । कहिहै जाय बेगि हुराई ।
 आनुर तैं माली तव आयौ । जाय तवै निप कुं सिर नायौ ॥२८४॥
 कहन लग्यै नर के भुवारा । वतळ तोहि कवरि के जारा ।
 मै दीठे सरवर कै मांहीं । घमडि रही फुलवादि जहाँ हीं ॥२८५॥
 मंत्रीसुत अर राज कंवारी । दिन दस बीते वन सुषकारी ।
 करैं केलि कछु सक न धरई । मोपै तै कछु कही न परई ॥२८६॥

दोहौ

जिती जाति संसार में तिन में माली सोय ।
 मति धीजौ कोऊ चतुर नर निहचै अति दुष होय ॥२८७॥

चौपई

सुनत राय अति ही ज रिसाई । कनक माल रानी पै जाई ।
 करि कै लाल क्रोध स्यै नैना । बोल्यै अँ बिधि के तव वैया ॥२८८॥
 सुनी बात कन्या जुत केरी । नांक कुंपली षोई मेरी ।
 मंत्री के सुत स्यै मिलि जोई । करी केलि सरवर में सोई ॥२८९॥
 अब धडुनन नै मारि वहांही । कीजे धरनि मांहि कर कांही ।
 कन्या वदर परौ जिन कोई । सुष चाहै ज तहां दुष होई ॥२९०॥

राजा प्रति राणी वाच :

कनकमाल बोली तब राई । भली भई ज कंवरी सुधि पाई ।
 अब हुं कहौ सोय तुम कीजे । मारन कौ तौ नाव न लीजे ॥२९१॥
 अब तौ हुनी नाहिन होई । मारि र षोवो अब कौं दोई ।
 अपजस होय पाप सिर चढ़ई । सो नरनाथ भूलि मति करई ॥२९२॥
 दहुन कौ इत पकरि मंगायो । मांनि वचन अँसैं ज बुलावो ।
 निप कौं वचन कहे त्रीय जोई । मांन्यौ नाहिन तामै कोई ॥२९३॥
 तबही राय कियौ हंकारौ । मधु मालती दहुन कौं मारौ ।
 जाको पुत्र ताहि भी ल्यावो । पगां जंजीर घालि दुष द्यावो ॥२९४॥
 निप के वचन येह सुनि रानी । बोलि लई येक सषी सयानी ।
 राय सगोवरि हैं दोऊ भौरो । वेगि जाय करि कहौ निहोरो ॥२९५॥
 मधु मालती दहौन स्यै कहियौ । पहली ठौर वेगि तुम तजियौ ।
 राय दुत पठये तुम मारन । आई वेगि ईहे सुनि कारन ॥२९६॥

गई सषी जित कवरि कवारा । कहियौ सकल राय व्यौहारा ।
 सुनत मालती अति विलषांनी । मधु कै कंठि दौरि लपटांनी ॥२१७॥
 हाय हाय करि बौह विधि रोई । बौहत धकधकी तन में होई ।
 करता कौन पाप हम कीयौ । सुष मेटि र दुष बहुतै दियौ ॥२१८॥
 दीन बचन बोल्यौ मधु जवही । मै ज कही सो भई ज अबही ।
 मांनी नही सीष कोउ मोरी । तौ अब बौह दुष पैहै जोरी ॥२१९॥
 कहौ अबहि कौन गति कीजे । सिर परि आय परी ना जीय जीजे ।
 तुम अपनै मनि धीरज धरई । हम निप सेती निहचै लरई ॥२२०॥

मालती वाच :

मधु मेरी विनती चित धरिये । निप स्यै जुध कहां लागि कीये ।
 चहु वोर जुझ तव परिहै । विन आयुध तुम कैसे लरिहै ॥२०१॥

जैतमाल वाच :

मेरी बात कानि मधु दीजे । अहि ठाहर कैहि नीर न पीजे ।
 चढि तुरंग अब बिलम न कीजे । चलो जहां सुष तै जित जीजे ॥२०२॥

मधु वाच :

सोरठौ

अब तौ कितै न जांह रहियां हत ही जैत सुनि ।
 लै गिलोल कर मांहि तुम धीरज मन में धरौ ॥२०३॥

मालती वाच :

मधु तुम बुरौ आपनौ करिहौ । हा हा करूं अति विन मरिहौ ।
 मै तौ तुंम नठि नठि करि पायो । ताहु मै ऊपजी यह भायो ॥२०४॥
 तबही मालती विनती करिही । पारबती पति स्यौं कर लुरई ।
 श्री हर अब कै याहि वबारौ । तुम उदार हौ परम उदारौ ॥२०५॥
 ज पाछै मधु मतौ उपायौ । चढ़ि तुरंग भाजन कौं धायौ ।
 अतना मै निप के दल सब ही । आये मारन मधु कौ तब ही ॥२०६॥
 मालती धोरै चढ़न न पाई । मालती लई पकरि निप आई ।
 मधु तुरंग चढ़ियौ ही देषै । मन मारै विचार यह पेषै ॥
 तौ मरिबौ निहचै होई । जाहुं तौ अब प्रीति न कोई ॥२०७॥

* सख्या प्रति में दुहरा उठी है ।

मालती बात बुरी नब जानी । लोगनि सब मिलि घेरी आनी ।
 मधु स्ये येक बचन यौ करियौ । हम तुम करता मिलन न रचियौ ॥३०७॥
 जावो जित तहां होय बडाई । ईत भरिबे मैं नहिं भलाई ।
 मन मैं प्रीति राखियौ चाई । जीवन जनम मिलैंगे आई ॥३०८॥
 हुं तुम बिन मधु नाहिन भजिहौ । जावो बेगि नाहिंनै मरिहौ ।
 मालती बचन सुने मधु चाल्यौ । बिज बर देस तारि दिस र गल्यौ ॥३०७॥
 मधु तौ निप दल हाथ नि आयौ । दौरि गयौ किन नजरि न पायौ ।
 कितेक दूरि दौर वन कीनी । मधु नाहिंन पकराई दीनी ॥३१०॥

दोहौ

उत तै मालती लेय कै आयौ निप पै सोय ।

कह्यौ गयौ मधु भाजि कै हमहिं दोस न कोय ॥३११॥

राजा वाक्य :

मधु तौ गयौ भाजि अब सौई । तारन ही को मारौ कोई ।
 औ अपनौ सुत नाहिंन चीन्ही । कबहू सोष भली ना दीन्ही ॥३१२॥
 तौ औसो मधु क्रम ज कीने । मेरौ सब गंमायब धीनौ ।
 मारौ साह बिरम जिन कीजो । अब ताई भूलिर औ धीजै ॥३१३॥
 औसे बचन कहे निप जबही । बैठौ हुतौ बडौ नर तब ही ।
 जाकेँ मुष तैं भूठ न बकवै । पर उपगार सदा ही चितवै ॥३१४॥

बड़ेन वाक्य :

कहै महाराजा धरनीपति । पिता पुत्र की न्यारी सब गति ।
 जाकौ डड ताहि कौ दीजै । सब पुराणि प्रति यह सुन लीजै ॥३१५॥
 ध्रम राज की करनी देई । कोई करै तहीं दुष हेई ।
 अगनि महि जो हाथ पसारै । वा तजि और नाहिंनै जरै ॥३१६॥
 और रीत सिंघन की सोई । जेहि मारै वै ध्यावै सोई ।
 औसी बात राय क्यौ करिही । ऊट छुडाय राहिजे गदही ॥३१७॥
 तजि कै चोर साह दुष धावौ । सो तौ स्वान जूनि अमि पावै ।
 तारन कौ काहे को मारौ । ईहै बचन राजा अवधारौ ॥३१८॥
 औसे बचन कहे उन राई । सकल सभा तब सति करि गाई ।
 सुनि कै भि (?) क्रोध निप केरौ । बकस्यै गुनै माह मैं तेरौ ॥३१९॥

दोहो

मन्त्री उबर्यै जानिकै हरषे सब नर नारि ।

तारन सम मंत्री भयौ नाहिन जगत मंभारि ॥३२०॥

मालती तबै महल में पठई । कनक माल रानी जित रहई ॥

नैन मूदि मुष रही झुकाई । मालती जीय बौहतै जल जाई ॥३२१॥

कनकमाल सनमुष जब धाई । कर गहि कन्या उदर तैं लाई ।

तू है मेरी प्रान पियारी । जिन डरपे अब हीय कवारी ॥३२२॥

जैतमाल स्यै कछुक कहियौ । असौ क्रम करन क्यों दीयौ ।

जैतमाल जब उत्तर दीनौ । कहा करुं मधु इन रस भीनौ ॥३२३॥

जा पीछे नृप भी उन आयौ । रानी प्रति यौ सबद सुनायौ ।

ढील न करौ मालती ब्याहन । फिरि औ जु ह्वैहै अरि चाहन ॥३२४॥

रानी कहै भलो कौउ दीजे । निप अब नाही विलंब न कीजे ।

जौ कोऊ मालती सम होई । ताही कौ परणावौ सोई ॥३२५॥

राजा ऊठि आइ इयौ जबही । स्याम पिरोहित बुलायौ तबही ।

जावो सोधौ निप के बालक । मालती सम जो होय कपालक ॥३२६॥

मास दोय दूढे निप सबही । आप कहे नाम निप तबही ।

चंद्रसेनि रानी प्रति कहिये । मालती कहै सोई बर बरिये । ३२॥

कनकमाल उत तैं चली जहां मालती बाल ।

कहन लगी मन मानबौ सो बर बरौ रसाल ॥३२८॥

सुनि मालती बोलई नाही । उपजी लाज देह कै माहीं ।

सुनि रानी बोली तेहि बारा । कहौ पुत्रि समझि र निरधारा ॥३२९॥

मालती कहै सुनौ वर माई । कैसें कहौ दोय बिधि आई ।

येक लाज उपजै ही आसै । दूजी और जीय मैं भासै ॥३३०॥

राणी वाक्य :

सो तेरे जीय माहि जो मोकूं कहि मालती ।

मेरे तू है प्रान ज्यै उपाय बेगी करौ ॥३३१॥

मालती वाक्य :

मेरै मनि तौ और न कोई । मधु जीय माहि रहै बसि सोई ।

व्य मूरखि नैता बिन देखै । जीवन जनम गिनत ज अलोकै ॥३३२॥

जो बर बरौ तौ मधुकौ बरिहौ । नातर दुष बौहते भरि मरिहौ ।
 और कहा कहि मात सुनावुं । तुमही तै मधु वर कुं पावु ॥३३३॥
 सुनि कै बचन धीय के रानी । मन माहैं ज कछुक सुसकानी ।
 रानी कहै मालती वारी । औसी बात मने क्यों धारी ॥३३४॥
 वरिनै कोई राज कुंवारी । सो तुम बडको होय उजारी ।
 बाणिक बरे कहौ कित बारी । जिते जगत में राजकंवारी ॥३३५॥

और बात जानूं नहीं सुनि माता निरधार ।

औहि तौ जनमि भयौ सही मधु बानिक भरतार ॥३३६॥

मारौ पिता मोहि किन अब ही । मधु बिन बरौ न निहचै कबही ।
 औहि तौ जनम बुरै भरतारा । जिन भोगई सरोवर पारा ॥३३७॥
 कनकमाल रानी उठि आई । चद्रसेनि कौ यौ ज सुनाई ।
 मालती मो कुं कछु न बोलै । मुष लजाय कीयौ अंचर बोलै ॥३३८॥
 चलत कछौ मेरौ मन मान्यौ । बरन बरै निप घरौ सयानौ ।
 राजा और त्रीया परवारी । लई बुलाय तहीं ततकारी ॥३३९॥
 सब त्रीय जाय मालती कहियौ । बरनै बरौ आप मन चहियौ ।
 सुनत बचन त्रीय उततै चलई । जहां मालती महल ज अठई ॥३४०॥

सकल त्रीया मिलि आय कछौ बरौ बर मालती ।

जो ईन मे मनि चाय बड़े देस के छत्रपति ॥ ३४१ ॥

मालती वाचः

कहे बड़े निप जोय मेरै मनि मानै नहीं ।

मधु चित रह्यो सजोय काहि पुकारूं किन कहूं ॥ ३४२ ॥

कहौ राय प्रति जाय मधु बिन दूजौ ना बरौ ।

कोटिक करौ उपाय ना तर यह देही तजूं ॥ ३४३ ॥

सुनि कै नारि मालती केरी । हंसी सकल कर दे कै तेरी ।

परस परस सब कहत लुगाई । देखौ मालती की बौराई ॥३४४॥

हसि हसै पर की सबै जाय कहै नहीं कोय ।

इहै जगत की रीति है जिन तित जानौ सोय ॥ ३४५ ॥

कहै नारि मालती कंवारी । कौन बात तै कही गंवारी ।

हम जानै तू चतुरी होई । समझि बात कहै किन सोई ॥३४६॥

जै मधु कौ तैं नाम स लीयौ । ताकौ भूलि गई दुष दीयौ ।
जौ तुम मधु स्यैं ब्याह करार्ह । तौ निप कूं को देय भलाई ॥३४७॥
बनिक पुत्र संग लगुं न हीनौ । तैं अपनै मनि नाहिंन चीन्हौ ।
छांड़ि कुबुधि बरी निप सुत कौ । अगतौ भोग सकल बिधि वितकौ ॥३४८॥

मालती वाक्य :

लिख्यौ भाग कौ होय दुष सुष तौ हाथै नही ।
मधु बिन निहचै सोय बरुं नाहिं त्रभुवन धनी ॥ ३४९ ॥
परण्यौ पाछै कोय दूजै को परणा नहीं ।
यह जानौ सब लोय छत्री ब्राह्मणि बनिक धरि ॥ ३५० ॥

नारी वाक्य :

भई बरस षोडस तुव बारी । कदि परणी हम कूं कहि भारी ।
असी बात बालक प्रति कहियै । हम सब दिन कूं कहि क्यों दहियै ॥३५१॥

जैतमाल वाक्य :

मन लागे बौह दिन भयौ परण्या मास ज दोय ।
सुनौ नारि चित दे सकल सरवर निकट ज सोय ॥ ३५२ ॥
मालती कै मनि और नि भावै । वै फिरि फिरि कहि मन ललचावै ।
जिती कहै सोई नहीं मानै । मालती मधु की बात न जानै ॥३५३॥

जैतमाल वाक्य :

तुम न करौ हठ नारि सथानी । मधु मालती मेल हरि बानी ।
मधु तौ है गंधप अवतारा । जानौ कहौ बनिज कंवारा ॥३५४॥
मालती ग्रंथपनी बड लोई । भयें छाप इत प्रगटे दोई ।
मालती कह्यौ सति तुम मानौ । हूं याके जीय की सब जानौ ॥३५५॥
बचन कहे ये जैति सुनि करि नारी सकल ही ।
फिरि बोलीं नहिं सोय अचिरज मनमार्हीं भयौ ॥ ३५६ ॥

तबहीं गई सकल उठि नारी । चंद्रसेनि निप जाय जुहारों ।
नारी कहै सुनौ भूवारा । मालती तौ कहु मूढ़ विचारा ॥३५७॥
कहै बिना मधु नाहिं न बरिहौ । नातर निहचै करि हूं मरिहौ ।
असी नाहिं हठीली देषी । हम तौ और कंवरि भी पेष्ठी ॥३५८॥

राजा सुनि कै अति दुष पायौ । हमरौ सब मालती गंवायौ ।
 पहली तौ वह क्रम ज कीनौ । अब भी व्याहन वह चित दीनौ ॥३६६॥
 अब तौ नाहिं न कोय उपाई । बिस दे मारि गेरिजे जाई ।
 यह मन मैं निप मतौ उपायौ । रानी सुनि निप प्रति फिरि गायौ ॥३६७॥
 मारें कन्या कूं न भलाई । राषौ महल माहिं दुराई ।
 जाहि बुराई तैं ही डरिजे । मात्यां कन्या सोभा लहिजे ॥३६८॥

कनकमाल के बचन सुनि मालती महल मंझारि ।

राषी बौह बिधि गाढ़ तैं संगि सषी दे चारि ॥ ३६९ ॥

अब सुनिज्यै मधु की गति सोई । सरवर छाडे पाँछै होई ।
 जाय बस्यौ दस कोस कहाँही । रह्यो सकल निस और दिहाँही ॥३६९॥
 चलत चलत दिन दस मधि भइयो । नींद भूष दुष देह सहीयो ।
 दुरबल देह है गई भारी । सुधि करि रोवै मालती बारी ॥३७०॥
 मधु तब बेगि मधुपुरी आयौ । देषि पुरी दुष दूरि गंमायौ ।
 कीयौ घाटि बिषांति सनांना । असु कहु ब्राह्मणि दीनौ दाना ॥३७१॥
 हायर के सब देव जुहारा । करी परकरमा बौह बिधि बारा ।
 होली घौस भयौ उत जबही । बौह बिधि षेखत देषे नर ही ॥३७२॥
 चतुर लोय लोग मधु देषों । चतुर राय कल्यान ज पेघे ।
 रह्यौ घौस दस पंच वहां ही । घौयौ दुष पाछिलौ तब हांही ॥३७३॥
 बड साधन कौ दरसन पायौ । सुन्यौ कीरतन मधु मनि भायौ ।
 जेई देषत मधु कौ नैना । तेई कहत नारि यौ बेना ॥३७४॥
 कोई है यौ राज के बारौ । तजि कै आयौ सब व्यौहारौ ।
 रुति बसंत ता पाछै आई । मधु श्री त्रिदाबन कौ जाई ॥३७५॥
 देषी भूमि जहाँ सुषदाई । रतन जरित मानौ ज बनाई ।
 भांति भांति के बिच्छ जहां ही । फल फूलन तैं रहैं लुभाहीं ॥३७६॥
 बोलैं कोकिल चात्रग मोरा । घमडि रह्यौ मोहन मन सोरा ।
 जसुना बहै लये छबि भारी । त्रिदाबनि मानौ माला धारी ॥३७७॥
 क्रसन केलि के ठाव जहांही । निरषत सुष पावै ज वहांही ।
 कुंजन की रचना जित बनई । ब्रह्मादिक जाकौ मनहरई ॥३७८॥
 मधु देषिर हिरदा कै माहीं । फूलै अंगि अंग मैं जहां हीं ।
 राम सरोवर बिचर नहारौ । त्रिदाबनि जब यौ जनिहारौ ॥३७९॥

जहां तहां मधु देषत डोलै । काहु तैं कछु नाहिंन बोलै ।
 भोजन हरि द्वारै करि आवै । कथा कीरतन तही सुनावै ॥३७४॥
 मधु तौ जनम आपनौ जेसैं । षोवन लागौ सुष में अंसैं ।
 पूरिबलौ फल कोऊ जाग्यौ । तातैं मधु ब्रिज दिस कौ भाग्यौ ॥३७५॥
 येक दिना पुरान कहु होई । दसम सिकंद भागवत सोई ।
 सब पुरांन माहीं ततसारा । जानत है जे जाननहारा ॥३७६॥
 जामै क्रस्न चरित ही गुनियो । और कथा नाहिंन सुनियो ।
 मधु बैठो उत जाय तहां ही । सुन्यै चरित रस केलि जहां ही ॥३७७॥
 राधा क्रस्न प्रीति इम होई । बिचरे श्री ब्रिंदावन सोई ।
 औसी प्रीति और ना कोई । तैसी क्रस्न राधिका सोई ॥३७८॥
 मधु सुनि यौ प्रीति ज निरधारा । तब चित करी मालती कंवारा ।
 कथा महारस होय र निबही । उत तैं मधु चाल्यै उठि तबही ॥३७९॥
 गयौ जहां द्रुम बौह बिधि होई । बौहत सघन अति रस में सोई ।
 दुंदत ब्रिच्छ मालती करौ । अतना मैं हूँ गयौ अधेरौ ॥३८०॥
 रैन भयो उतही तब रहियौ । तब भी सकल दुमन मैं चितयौ ।
 अरध निसा जब बीति रजाई । जब कहौ भवर बड़े दरसाई ॥३८१॥
 जान्यो ये अर्भवर घर घेरा । बिन मालती नाहिंन सचेरा ।
 गयौ जहां जित भंवर ज देषी । तहां सही मालती सेषी ॥३८२॥
 डाल नही तै मिलियौ भारी । जेसैं अंक माल नरनारी ।
 रझौ मास येक लौं जित ही । पायौ मधु सुष बौहतैं तित ही ॥३८३॥
 वहां भई कछु हरि की बाणी । मधु तु जाहु देसि परवाणी ।
 मधु कै सुनि चिंता मनि हुवो । जीनन कौ हरि दीनौ हुवो ॥३८४॥
 सुष की ठौर रझा मन लागौ । तातैं मधु उत तै ना भागौ ।
 औसैं मधु निंदा बनि माहीं । रहियौ जीय सकल सुष पाहीं ॥३८५॥

श्री ब्रिंदावन बिचरियौ मास तीन मधु सोय ।

पल पल मैं सुष माधवा जहां अमित सुष होय ॥३८६॥

श्री ब्रिंदावन तैं मधु चल्यौ । निहचै तबै महादुष पइयौ ।

कछु ध्यान हरि कौ चित चाही । राषन लागौ मधु मन माहीं ॥३८७॥

उत तैं चलि गोबरधनि गइयौ । गिरधारी कौ दरसन पइयौ ॥

सख राति उत बस्यौ लुभाई । देषि महा छबि अति सुष पाई ॥३८८॥

• संख्याएँ दुहरा उठी हैं ।

औरन के सुष ही की बाणी । गावत सुनै महारस जाणी ।
तब मधु भी हरि के गुन गावै । होरा होरी जनम सिरावै ॥३८७॥
जित तित करन केलि ब्रिज माहीं । मधुदेवी र जहां अति सुष पाहीं ।
जान्यौ मनमैं अति ही रहियौ । परि परालब्ध बास मधु चित चल्यो ॥३८८॥

परालब्ध ही होय मन चीत्यौ कोटिक करौ ।

मधु चित रह्यौ ज सोय सोय भिदाबनि ना रह्यौ ॥३८९॥

ब्रिज तजिकैं मधु फिरियौ जितही । पुरिब दिसि धरि हुतौ ज तितहीं ।
कोस आठ लग दिन में चल्यौ । पंथी संगि बिना ना हल्यौ ॥३९०॥
मन में चंद्रसेन निप करौ । आनै डर मारन बहु बेरौ ।
चलत चलत दिन चारि ज बीते । कोस तीस अवनि द्वै जीते ॥३९०॥
व्रत मै हुतौ येक द्रुम जितही । पीपलौ नांव बडौतर तितही ।
जहां दीधौ मधु आय र डेरौ । सूतौ रजनी भयें अवरौ ॥३९१॥
गरड पछि जित रहै सदा हीं । पुत्रन सहित सकल बिधि ताही ।
निति षबरि सत जोजन ल्यावै । सो आय र पुबनै सुनावै ॥३९२॥
ता रजनी मधि अँसैं तिज दाख्यौ । गरड पछि पुत्रन प्रति भाख्यौ ।
सुनौ पुत्र येक बचन ज अजही । बडौ भयौ अनरथ येक कितही ॥३९३॥

बोले पुत्र सबै तबै गरड पछि के जाय ।

बड अनरथ कितही भयो कहौ बेगि तुम माय ॥३९४॥

गरड पछि बाक्य :

लीलावती नगर कौ राजा । चंद्रसेनि तसु नांव बिराजा ।
जाके हय दल अत न पारा । जीतै ताहिन सब संसारा ॥३९५॥
पुत्रहीन जाकै को धरनी । कन्या येक सुनी बड बरनी ।
कार मासि कै अंति ज सोई । भरे पर जित निप दोई ॥३९६॥
येक पषि तौ इहै ज कहियौ । दुजै पषि करनौ नृप रहियौ ।
कांकड मधि जुडे रिस भरिकैं । कहैं आप मै देख्यां भरिकैं ॥३९७॥
चंद्र सेनि की भीड ज सबली । करम नृपति की फौजै निबली ।
छूटन लगै जंबूर हवाई । करनि राय देवी तब ध्याई ॥३९८॥
देवी सिंध चढी तब आई । मार्यौ चंद्र सेनि नृप जाई ।
तोरौ मूड चक्र की धारा । और सकल दल भीज सिंधारा ॥३९९॥

जीत्यै अँ बिधि निप करनाई । सिंघ बाहणी भई सहाई ।
 गई पबरी निपचंद कै तबही । हाय हाय नगर में सबहीं ॥४००॥
 राखी सुणि कै उत तै धाई । चंद्रसेनि अतिग पै आई ।
 हुती चारि राणी ही सगली । तिनतैं येक दही धरि मंगली ॥४०१॥
 दसा देषि निप की तब राणी । रोवन लागी कहि कहि वाणी ।
 अहो बडे निप सब मै भलिही । औसी गति क्यो करी ज अबही ॥४०२॥
 तुम बिन असे नगर की पालक । कौन करैगौ सब बिधि कालक ।
 तेरे दिवि महल सुषकारी । रै स्यै सुने तुम बिन भारी ॥४०३॥
 हम अन्याथ तुम बिन का करिहैं । उपाय येक तुम सगिहि मरिहैं ।
 तुम संगि सुष बौहत ही पाई । अब तौ हम दुष सह्यौ न जाई ॥४०४॥
 पूरिब पाय बडो हम कीयौ । येक पुत्र भी बिधि ना दियौ ।
 काहे कौं जनमे छी माई । हम कौं औसे दुष दे जाई ॥४०५॥
 औसी बिधि कहि रोवैं भारी । चंद्रसेन नीप की वै नारी ।
 बौहोत बार लायौ ही रहई । अतग निप कौ दाह न करई ॥४०६॥

देखौ अपत जगत की कहै काहि किण सोय ।

अगत हूं छाडैं नहीं जीवत छाडै कोय ॥४०७॥

ता नर साहु तौ नूप केरौ । जीवत ऊपरि छौ वा चेरौ ।
 सोहु निप छ्यौ तितही आयौ । राग्या स्यै तिस वचन सुनायौ ॥४०८॥
 काहे कौं तुम बौह बिधि रोई । चंद्रसेन निप फिरि ना होई ।
 रोया जीवै जौ कोउ राजा । तौ बिगारै काहे कोई काजा ॥४०९॥
 काल महा है बिक्रम काई । सो तौ सुर नर सर्बाहिन षाई ।
 ल्होबो बडौ न सोचै मन मै । मारै आय सकल ही पल मै ॥४१०॥
 निप का रोवत तुम भी षाई । काल महागति कहूं न पाई ।
 तापर कह्यो एक परसंगा । तीतर बाज बधिकअहि भंगा ॥४११॥
 द्रुम बैठो येक हुतौ अतीतर । बाज क्रोध करि चाल्यौ तापर ।
 नीचै बधिक कुनै सर सांघी । सो तौ बिसहर चांपे षाघी ॥४१२॥
 मरि करि बधिक छूटियौ वाणा । जाय र लग्यौ पंछि दोउ प्राणा ।
 अँ बिधि वै तौ मुवा सबही । काल असौ है जानौ अबही ॥४१३॥
 नर ता साह कह्यो उन लोई । हरि की रजा स सिर पर होई ।
 अब तुम निप कौ दाह करावो । न्यौं तुमहु नीकी गति पावो ॥४१४॥

बोहेत भांति उपदेस नरिता दीनौ निपबधू ।

तब कछु समझि बसेषि रोवन तजि सत ही गह्यो ॥४४५॥

मन्त्री बचन सुने करि जबहीं । राणी ग्यान धर्यो मनि तबही ।

चंदन पीपल काठ मगायौ । तामैं घीरत सुगंध मिलायौ ॥४४६॥

तीन त्रीया अर चौथे राई । असम होय येकत्र रहाई ।

मन्त्री फिरि अपनै घरि आयौ । नगर माहि निप सोक जनायौ ॥४४७॥

हय गज चढि त्रीय भोग की रहतौ अति सुष मानि ।

माधव अैसे निपति की यह गति भई निदानि ॥४४८॥

सग रसातल भुव कौ निस दिन भुगतै राज ।

बिना भजन ही माधवा कोई न आवै काज ॥४४९॥

गरड पंछि पुत्रन प्रति बातैं । कही सकल निप बीती गातैं ।

फिरि के पुत्र कहैं तैहि बारा । माय सुनो येक कहौ बिचारा ॥४५०॥

वसौ निपति अर पुत्र बिहीनौ । ताकौ राज कुंन कौ दीनौ ।

करौ हमै सोई निरधारा । हम हैं तेरै बालक प्यारा ॥४५१॥

गरड पंछि बोली तब उनसैं । सुनौ पुत्री वाभी हुं गुनिस्थौ ।

अब ताई तौ सोक मझारी । बैठे नगर सकल नर नारी ॥४५२॥

किनै और भी राजन लीयौ । नाहिन उन मिलि निप को कीयौ ।

कातिग मास दिवाली होई । करिहैं ना दिन मतौ ज सोई ॥४५३॥

अरथ राति बीतैगी जबहीं । निप के लोग मिलैंगे सबही ।

नगर माहि जित पैस न होई । बैठेगे सब मिल करि सोई ॥४५४॥

जो आवैगौ जित करि कोई । भावै तिसौ मनिष को होई ।

जाहि तीलक देंगे पुरबासी । हैहै निपति महा सुषरासी ॥४५५॥

गरड पंछि तौहि काल सत्ति बचन अैसे कहै ।

मधु नीचै चित लाय सुनी कान दे बात सब ॥४५६॥

मधु के सोच मने मनि भइये । अब उपाय कुन बिधि करियै ।

चंद्रसेनि गति अैसी भई । हम दुष देजैं हि दुष दे दर्ई ॥४५७॥

करता न्याव नाहिनै करै । तौ सब लरहै निबलहि मरै ।

हम त्रिप कौ ना महल जोड्यौ । नाहिन द्रब कनक कछु चोड्यौ ॥४५८॥

निप कौ मारन को ज उपाई । कीयौ नाहिनै हम चित लाई ।
 नाहिन नगर लोग दुष दीयौ । हम सेती निप उक्थौ कीयौ ॥४२॥
 बाकी ही कन्या मति हीनी । आय र पासि गलै हम दीनां ।
 हमरो दोस कौन बिधि कहिये । राजा समझि बिना ही दहिये ॥४३०॥

बिन अपराध कर्खां देहै काहु कोय अयान ।

तास्यै करता रिस भरै निहचै लीज्यै मान ॥४३१॥

मधु कौ भयौ सकर उहींही । मधु कु ऊठि र चल्थौ तहीही ।
 मन में सोच और येक आयै । जीवति मालती जौ मोहि पावै ॥४३२॥
 जो उनकी मन मनसा कोई । करौ सकल विधि पूरन सोई ।
 मधु करता स्यै कहै बनौही । जीवत पायो मालती मोही ॥४३३॥
 चलत चलत मधु गयो ज सोई । लीलावती नगर जित होई ।
 गरड पछि के बोल मनाहीं । आनि र बैठो सांझ तहां ही ॥४३४॥
 ता दिन बड़े दिवाली कौ दिन । हरषे मधु राज आनि मन ।
 रजनी आधी गई बिलाई । मिलिकरि तहां सकल नैराई ॥४३५॥
 वै सब करता स्यै ज कहाही । राज कहै ताहि भेंट कराहीं ।
 अतना मैं मधु उत करि आयौ । लोगनि मिलि करि तिलक बनायौ ॥४३६॥
 मधु की देह महा छबि कारी । जगमगात मानौ उजियारी ।
 देषि र सकल आपनै नैनां । पायो हरषि हरषि जीय चैनां ॥४३७॥
 कहै कोय छै राज कंवारी । आयौ छै स पिता कौ प्यारौ ।
 पठ्यौ इहां समझि हरि सोई । भाग बडौ नगरी कौ होई ॥४३८॥
 उत तैं बांटत बौहत बघाई । दैत निसान नगर में आई ।
 देषत सकल नगर नर नारी । चढ़ि चढ़ि ऊंची अटा अटारी ॥४३९॥
 मालती भी तब देषन चढ़ई । निस दिन जाहि महल मे रहई ।
 बिरह मानहि दुरबल गतिभारी । कही न जात तन जात संभारी ॥४४०॥
 मालती जा दिन मधु तैं बिछरी । ता दिन तैं पल भरि ना बिसरी ।
 मधुही मधु जंपै निस बासुरि । और बात डारै ज छुई करि ॥४४१॥

जा दिन जनमी आय ता दिन तैं मधु बिन कछु ।

कीयौ न कोन उपाय अपनै जीय मैं मालती ॥४४२॥

मालती चढ़ि कै नैन निहारी । देख्यौ निपति भर्यौ छबिकारी ।
 बड़ी मुजा मुष सुंदरताई । बडे बडे लोचन दरसाई ॥४४३॥

और नाहिनै कहीं पिछान्यौ । मालती देखि र मधुही जान्यौ ।
 जाकै मनि जो सदा रहार्ह । सो नीकां देखि र दरसार्ह ॥४४४॥
 और सबै नर मधु कौ भूले । मालती के मन माहौ भूलै ।
 ताते उणि नीकां जा पिछान्यौ । और लोगि काहु ना जान्यौ ॥४४५॥
 मालती मन मैं यौ ज कराही । करता मधुही होज्यै याही ।
 मो अभागनी कौ को नाही । तुम बिन नाथ सत्ति करि गार्हीं ॥४४६॥
 मधु सिंवासनि आनि बैठायौ । चंद्रसेनि के महल सुवायौ ।
 छैत्री ब्राह्मण बाणिक तबही । आय र सूता घरि घरि सबही ॥४४७॥
 मालती हु तब ऊतरि आई । जैतमाल तैं बचन सुनाई ।
 हे सषी महा तोहि परवीनी । तु कछु जानत जो हरि कीनी ॥४४८॥
 जाकै बिरह भरै दुष भारी । सो मधु निपति लोचनां निहारी ।
 जो या बात सत्ति करि करिहै । तो हम काज सकल ही सरिहै ॥४४९॥

चंद्रसेनि के महल मैं पौदायौ है सोइ ।

जाय सषी तुव देखनै जो निहचै मधु होइ ॥४५०॥

जैतमाल तब असैं कहियौ । मधु तौ भाजि कहुं ही गईयौ ।
 अ मौसरि मधु भाग बिहूनौ । मालती कित आवत वह दूनौ ॥४५१॥
 ये ते लोग मिले छे सोई । तामैं थिणि तौ आज्यौ होई ।
 तो को मधु सब दीसत नैना । बौरी होय काहि सुनि बैनां ॥४५२॥

मई छीक तैहिं बार असे बचन करे सषी ।

मालती मनै बिचारि बोली फिर कै जैति स्थै ॥४५३॥

कहै मालती जैति सयानी । कहै छीक सो कहि न जानी ।
 मेरे निहचै मनि मधु आवै । तू मो कू क्यों नै ज झुठावे ॥४५४॥
 मेरो कह्यौ मानि क्यों न जाई । देखि नैना सबै पतार्ह ।
 मालती बचन कहै जब असे । जैति चली देखन कौ जैसे ॥४५५॥
 गई जहां मधु सूतौ होई । आसि पासि चौकि जित सोई ।
 निद्रा बसि ते भये सकल ही । जैति निपति मधु निकट ही निबही ॥४५६॥
 मधु अंचर मुख ऊपरि देई । पौण्यौ मुख में राज ज खेई ।
 नष सिष लौं तब जैति निहारै । मुख देखौ जौ बदन उधारै ॥४५७॥
 बिन मुख दीठां नाहि न जोई । ना जानौ कोई और ही होई ।
 घरी दोय लग अभी रहई । जैति बिचार आप मन करई ॥४५८॥

अतना मैं येक बिसहर कारौ । आयौ जल सिर वै तेहि धारौ ।
 जैति निरषि ताही कौ नैना । बुचख्या मत्र सकल बिधि बैना ॥४५॥
 करतैं पकरि भूव परि डाल्यौ । अँसैं करि मधु कसट निवाख्यौ ।
 जा पीछै हर वैसी करस्यौ । दूरि कीयौ अँचर सुष परिस्यौ ॥४६॥
 मधु मूरति नैना दरसाई । देख्यौ बदन महा सुषदाई ।
 जैति निरषि मन मोद ज होई । जान्यौ मधु निहचै यह सोई ॥४६१॥
 कहन लगी मन मे तेहि बारा । धमि बडौ ऐसौ करतारा ।
 जिन मधु मालती फेरि मिलानी । कैसी बिधि करि यह गति ठानी ॥४६२॥
 मधु ता पाछैं नैन उघारा । जैतमाल निरषी तेहि बारा ।
 मधु कातौ मन माहैं होई । कब मिलिस्यैं मालती जोई ॥४६३॥

निरषि जैति कूं उठियौ मधु पल माहिं सभारि ।

मिलियौ जानि सषी चतुरि अंक माल की प्यार ॥४६४॥

जैतमाल वाक्य :

मधु भागि हमाख्ये आयौ । देख्यौ दई ज षेल बनायौ ।
 पूरिबलौ संजोग ज होई । मेटि न सकै नाहिनै कोई ॥४६५॥
 पहली तौ तुव भाजत डोख्यौ । मालती तो सुने मज बोख्यौ ।
 पाछै सरवर के मफारा । मिले करे कै बौह परकारा ॥४६६॥
 चंद्रसेनि मारन कौ धाई । तब तुम भाजि कद्रां ही जाई ।
 अब ऐसी गति बिधना ठानी । निपति भये तुम इत ही आनी ॥४६७॥

मधु मालती कवारि बिलबिलात ही दिन गयो ।

भूली सकल सभार तेरे देषन कारनै ॥४६८॥

मालती कौ निप सोय व्याहन औरैं कहि रह्यौ ।

मूड पटक सिर फोरि तौज मधु तू ना तज्यै ॥४६९॥

मालती कौ सौ नेह कलि मैं कोई ना करै ।

जनमत मधु स्यौ हेत और न कोई चित धर्यौ ॥४७०॥

-मधु वाक्य :

तैं तौ जैति सकल ही दाषी । परि मेरी बात नाहिनै भाषी ।

मालती कौ तैं हेत निबाख्यौ । मेरो हेत नाहिनै चाख्यौ ॥४७१॥

मालती तौ सरवर मैं जबही । आई फौज राय की तबही ।

मैं कुं जाहु कहे बौह बैनां । मैं तब उतरी क्यौ ज रैंना ॥४७२॥

आषरि कहि कहि संगति भजायौ । औसौ नेह कराही गायौ ।
 हुं तौ भाजि गायौ ब्रिज मांही । जहां परम सुष हरि रस पाहीं ॥४६३॥
 उतहु मालती ब्रिज दुखेख्यौ । रह्यौ बहुत दिन ता ढिग नेरौ ।
 पाछै चलि उत कौ हुं आयौ । सो मेरौ रेत नाहिने गायौ ॥४७४॥
 यौ करि और घरी द्वै बीती । जैतमाल मधु तैं ना जीती ।
 चारि घरी मैत्रि पति कुंवारी । दुष पायौ अति मौन मझारी ॥४७५॥

आग्या मधु की लेय जैत माल उत तैं चली ।

आई मालती जेत कही षबरि सब तास कूं ॥४७६॥

सुनि कै मधु की बात कवारी । करन लगी सोलहो सिंगारी ।
 बसन अमोलिक अंग पराहीं । राजित मानौ ससि की छाहीं ॥४७७॥
 नष सिष लौं आभूषण पहरे । होते रतन कनक के जहरें ।
 सोहन लागी अति छबि जाकी । कहि न सकुं उपमा हूं ताकी ॥४७८॥
 चदन और सुवास लगायो । महल माहिं सब ठैध भझायो ।
 मधु लग तबै वास वह जाई । जान्यौ मधु मालती आई ॥४७९॥

यंद्र बधू संम मालती सजि कै चली सिंगार ।

अति आतुर तैं पग धरत मिलिन हेत भरतार ॥४८०॥

मालती जाय कठ लपटानी । जनम सुफल आपनौ मानी ।
 हो पीव तुम बिन मो दुष भारी । भयौ सोय जो नाहिंन पाई ॥४८१॥
 अब जौ ते मोहि दरसन दीयौ । तौ मै जान्यौ अपनौ जीयौ ।
 मेरे प्रान बसे तुव माहीं । जैसे अगनि काठ ही पाहीं ॥४८२॥
 को ईक दिन जौ औ जु रहती । तौ हुं तम बिन निहचै मरती ।
 करता कीयौ आपनौ लेख्यौ । प्रीति हमारी कांनौ देख्यौ ॥४८३॥
 सुनि मधु वचन मालती केरा । चुबन लागौ बदन रसेरा ।
 प्रफुलित कुसम सेज पर बेंठे । रस बस करन लगे मन तैठे ॥४८४॥
 मिलि या तरसि तरसि तन दोई । बौहत दिन तैं सुष अलि होई ।
 मन के कीये मनोरथ सबही । हूं न लग्यै परभात ज तबही ॥

इन लग्ये परभात जैतमाल तब यौ कह्यौ ।

भवनि चलौ तजि प्यार रहन नाहिं अब मालती ॥४८५॥

मालती मधु तैं मिलि सुष पाई । तदिही और महल मैं जाई ।

मालती कै जदि आनंद आयौ । सो काहू मैं जात न गायौ ॥४८६॥

जा पीछे उड़ौत रबि कीनौ । मधु तो निसकाहू नही चीन्हौ ।
 ता नर साह भोग बहु ले करि । आयर बैठौ तबही निप घरि ॥४८८॥
 कोउ हय गज भेंटन आयो । किनहूँ रतन अमोल बिसायो ।
 केऊ मौहर रुपये अति धन । केऊ त्याग्ये बसन मिही तन ॥४८९॥
 केऊ चीता हीरन ज लाये । केऊ बाल पछी बौह धाये ।
 जो चाको जैसौ उनमाना । सो सो भेट आइये राना ॥४९०॥
 बेठे लोग सबे चित लाई । जानै कब मुष निप दरसाई ।
 घरी चारि दिन चढ़ियौ अँसौ । ता पाछे मधु आयौ जैसै ॥४९१॥
 कंचन मई पाग सिर दीनौ । मिही चोलना सौधैं भीनौ ।
 बाधे कड्या कटार ज सोई । कर मैहि और तेग पुनि होई ॥४९२॥
 मानो हुतौ निपति ही कोई । ताहू मै यह सुंदर होई ।
 उठी निरधि सभा सब जबही । जाय नये भेट देब तबही ॥४९३॥

निप देखि र सब लोग चित में सब चितवत रहे ।

मधु सरिषौ मुष येह पाछे सति जानै दई ॥४९५॥

ता नर साह भेंट ले जबही । ले करि गयौ निपति ढिग तबही ।
 मधु तब हसि करि लागौ पाई । देखै सभा सकल ही जाई ॥४९४॥
 ता नर निहचै पुत्र निहाय्यौ । दई खेल मन माहि बिचाय्यौ ।
 तिन पहलां नाहिनै पिञ्जान्यौ । ता रन पाछे सगलां जानै ॥४९६॥
 बोल्या सकल लोग यह बानी । करता करै सोय परवानी ।
 बड़े सिंघासन ऊपरि जबही । निपति द्वै मधु बैठौ तबही ॥४९७॥
 तारनि पिता बात सब बूझी । कह्यौ तबै मधु ही जैसी सूझी ।
 नगर माहि सब बैही सुनियौ । मधु तौ राय सही प्रति मनियौ ॥४९८॥
 सुनियो कनक मालती रानी । बिधना मधुही त्रिपति ज ठानी ।
 हरनी अपना हीय मकारौ । भूली चद्रसेनि दुष सारौ ॥४९९॥

कहन लगी हठ मालती करता दीयौ मिलाय ।

अब निहचै मधु परणिसी लियौ भाग नहीं जाय ॥५००॥

कनक माल के मन में आई । मधु मालती बेगि परणार्थ ।
 बोहत भरे दुष मेरो बाला । सुंदर रूपवन सुक माला ॥५०१॥
 दूजौ दिन भी भयौ ज आई । सकल सभा बैठी तब जाई ।
 कनक माल अँसै करि पठ्यौ । मधु मालती व्याह की अठ्यौ ॥५०२॥

ढील न करौ कह्यौ मो मानौ । तुम अपनी जीय मै भी जानौ ।
 बात सबनि माने करि लीनी । लगन लिषाय तबैही दीन्हौ ॥५०३॥
 अगहन मास तिथि दोईज होई । हूँदि काज मनवाँछित सोई ।
 जो कछु सौज ब्याह का होई । सबही आनि मिलाई सोई ॥५०४॥
 देस देस के त्रिपति बुलायो । मधु मालती ब्याह के ठायो ।
 बाजे बजन लगे दहौ ओरा । रख्यो नगर मै सावक सोरा ॥५०५॥
 मंडप बहुत रंग कौ कीनौ । दान बहुत मांग्यै जेहि दीनौ ।
 अन प्रवाह सकल नै होई । भूषौ प्यासौ रख्यो न कोई ॥५०६॥
 धरी साधि कै लगन लगाये । बर कन्या येकत्र मिलाये ।
 पानि गहन वेद बिधि कीनौ । बौहत भंडार बिपन कुं दीनौ ॥५०७॥
 चौरी चौह दिस कलस चढाये । फिरि तहां दूखौ दुलहनि आये ।
 भौरी फेरी सातक दीनी । कुला क्रम बिधि गति सब कीनी ॥५०८॥
 सिंघासन आसन सुष लाये । मधु मालती तहां बैठाये ।
 फनक क्रांति त्री दहौ दिसि छाजै । मधु नायक ता बिचि बिराजै ॥५०९॥

येक सरवर कै माहि ब्याह भयौ मधु मालती ।

दूजै औहि बिधि साजि परण्यौ नूप मधु मालती ॥५१०॥

फनक माल रानी मधु देषै । त्यौ त्यौ जनम सुफल करि लेषै ।
 मन हरषित है लेय बलाई । जुगि जुगि जीवो कंवरि जवाई ॥५११॥
 पुरन भयौ ब्याह सुषकारी । बरनौ कहा बहुत बिसतारी ।
 मधु मालती अनंत सुष करई । निस दिन महल मफि असुरई ॥५१२॥
 भांति भांति की केलि कराही । नाहिन उपनै दुष जहां ही ।
 हसै परसपर बदन निहारै । दोठ मिलि करि राग उचारै ॥५१३॥
 कबहुं वेणि तदुर बजावै । कबहुं निरति आपही करावै ।
 जा देषन कूं गंधप आवै । मधु महल माफि सुष पावै ॥५१४॥
 ये तौ कही महल की गाता । अब सुनि निपतिपना की बाता ।
 ऊंचौ बडौ सिंघासन होई । तापरि मधु बैठे निति सोई ॥५१५॥
 जहां आय सिर नावै भारी । बडे बडे छत्री कुल सारी ।
 मधु तिन माहैं ऐसैं छाजै । तेसे बुडगन चंद विराजै ॥५१६॥
 लेय महौलौ सबहिन करौ । हथ गज बाज पसू बौहतेरौ ।
 माते मद के गज जो होई । ताहि लरावै निपति ज सोई ॥५१७॥

अति ही तीन्हा चतुरी किरावै । छंद बंद केहिरन लरावै ।
 दीर असीस भाट बौहतेरो । नाचै नट अति घुमर घेरो ॥५१८॥
 असौ बिबधि भांति कौ राजा । मधु भोगवै सकल बिधि काजा ।
 सबहिन पुर बास्या सुष पायौ । मधु तौ क्रोध नाहिनै बिजायौ ॥५१९॥
 चंद्र सेनिकौ राजन हो तौ । तिनतैं भयौ दरगुन जेतौ ।
 बीते चारि मास यौ जबही । येक बात मधु मनि उपजही ॥५२०॥
 बैठी हुती सभा सह कोई । मंत्री और पिरोहित सोई ।
 येक दिना मधु बोख्यौ अैसे । चंद्रसेनि मार्यो यौ कैसे ॥५२१॥
 कहौ मोहि सकलौ बिरदंता । ज्यौ हुं उनकू भीज दहंता ।
 सुनि कै बचन निपति औ बिधि ही । मंत्रीनि कही बात बा सबही ॥५२२॥
 जेसैं चंद्रसेनि प्यौ हुवो । करनौ निपजि त्यौ करि दुवो ।
 मधु तब सुनि करि कीयौ बिचारौ । चंद्रसेनि के अरिकौं मारौ ॥५२३॥
 जोरौ सकल आप दल होई । लडे न जातै तास्यौ कोई ।
 कितौक करन हमारै आगै । मारौ निहचै कै वो भागै ॥५२४॥
 ढील न करौ सबार चढ़ाई । मेरौ बचन मानि त्यौ भाई ।
 अैसे कहै बचन निप जबही । सुनि करि भये तयार ज सबही ॥५२५॥
 करन लगे जुध कौ साजा । ह्वनन लागे बौह बिधि बाजा ।
 हसती दोय सहस सिगारे । मातैं बौहत ढील बलि भारे ॥५२६॥
 तुरी आठ लष पायक बाहैते । काहू पै ना जात न गनते ।
 बौहत आरियां सजिल यौ सगा । चढ्यौ निपति करि कै यह रगा ॥५२७॥
 देय निसान चलै जेहि वोरा । तहां करन कौ बहुतौ बसेरा ।
 जा दिन मालती अति दुष पायौ । मधु ग्रह माहि नाहि नै आयौ ॥५२८॥

प्रीति वहै कलि सोय जो बिछुरत ही तन तजै ।

देजौ हमीन ज सोय जल बिछुरन कैसी करै ॥५२९॥

जैसी प्रीति मीन जल होई । तैसी ही मधुमालती सोई ।
 दीठां बिन मधु मूरति नैना । मालती जीय मैं होय अचैना ॥५३०॥
 मधु की फौज गई ततकारा । करन गोरि पैदल नहीं पारा ।
 सुनि तब करन संक बौह मानी । जीतौ नहीं मनै मै जानी ॥५३१॥
 करन निपति भी मन कौ सूरौ । भाजै नहीं दलनि मधि पूरौ ।
 सनमुख आयौ दल बल सजिही । ह्वन लगौ जुध अति तबही ॥५३२॥

मधु जीत्यौ सब मारिकै करन निपति दख जोय ।

लथौ बरै निप चंद कौ मालती मधु पति सोय ॥२३३॥

जा दिन मधु करनौ निप माख्यौ । ता दिन देवी सेव बिसाख्यौ ।

तातै करन हारि यौ सोई । दूजै मधु कौ अति बल होई ॥२३४॥

देय नगारौ जिति जब लथौ । मधु को लोग येक ना मरियौ ।

आयौ अपनै नगर कनारै । राम सरोवर जहां बिहारै ॥२३५॥

येक दिन मधु उतही रहियौ । बालपनै निस दिन बित बस्यौ ।

जा पीछै आयौ ग्रह मांही । दीनौ सीष लोग धरि जाहीं ॥२३६॥

बंटी नगर मै बौहत बवाई । मधु तौ कनक माल जित जाई ।

कही बात सबही जुध केरी । भई जीति असी बिधि मेरी ॥२३७॥

सुनि के कनक माल तब रानी । हरषी जीय बहुत सुष मानी ।

मधु की लई बलाय बहुत बर । जीवो बहुत बरस तुम अँ धर ॥२३८॥

उतनै दिन कौ बिरह सही कनि । मालती ऊभी निरषै मधु तनि ।

निरषि निरषि लोचनि सुष पावै । मधु बिन जाकूँ क्यौँ न सुहावै ॥२३९॥

जा पाछै मधु आयौ जितही । हुतौ पहल मालती तितही ।

अंक भुजा भरि मिलीये दोई । बोयौ बिरह जोय तनि होई ॥२४०॥

बौह बिछि सुरत केलि जहां कीनी । अँसै जनम सफल करि लीनी ।

बहुत दिना बीते सुष अँसै । भुगतै इंद्र सरग रस जैसै ॥२४१॥

येक समै पवड़े दोड सैना । मालती भयौ सुपिनौ मधु गौना ।

मालती पिथ बिछ्यौ मनि धारो । हाय हाय करि टेरि पुकारो ॥२४२॥

हम तुम मधु अँसौ ना नेहा । जो पल भरि अंतर सहै देहा ।

जब वे कहे मालती बैना । सुनि मधु कानि जीय भयौ चैना ॥२४३॥

मधु जपै मालती पीयारी । कह कछा तुम नीद मंझारी ।

हूँ तुम तजि कितहुँ ना जैहैं । बिछरन केरौ नांव न लैहैं ॥२४४॥

मेरे प्रान बसै तुव ओरा । तुम संग बिना कौन है ठौरा ।

सुनि पीय बचन मालती सिरानी । नैन उघारि बहुत सुष मानी ॥२४५॥

बौद्धस्यौ हीय हीय तैं लायौ । अधर महारस भी पिक लायौ ।
मधुर मधुर बानी उचरई । अरस परस मन दहुं वन हरई ॥१४७॥

मगन रहै दिन राति सुष मै मधु अर मालती ।
बीते बरस अपार मोकु कहि आवत नहीं ॥१४८॥

मधु कौ भये भोग कलि दोई । येक नृपति अर रसकनि सोई ।
असौ भुगता और न कोई । जिन छिन पल सुष बिन ना षोई ॥१४९॥
मधु कै भये पुत्र भल दोई । प्राननाथ प्रानपति सोई ।
भयौ महा सुंदर तन जाकौ । कह्यौ न जात रूप गुन ताकौ ॥१५०॥
भयें बडौ मधु सुनौ जकाई । ध्रम अनेक किये चित लाई ।
सरवर कूप तलाय षनार्ये । ब्राह्मन भोजन भोग कराये ॥१५१॥
बरस सौत्र लग कीयौ भोगा । पाछै भयौ अवधि कौ जोगा ।
दिवि बिवान स्रुग तैं आयौ । मालती मधु तापरि बैठायौ ॥१५२॥
और अपछरा जा सुष आगै । गावत त्रिति करत अति भागै ।
गयौ स्रुग कै बीचि जहां ही । करतौ पहलां भोग तहां ही ॥१५३॥
यौ मधुमालती कथा बषानी । जानन हारा होय या जानी ।
रस की असौ बात न कोई । मै देषी दुडिर बौह सोई ॥१५४॥
यानै रसिक होय सोई गावै । मुरिष बनर कै हाथि न आवै ।
जो कबहौं मुरिष भी पढ़ई । तौ कछु समझ हीया मै परई ॥१५५॥
मधु मालती बात यह गाई । दोय जनां मिलि सोय बणाई ।
येक साध ब्राह्मन सोई । दूजौ कायथ कुल मै होई ॥१५६॥
येक नाव माधव बड़ होई । मनौहर पुरि जानत सब कोई ।
कामथ नाम चत्रभुज जाकौ । मास देसि भयौ ग्रह ताकौ ॥१५७॥
पहली कायथ ही ज बषानी । पाछे माधव उचरी बानी ।
कछुक यामैं चरित मुरारी । श्री ब्रिंदावन कौ सुषकारी ॥१५८॥

माधव तारैं गाईयौ यौ रस पूरन सोय ।
कौन काम रस स्यौं हुलौ जानत है सब कोय ॥१५९॥

काइथ गाई जानि कै रसकनि रस की बात ।

नाम चग्रभुज ही भयौ मारु माहि बिष्यात ॥१६०॥

इति श्री मधुमालती कथा संपुरण समापतं सबत १७०७ चैत सुदि ११
लिखत जै राम बाचै सुनै जैने हमारौ श्री राम राम बारंबारबं... (खंडित है) ❀

—००—

❀इसी पोथी में इसके पूर्व 'माधवानल कामकंदला रस विलास' की एक प्रति है। इस रचना के भी लेखक माधव हैं। अंतिम दोहा इसका है :

सबत सौरसै बरिस जेसलमेर मभारि ।

फागन मासि सुहावनै करी बात बिसतारि ॥४२६॥

इति श्री माधवानल कामकंदला रस विलास संपूरण। संवत् १७०४ का
असाढ सुदी १५ लिखत जै राम बाचै सुनै जैहिं हमारौ श्री हरि सुभिरन
बारंबार घनी प्रीति सेती बंचौ छैजी मूलौ चुकौ छिमा कीजौ जी ॥

'माधवानल कामकंदला रस-विलास' की यह प्रति २१८वें छद् के अंतिम
चरण के पूर्व खंडित है। यह ग्रंथ भी राजस्थानी में है और चौपई, दोहा,
सोरठा में है यथा 'मधुमालती रस विलास' है।

इस पोथी में माधव का एक दोहा तथा सवैया संग्रह भी है, किंतु वह
अपूर्ण है।

शुद्धिपट

(स्वीकृत पाठ)

प्रथम संख्या छंद को तथा दूसरी उसके चरण को है ।

स्थल	अशुद्ध	शुद्ध	स्थल	अशुद्ध	शुद्ध
३०१	बसति	बसहि	३११.२	गुलाल	जु लाल
४०१, ४	ब्रप	त्रप	३२०.४	भला	भली
३८.२	दूर	दूरे	३२५.	निर्मल	निमष
३६.१	बोले	बोलै	३४१.४	झंग	अंग
४५.२	दोउ	दोनु	३४३.१	कहा	कही
४८.३	बोलती	बोल	३४३.२	आकि	आनि
६४.४	पुनि	फुनि	३५७.४	मोरि	मोहि
६८.४	हो	वो	३६४.१	धरे	धरे
६६.४	(हरवे)	हरवे	३७०.३	गमाव	गमावै
६०.२	परयो	पारथो	३७०.४	पाव	पावै
६७.४	मिलिबे	मिलबे	३७०.१	कुं	क्युं
१३५.१	सीधन	सीध न	३८१.४	तिन	ति
१५२.१	इडं	इउं	३८२.४	रुप	त्रप
१५६.४	छंडे	छंडै	३६२.३	कीगै	कीजे
१६२.२	कुमार	कुमर	३६४.३	त्रिष्णा	त्रिस्ना
१७६.३	‘प्रिथी’ ^२ माझ	पृथी माझ ^२	३६५.४	मंगवौ	मागवौ
१६५.४	‘कून	कून	३६६.१	ताम	ताप
२४७.२	सहई	सकई	४०४.१	हुंह	भुंह
२५२.३	आप धरि	आप	४०५.१	कम	कमल
२६२.४	॥४	॥	४०७.४	सो	सी
२६५.२	करि	कहि	४१२.१	गौभा	गोभा
२६२.३	धिरित	धिरित	४१६.२	काम ..हैं	‘काम’...हैं
२६२.४	कहै	कहै तो	४१७.१	फंवल	कंवल
३०६.१	कुसमल	कुसम तैं	४१८.२	इह	एह

५४५.२	तु पै	तुमै	५६४.४	भुंढ	भुंढ
५५३.२	मलका	भलका	५६७.४	छाटा	काहा
५५३.३	राय	राम	६२१.१	'बचन' १	'बचन
५७२.१	जो वन	जोवन	६२१.२	स्याए	स्याम
५७५.२	सर भी	सरभर	६२२.२	नरकन	नरक न
५८३.३	पवाह	प्रवाह	६३०.२	मेटि	मेट
५८६.२	मागी	भगती	६३६.२	वे	वेह ज
५९०.३	भुवन	श्रवन	६३६.२	अ वेह ^२	'अर' ^२ वेह
५९२.१	जै	जे	६४०.२	घरनाई	करनाई
५९३.३	लीदी	लीडी	६४६.४	लष	लष

पादटिप्पणी

• पहली संख्या छंद की है और दूसरी उसकी पादटिप्पणी की है ।

३.२	वि०	द्वि०	७४.६	होत	कोटि
३.४	नाइ	मानूँ	७८.२	तृ० १, २	तृ० १
१०.२	धाइ	थाइ	८०.१	केति कह	केतिक
१३.२	क्रात	काम	८४.३	अवसन	असवन
१७.४	देवल परमरे	केवल महमहे	१००.१	एह	एहि
१९.१	इहे	ईहे	१७२.३	प्र ३.१	३. प्र०
२१.२	सुगहे	सुणहे	२४०.१	पटी	परी
२४.१	पर	घर	२४७.४	नाम	जाम
२७.३	में जोड़ें	४ द्वि. १ चढयो	२५७.४	मृग हीयो	हीयो
३०.२	समान	सभाव	२६८.४	बधे	बधे
३१.४	तित	हित	२६२.२	उदघ	उदक
४३.१	वाधी	वाधी	३३५.५	विद्या	विध्या
४७.१	उद्यम	उद्यम	३४६.२	डिढ	द्रिढ
५२.३	नीती	नीती पेषै	३४८.१	महमह	महमहे
५४.४	सहसु	सहस्र	३५१.१	होषै	लेषै
५४.६	मारै है	मारै	३५१.४	मूंडी	मूंरी
६३.२	के रहुं	ते रहुं	३५३.३	१	प्र० १
७०.३	दिन	कित	३५८.१	निकटा	निकटी

(४)

३६७*२	सुद्दी	सुद्दी	४१०*४	दीसि	दीस
३७२*१	मिलि	मिल	४१७*३	प्र० १	च० १
३८२*२	परै	चरै	४२७*३	प्र० ३	प्र० ३
४०७*१	प्रवाकै	प्रवारै	४२६*३	मूके	मूकै
४०७*३	विजकी	विजरी	४२६*५	व को	वर को